Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ-प्रवचन

लेखक

याज्ञिकसम्राट् पं० श्रीवेणीरामशर्मा गौड

वेदाचार्य, काव्यतीर्थ

प्राध्यापक—गोयनका संस्कृत कालेज, वाराणसी।

सन् १९६६

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रकाशक
वैदिक पुस्तकालय,
७११४, सकरकन्द गली
वाराणसी ।

प्रथम संस्करण १०००

सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक
श्रीगोविन्द मुद्रणालय,
बुलानांला, वाराणसी ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दो शब्द

मेरा परिवार प्राचीन कालसे 'याज्ञिक' होता चला आ रहा है। मेरे पितामह स्व० महामहोपाध्याय पं० श्रीप्रभुदत्तजी शास्त्री (प्रिन्सिपल-धर्मविज्ञान विभाग, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी) और मेरे पिता स्व० महामहोपाध्याय पं० श्रीविद्याधरजी शास्त्री (प्रिन्सिपल-धर्मविज्ञान विभाग, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी) समस्त भारतवर्षमें सर्वश्रेष्ठ वेदज्ञ माने जाते थे। दोनों महानुभाओं-को भारतके समस्त प्रान्तोंके नगरोंमें, उपनगरोंमें और ग्रामोंमें समय-समय पर निमन्त्रित होकर यज्ञ करानेके लिये 'आचार्य' होकर जाना पड़ता था। वेद भगवान्‌की कृपासे मैं भी उसी पथका पथिक हूँ। मुझे भी भारतके प्रायः सभी सुप्रसिद्ध स्थानोंमें निमन्त्रित होकर यज्ञ करानेके लिये 'आचार्य' होकर कई बार जानेका सौभाग्य

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्राप्त हो चुका है। यज्ञावसर पर यज्ञप्रेमी जनता 'यज्ञाचार्य' के नाते यज्ञ-सम्बन्धमें मेरा प्रवचन सुननेके लिये विशेष उत्सुक रहती है। अतः मुझे विवश होकर यज्ञावसर पर प्रायः सर्वत्र यज्ञ-सम्बन्धमें प्रवचन करना पड़ता है। जिन स्थानोंमें मुझे यज्ञ-विषयमें प्रवचन करना पड़ा है, उनमें से कुछ स्थानोंके कतिपय यज्ञप्रेमी महानुभाओंके अनेक बार अनेक पत्र मेरे पास आते रहते हैं कि—'आप अपने यज्ञसम्बन्धी प्रवचनोंको पुस्तकरूपमें प्रकाशित कर दें, तो यज्ञ-प्रेमियोंका विशेष लाभ होगा।'

यज्ञप्रेमियोंके बारम्बार पुस्तकके प्रकाशनार्थ विशेष आग्रहको देखकर मैं अपने कतिपय यज्ञ-सम्बन्धी प्रवचनोंका एक संग्रह **'यज्ञ-प्रवचन'** नामसे प्रकाशित कर रहा हूँ।

यज्ञ-प्रवचनमें जो लेख दिये गये हैं, उनमें कुछ लेख 'कल्याण' मासिक पत्रके विशेषाङ्कों (साधनाङ्क, मानवताङ्क) में और कुछ साधारण अङ्कोंमें प्रकाशित हो चुके हैं। कुछ लेख गीताधर्म, गीता-सन्देश एवं सिद्धान्त मासिक पत्रोंमें भी प्रकाशित हो चुके हैं।

इस पुस्तकमें यज्ञ-सम्बन्धी लेखों (प्रवचनों) के अतिरिक्त यज्ञ-सम्बन्धी कुछ प्रश्नोत्तर और वेद, ब्राह्मण, उपनिषद् एवं पुराणके यज्ञसम्बन्धी कुछ महत्त्वपूर्ण आवश्यक विषय दिये गये हैं। अन्तमें शुक्ल यजुर्वेदकी कतिपय यज्ञसम्बन्धी सूक्तियोंको दिया गया है। आशा है, इस पुस्तकसे सभीका, विशेषतः यज्ञप्रेमियोंका अधिक लाभ होगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३६४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

धन्यवाद

इस पुस्तकके प्रकाशनार्थ पाँच सौ रुपया अंबालानिवासी स्वर्गीय रायसाहब श्रीमान् आनन्दस्वरूपजी माथुरकी धर्मपत्नी श्रीमती चम्पादेवी महोदयाने प्रदान किया है।

श्रीमती चम्पादेवी महोदया बाल्यावस्थासे ही परम धार्मिक, गम्भीर, विवेकशील, संयमी और मितभाषी हैं। आपका जीवन परम धार्मिक और आदर्शमय है। आपका ईश्वर और सनातनधर्ममें पूर्ण विश्वास है। आप राधाकृष्णकी अनन्योपासिका हैं। आप प्रतिदिन नियमपूर्वक श्रद्धा-भक्तिसे भगवत्पूजन और भगवद्भजनमें अपना अधिक समय लगाकर ही आत्मतुष्टि प्राप्त करती हैं। आपकी साधु, महात्मा और ब्राह्मणोंमें विशेष आस्था रहती है। आप **'विद्वांसो हि देवाः'** (शतपथब्रा० ३।७।३।१०) के अनुसार विद्वान् ब्राह्मणोंको साक्षात् 'देवता' मानकर उनका आदर-सत्कार करती रहती हैं।

आप जिस प्रकार धार्मिक हैं, उसी प्रकार दानशील भी हैं। आपने समय-समय पर अनेकों धार्मिक संस्थाओंमें अनेक बार और अनेक रूपसे प्रचुर मात्रामें द्रव्य प्रदान कर अपनी उदारताका परिचय दिया है। विश्वकल्याणार्थ होनेवाले सार्वजनिक यज्ञोंमें और मन्दिरोंमें मूर्तियोंकी स्थापनाके लिये अनेकों बार हजारों रुपये प्रदान किये हैं। आपने समय-समय पर जो कुछ दान दिया है, वह केवल अपना धर्म और कर्तव्य समझकर ही दिया है, न कि आत्म-ख्यातिके लिए।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आप आत्म-प्रशंसासे बहुत दूर रहती हैं। आपमें जो दैवी-गुण हैं, वे सभीमें नहीं मिलते। आपकी दैवी-गुणोंकी प्रशंसा समस्त अंबाला-निवासी समय-समय पर किया करते हैं।

मैं इस पुस्तकके प्रकाशनार्थ परम साध्वी, उदारस्वभावा और परोपकारिणी श्रीमती चम्पादेवी महोदयाको हार्दिक धन्यबाद और शुभाशीर्वाद प्रदान करता हुआ सर्वान्तिर्यामी प्रभुसे प्रार्थना करता हूँ कि वे आपकी श्रद्धा-भक्तिको सर्वदा भगवान्में तथा भगवत्स्वरूप ब्राह्मणोंमें बनाये रखें, जिससे आपका इहलोक और परलोक कल्याण-कारी हो।

वाराणसी,
१ जनवरी, सन १९६६ } **वेणीराम गौड**

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

समर्पण

भारतकी राजधानी इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) में धर्मराज युधिष्ठिरके द्वारा कोटिहोमात्मक शतमुख महायज्ञ करनेके बाद, कोटिहोमात्मक शतमुख महायज्ञ करानेका सर्वप्रथम श्रेय अभिनवशङ्कराचार्य पूज्य स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजको है, जिन्होंने दिल्ली, कानपुर और काशी आदि प्रमुख नगरोंमें कोटिहोमात्मक शतमुख महायज्ञ कराकर भारतवर्षके कोने-कोनेमें अगणित यज्ञ-महायज्ञोंका क्रियात्मकरूपसे प्रचार किया। अतः उन परम श्रद्धेय वर्तमान यज्ञयुगके प्रवर्त्तक, वैदिकधर्मके संरक्षक, सनातनधर्मके सर्वोच्च नेता, परमहंस परिव्राजकाचार्य अनन्तश्रीविभूषित श्रीस्वामीजी महाराजकी सेवामें सादर समर्पित

इदं यज्ञ-प्रवचनं श्रीमत्करसरोरुहे।
अर्प्यते परमप्रीत्या वेणीरामेण शर्मणा॥

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विषय	पृष्ठ
१२ यज्ञ और प्रजापति	८८–९२
१३ यज्ञ और गौ	९२–९६
१४ वेदोंमें यज्ञका महत्त्व	९७–१०८
१५ यज्ञसे कामनासिद्धि	१०९
१६ निष्काम यज्ञ	११०–११२
१७ आजका यज्ञ	११३–११४
१८ यज्ञसे सभीको लाभ होता है	११५–११८
१९ यज्ञमें सभीको सहयोग देना चाहिये	११८–११९
२० यज्ञादिमें विघ्न करनेसे हानि	११९–१२१
२१ यज्ञमें श्रद्धाकी आवश्यकता	१२१–१२३
२२ श्रौतयज्ञ—एक संक्षिप्त परिचय	१२४–१३१
२३ यज्ञाद् भवति पर्जन्यः	१३१–१३४
२४ यज्ञ-सम्बन्धमें प्रश्नोत्तर	१३५–१३९
२५ वेदोंमें यज्ञसम्बन्धी कुछ आवश्यक बातें	१३९–१४३
२६ ब्राह्मण-ग्रन्थोंमें यज्ञसम्बन्धी आवश्यक बातें	१४४–१४५
२७ उपनिषदोंमें यज्ञसम्बन्धी आवश्यक बातें	१४५–१४७
२८ पुराणोंमें यज्ञसम्बन्धी आवश्यक बातें	१४७–१५०
२९ यज्ञसम्बन्धी कुछ महत्त्वपूर्ण बातें	१५०–१५६
३० यज्ञसे लाभ	१५६–१५९
३१ कामनापरक यज्ञोंका फल	१६०–१६२
३२ शुक्ल यजुर्वेदमें यज्ञसम्बन्धी सूक्तियाँ	१६२–१६५

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

❀ श्रीहरिः ❀

यज्ञ-प्रवचन

यो यज्ञे यज्ञपरमैरिज्यते यज्ञसंज्ञितः ।
तं यज्ञपुरुषं विष्णुं नमामि प्रभुमीश्वरम् ॥

यज्ञका महत्त्व

यज्ञ-शब्दार्थ

'यज्' धातुसे 'यज-याच-यत-विच्छ-प्रच्छ-रक्षो नङ्' (३।३।९०) इस पाणिनीय सूत्रसे 'नङ्' प्रत्यय करनेपर 'यज्ञ' शब्द बनता है। 'नङन्तः' इस पाणिनीय लिङ्गानुशासन से 'यज्ञ' शब्द पुल्लिङ्ग भी होता है। 'नङ्' प्रत्यय भाव अर्थ में होता है, किन्तु 'कृत्यल्युटो बहुलम्' (३।३।११३) इस सूत्र पर 'बहुलग्रहणं कृन्मात्रस्यार्थ-व्यभिचारार्थम्' इस सिद्धान्त से कृदन्त के सभी प्रत्ययों का अर्थ आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है। यही भाष्य-कारादि सम्मत मार्ग है।

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३२४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

धातु-पाठ में 'यज्' धातु का पाठ किया गया है। 'धातवः अनेकार्थाः' इस वैयाकरणसिद्धान्त के अनुसार कतिपय आचार्यों ने 'यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु' इस पाणिनीय सूत्रके अनुसार 'यज्' धातुका देवपूजा, सङ्गतिकरण और दान इन तीन अर्थोंमें प्रयोग किया है। अर्थात् यज्ञमें देवपूजा होती है, देवतुल्य ऋषि-महर्षियों का सङ्गतिकरण होता है और दान भी होता है।

देवपूजा

(१) यजनं इन्द्रादि-देवानां पूजनं सत्कारभावनं यज्ञः।
(२) इज्यन्ते (पूज्यन्ते) देवा अनेनेति यज्ञः।
(३) इज्यन्ते देवा अस्मिन्निति यज्ञः।
(४) इज्यते देवेभ्यः अस्मिन्निति यज्ञः।
(५) इज्यते असौ इति यज्ञः (विष्णुः)।
(६) इज्यन्ते सम्पूजिताः तृप्तिमासाद्यन्ते देवा अत्रेति यज्ञः।

'इन्द्रादि देवों का पूजन तथा सत्कार यज्ञ कहा जाता है। जिससे देवताओं की पूजा की जाय उसे यज्ञ कहते हैं। जिसमें देवताओं की पूजा हो उसे यज्ञ कहते हैं। जिस कर्म-विशेष में देवताओं के लिये अनुष्ठान किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं। पूजा किये जाने वाले अर्थात् भगवान् विष्णु को यज्ञ कहते हैं। जिस कार्य में देवगण पूजित होकर तृप्त हों उसे यज्ञ कहते हैं।'

सङ्गतिकरण

(१) यजनं धर्म–देश–जाति–मर्यादारक्षायै महापुरुषाणामेकीकरणं यज्ञः।

(२) इज्यन्ते सङ्गतीक्रियन्ते विश्वकल्याणाय परिभ्रमणं कृत्वा महान्तो विद्वाँसः वैदिकशिरोमणयः व्याख्यानरत्नाकराः निमन्त्र्यन्ते अस्मिन्निति यज्ञः।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(३) इज्यन्ते स्वकीय बन्धु-बान्धवादयः प्रेमसम्मानभाजः सङ्गतिकरणाय आहूयन्ते प्रार्थ्यन्ते च येन कर्मणेति यज्ञः ।

'धर्म, देश, जाति (वर्णाश्रम) की मर्यादा की रक्षा के लिये महापुरुषों को एकत्रित करना यज्ञ कहलाता है। विश्व-कल्याण के लिये जगद्भ्रमण करके महापुरुषों द्वारा बड़े-बड़े विद्वान्, वैदिक-मूर्धन्य, व्याख्यानरत्नाकर लोग जहाँ निमन्त्रित किये जाते हों उसे यज्ञ कहते हैं। जिस सदनुष्ठान में अपने बन्धु-बान्धव आदि स्नेहियों को परस्पर सम्मिलन के लिये आमन्त्रित किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं।'

दान

(१) यजनं यथाशक्ति देश-काल-पात्रादिविचारपुरस्सरद्रव्यादि-त्यागः ।

(२) इज्यते देवतोद्देशेन श्रद्धापुरस्सरं द्रव्यादि त्यज्यते अस्मिन्निति यज्ञः ।

(३) इज्यन्ते सन्तोष्यन्ते याचका येन कर्मणा स यज्ञः ।

(४) इज्यते भगवति सर्वस्वं निधाप्यते येन वा स यज्ञः ।

(५) इज्यन्ते चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्याः सच्छिष्येभ्यः सम्प्रदीयन्ते (उपदिश्यन्ते) सदाचार्य्यैर्येन वा स यज्ञः ।

'यथाशक्ति देश, काल, पात्रादि विचारपुरस्सर द्रव्योत्सर्ग करने को यज्ञ कहते हैं। जिसमें श्रद्धापूर्वक देवताओं के उद्देश्य से द्रव्य का त्याग किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं। जिस कर्म से याचकों को सन्तुष्ट किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं। जिस कर्म से अपना सर्वस्व भगवदर्पण किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं। जिस कर्म में चारों वेद साङ्गोपाङ्ग उत्तम शिष्यों के लिये योग्य आचार्यों द्वारा उपदिष्ट किये जाते हों उसे यज्ञ कहते हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ-शब्द के कतिपय व्युत्पत्तिजन्य अर्थ

(१) येन सदनुष्ठानेन इन्द्रप्रभृतयो देवाः सुप्रसन्नाः सुवृष्टिं कुर्युस्तद् यज्ञपदाभिधेयम्।

(२) येन सदनुष्ठानेन स्वर्गादिप्राप्तिः सुलभा स्यात् तद् यज्ञपदाभिधेयम्।

(३) येन सदनुष्ठानेन सम्पूर्णं विश्वं कल्याणं भजेत् तद् यज्ञपदाभिधेयम्।

(४) येन सदनुष्ठानेन आध्यात्मिक-आधिदैविक-आधिभौतिकतापत्रयोन्मूलनं सुकरं स्यात् तद् यज्ञपदाभिधेयम्।

(५) यागाङ्गसमूहस्य एकफलसाधनाय अपूर्ववान् कर्मविशेषो यागः।

(६) मन्त्रैर्देवतामुद्दिश्य द्रव्यस्य दानं यागः।

'जिस सदनुष्ठानद्वारा इन्द्रादि देवगण प्रसन्न होकर सुवृष्टि प्रदान करें उसे यज्ञ कहते हैं। जिस सदनुष्ठानद्वारा स्वर्गादिकी प्राप्ति सुलभ हो उसे यज्ञ कहते हैं। जिस सदनुष्ठानद्वारा संसारका कल्याण हो उसे यज्ञ कहते हैं। जिस सदनुष्ठानद्वारा आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक विपत्तियाँ दूर हों उसे यज्ञ कहते हैं। यागाङ्ग-समूहके एकफलसाधनार्थ अपूर्वसे युक्त कर्म-विशेषको यज्ञ कहते हैं। वैदिक मन्त्रोंके द्वारा देवताओंको उद्देश्य करके किये हुए द्रव्यके दानको यज्ञ कहते हैं।' (यह संक्षिप्तार्थ है)।

यज्ञ—शब्दके कतिपय वेद-प्रतिपाद्य अर्थ

(१) यत्र प्रक्षेपाङ्गको देवतोद्देशपूर्वको द्रव्यत्यागोऽनुष्ठीयते स यागपदार्थः।

(भाट्टदीपिका ४।२।१२)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'जहाँ पर देवताको उद्देश्य कर अग्निमें द्रव्यका प्रक्षेप किया जाय, उसे 'यज्ञ' कहते हैं।'

(२) **यज्ञः कस्मात् ? प्रख्यातं यजति कर्मेति नैरुक्ताः। याच्ञ्यो भवतीति वा यजुर्भिरुन्नो भवतीति वा, बहुकृष्णाजिन इत्यौपमन्यवः यजूँष्येनं नयन्तीति वा।**

(निरुक्त ३।४।१९)

'यज्ञ क्यों कहलाता है ? यज् धातुका अर्थ देवपूजा आदि लोक और वेदमें प्रसिद्ध ही है, ऐसा निरुक्तके विद्वान् कहते हैं, अथवा जिस कर्ममें लोग यजमानसे अन्नादिककी याचना करते हैं, अथवां यजमान ही देवताओंसे वर्षा आदिकी प्रार्थना करता है, अथवा देवता ही यजमानसे हविकी याचना करते हैं, उस कर्मको 'यज्ञ' कहते हैं। अथवा कृष्ण यजुर्वेदके मन्त्रोंकी जिसमें प्रधानता हो उसे यज्ञ कहते हैं। यज्ञमें यजुर्वेदके मन्त्रोंका अधिक उपयोग होता है।'

(३) **दैवतं प्रति स्व-द्रव्यस्योत्सर्जनं यज्ञः।**

'देवताके प्रति अपने द्रव्यका उत्सर्जन (त्याग) करना यज्ञ कहलाता है।'

यज्ञका लक्षण

देवानां द्रव्यहविषां ऋक्सामयजुषां तथा।
ऋत्विजां दक्षिणानां च संयोगो यज्ञ उच्यते॥

(मत्स्यपुराण १४४।४४)

'जिस कर्म-विशेषमें देवता, हवनीय द्रव्य, वेदमन्त्र, ऋत्विज और दक्षिणा—इन पाँचोंका संयीग हो, उसे यज्ञ कहते हैं।'

यज्ञ और महायज्ञ

यज्ञ के दो भेद होते हैं—एक यज्ञ और दूसरा महायज्ञ। जो अपने ऐहिक तथा पारलौकिक कल्याणके लिये पुत्रेष्टियाग और विष्णुया-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गादि करते हैं, उन्हें 'यज्ञ' कहते हैं। और जो विश्वकल्याणार्थ 'पञ्चमहायज्ञ' आदि करते हैं, उन्हें 'महायज्ञ' कहते हैं। यज्ञ और महायज्ञके स्वरूप तथा इसकी विशेषता का वर्णन महर्षि भारद्वाजने इस प्रकार किया है—

'यज्ञः कर्मसु कौशलम्', 'समष्टिसम्बन्धान्महायज्ञः।'

'कुशलतापूर्वक जो अनुष्ठान किया जाता है उसे 'यज्ञ' कहते हैं। पश्चात् समष्टि-सम्बन्ध होनेसे उसीको 'महायज्ञ' कहते हैं।'

इसी बातको महर्षि अङ्गिराने भी कहा है—

'यज्ञमहायज्ञौ व्यष्टिसमष्टिसम्बन्धात्।'

'व्यष्टि-समष्टि सम्बन्धसे यज्ञ-महायज्ञ कहे जाते हैं।'

यज्ञका फल आत्मोन्नति तथा आत्मकल्याण है, उसका व्यष्टिसे सम्बन्ध होनेके कारण उसमें स्वार्थकी प्रधानता आ जाती है। (यही इसकी न्यूनता हैं)।

यहायज्ञका फल जगत्का कल्याण है, उसका समष्टि से सम्बन्ध होनेके कारण उसमें निःस्वार्थताकी प्रधानता आ जाती है। (यही इसकी विशेषता है)।

यज्ञके भेद

प्रधानतया यज्ञ दो प्रकारके होते हैं—श्रौत और स्मार्त्त। श्रुति-प्रतिपादित यज्ञोंको श्रौतयज्ञ और स्मृतिप्रतिपादित यज्ञोंको स्मार्त्त-यज्ञ कहते हैं। श्रौतयज्ञ* में केवल श्रुतिप्रतिपादित मन्त्रोंका प्रयोग होता है और स्मार्तयज्ञमें वैदिक, पौराणिक और तान्त्रिक मन्त्रोंका प्रयोग होता है।

---

* श्रौतयज्ञोंका विशदरूपमें परिचय प्राप्त करनेके लिये देखिये—स्व० म० म० पं० श्रीविद्याधरजी गौडकी रचित 'कात्यायन-श्रौतसूत्र-भूमिका' अथवा 'श्रौतयज्ञ-परिचय'।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेदोंमें अनेक प्रकार के यज्ञोंका वर्णन मिलता है, किन्तु उनमें निम्नलिखित पाँच प्रकार के यज्ञ प्रधान माने गये हैं—

'स एष यज्ञः पञ्चविधः—अग्निहोत्रम्, दर्शपूर्णमासौ, चातुर्मास्यानि, पशुः,सोमः, इति । (ऐतरेयब्राह्मण)

अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, चातुर्मास्य, पशु और सोम—ये पाँच प्रकारके यज्ञ कहे गये हैं । इन्हीं पाँच प्रकारके यज्ञोंमें श्रुतिप्रतिपादित वैदिक यज्ञोंकी समाप्ति हो जाती है ।

'गौतमधर्मसूत्र (८।१८) में यज्ञोंका उल्लेख निम्नलिखित है—

'औपासनहोमः, वैश्वदेवम् , पार्वणम् , अष्टका, मासिकश्राद्धम्, श्रवणा, शलगव इति सप्त पाकयज्ञसंस्थाः । अग्निहोत्रम् , दर्शपूर्णमासौ, आग्रयणम् , चातुर्मास्यानि, निरूढपशुबन्धः, सौत्रामणी, पिण्डपितृयज्ञादयो दर्विहोमा इति सप्त हविर्यज्ञसंस्थाः । अग्निष्टोमः, अत्यग्निष्टोमः, उक्थ्यः, षोडशी, वाजपेयः, अतिरात्रः, आप्तोर्याम इति सप्त सोमसंस्थाः ।'

गौतमधर्मसूत्रकारने पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ और सोमयज्ञ भेदसे तीन प्रकारके यज्ञों का भेद दिखला कर प्रत्येकके सात-सात भेद दिखला करके २१ प्रकारके यज्ञोंका उल्लेख किया है । इसमें स्मार्त्त सात पाकयज्ञ संस्थाओंका उल्लेख गृह्यसूत्रों और धर्मसूत्रोंमें मिलता है । अग्निहोत्रसे लेकर सोमसंस्थान्त १४ यज्ञोंका उल्लेख कात्यायनादि श्रौतसूत्र में मिलता है ।

वर्तमान समयमें श्रौतयज्ञोंका प्रचार तो नहीं के बराबर है । गृह्यसूत्रोक्त पाकयज्ञोंका प्रचार किसी-न-किसी रूपमें अवश्य प्रचलित है ।

उपर्युक्त १४ वैदिक यज्ञ तथा ७ पाकयज्ञके अतिरिक्त गृह्यसूत्रों

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

और धर्मसूत्रोंमें *पञ्चमहायज्ञोंका भी उल्लेख किया गया है, जो कि नित्यकर्म और आवश्यक अनुष्ठेय माने गये हैं।

उपर्युक्त सभी प्रकारके यज्ञ सात्त्विक, राजसिक और तामसिक भेदसे तीन प्रकारके कहे गये हैं। जो यज्ञ निष्कामभावसे किया जाता है उसे '[1]सात्त्विक यज्ञ' कहते हैं। जो यज्ञ सकाम अर्थात् किसी फल-विशेषकी इच्छासे किया जाता है उसे '[2]राजसिक यज्ञ' कहते हैं। जो यज्ञ शास्त्रोंके विरुद्ध किया जाता है उसे '[3]तामसिक यज्ञ' कहते हैं। इनमें 'सात्त्विक यज्ञ' का अनुष्ठान सर्वोत्तम कहा गया है। अतः यज्ञका मुख्य उद्देश्य सात्त्विकताको लेकर ही होना चाहिये। शास्त्रोंमें सात्त्विक यज्ञका महान् फल लिखा है।

श्रौत-स्मार्त्तादि सभी प्रकारके यज्ञोंमें कुछ यज्ञ नित्य, कुछ नैमित्तिक और कुछ काम्य होते हैं। उनमें नैमित्तिक और काम्य यज्ञ करनेके लिये तो द्विज स्वतन्त्र है अर्थात् वह अपनी श्रद्धा-भक्ति तथा आर्थिक परिस्थितिके अनुकूल यज्ञ करे अथवा न करे, किन्तु नित्ययज्ञ तो करना ही होगा। उस नित्ययज्ञका नाम 'पञ्चमहायज्ञ'

---

*ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और मनुष्ययज्ञ इन्हें 'पञ्चमहायज्ञ' कहते हैं। (मनु० ३।७०)

१ अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः॥
(गीता १७।११)

२ अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत्।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम्॥
(गीता १७।१२)

३ विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम्।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते॥
(गीता १७।१३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है। पञ्चमहायज्ञके न करनेसे मनुष्य *पञ्चसूनाजन्य दोषोंसे छुटकारा कथमपि नहीं प्राप्त कर सकता। अतः 'पञ्चसूना' दोषों से छुटकारा पानेके लिये 'पञ्चमहायज्ञ' का अनुष्ठान परमावश्यक और नित्य कर्तव्य है। यह पञ्चमहायज्ञ अन्य यागोंकी तरह न तो अधिक द्रव्यसाध्य है और न अधिक समयसाध्य ही है।

यज्ञकी प्राचीनता

हिन्दू-जातिका प्राचीन धर्मग्रन्थ वेद है। वेदों में कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड इन तीन विषयों का मुख्यतः वर्णन मिलता है, किन्तु इन तीनों में प्रधान स्थान 'कर्मकाण्ड' को ही प्राप्त है। इसीलिये वेदों में यज्ञ-यागादि विविध क्रिया-कलापका विशेषरूप में वर्णन मिलता है। अतः यज्ञ ही वेदों का मुख्य विषय है। वेदोंका मुख्य विषय यज्ञ होने के कारण ही यज्ञों में वेद-मन्त्रों का प्रयोग (उच्चारण) किया जाता है। वेद-मन्त्रों के बिना यज्ञ नहीं हो सकते और यज्ञोंके बिना वेद-मन्त्रों का ठीक-ठीक सदुपयोग नहीं हो सकता। अतः स्पष्ट है कि वेद हैं तो यज्ञ हैं और यज्ञ हैं तो वेद हैं।

विष्णुधर्मोत्तरपुराण (२।१०४) के **'वेदास्तु यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः'**

---

* पञ्च सूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः।
कण्डनी चोदकुम्भश्च बध्यते यास्तु वाहयन्॥
तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः।
पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम्॥
(मनु० ३।६८-६९)

'प्रत्येक गृहस्थके यहाँ चूल्हा, चक्की, झाड़ू, ओखली और जलका पात्र—ये पाँच हिंसाके स्थान हैं। इनको काममें लानेवाला गृहस्थ पापसे बँधता है। इनसे मुक्त होनेके लिये महर्षियोंने पञ्चमहायज्ञ प्रतिदिन करनेके लिये कहे हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इस वचन से तथा भगवान् मनुके **'दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थम्'** (१।२३) इस वाक्य से स्पष्ट सिद्ध है कि वेदों का प्रादुर्भाव यज्ञोंके लिये ही हुआ है*।

जिस प्रकार वेद अत्यन्त दुरूह हैं, उसी प्रकार वेदाङ्गभूत यज्ञ भी अत्यन्त दुरूह हैं। जिस प्रकार वेदमें उपास्य देवता हैं, उसी प्रकार यज्ञमें भी उपास्य देवता हैं। जिस प्रकार वेद अपौरुषेय, नित्य और अनादि हैं, उसी प्रकार यज्ञ भी अपौरुषेय, नित्य और अनादि हैं। ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र **'अग्निमीडे पुरोहितम्'** में 'यज्ञ' पद आया है, अतः सिद्ध होता है कि वेद से भी प्राचीन 'यज्ञ' है।

अब हम अनेक ऋषि-महर्षियों के उन वचनों को उद्धृत करते हैं, जिनसे यज्ञके महत्त्व का सुन्दररूप से परिचय हो सकेगा।

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥

(गीता ३।१४)

'समस्त प्राणी अन्नसे उत्पन्न होते हैं और अन्नकी उत्पत्ति वर्षासे होती है और वर्षा यज्ञसे होती है तथा वह यज्ञ कर्मसे होता है।'

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥

(मनुस्मृति ३।७६)

'अग्नि में विधि-विधानपूर्वक दी हुई आहुति सूर्यदेवको प्राप्त होती है, पश्चात् उससे वृष्टि होती है, वृष्टि से अन्न होता है और अन्नसे प्रजाकी उत्पत्ति होती है।'

---

*'ऋचो यजूंषि सामानि निर्ममे यज्ञसिद्धये।' (ब्रह्मपुराण १।४६)

'यज्ञ सिद्धि के लिये ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का निर्माण हुआ है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अग्नौ प्रास्ताहुतिर्ब्रह्मन्नादित्यमुपगच्छति ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥

(महाभारत, शान्तिपर्व २६३।११)

'अग्निमें डाली हुई आहुति सूर्यमण्डलको प्राप्त होती है, सूर्यसे जलकी वृष्टि होती है, वृष्टिसे अन्न उत्पन्न होता है और अन्न से समस्त प्रजा जन्म तथा जीवन धारण करती है।'

यजते क्रतुभिर्देवान् पितॄंश्च श्रद्धयान्वितः ।
गत्वा चान्द्रमसं लोकं सोमपाः पुनरेष्यति ॥

(भागवत ३।३२।२-३)

'जो पुरुष श्रद्धापूर्वक यज्ञादि द्वारा देवताओं और पितरों का पूजन करता हैं वह यज्ञोंके प्रताप से चन्द्रलोक में जाकर सोमरस (अमृत) का पान करके पुनः इहलोकमें आता है।'

यस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान् यज्ञपूरुषः ।
इज्यते स्वेन धर्मेण जनैर्वर्णाश्रमान्वितैः ॥
तस्य राज्ञो महाभाग भगवान् भूतभावनः ।
परितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निजशासने ॥
तस्मिंस्तुष्टे किमप्राप्यं जगतामीश्वरेश्वरे ।

(भागवत ४।१४।१८-२०)

'जिसके राज्य अथवा नगर में वर्णाश्रमधर्मियों के द्वारा यज्ञ-पुरुष भगवान् का यजन होता है उस पर भगवान् प्रसन्न होते हैं। क्योंकि वे ही समस्त विश्व की आत्मा तथा समस्त भूतों के रक्षक हैं। भगवान् ब्रह्मादि जगदीश्वरों के भी ईश्वर हैं, अतः भगवान् के प्रसन्न होने पर संसार में ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं जो कि अप्राप्य हो।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञेनाप्यायिता देवा वृष्ट्युत्सर्गेण मानवाः ।
आप्यायन्ते धर्मयज्ञा यज्ञाः कल्याणहेतवः ॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ३।१३२)

'यज्ञ से देवताओं का आप्यायन [वर्द्धन] अथवा पोषण होता है। यज्ञ द्वारा वृष्टि होने से मनुष्यों का पालन-पोषण होता है। इस प्रकार जगत् का पालन-पोषण करने के कारण धर्मयज्ञ कल्याण के हेतु कहे जाते हैं।'

यज्ञैराप्यायिता देवा वृष्ट्युत्सर्गेण वै प्रजाः ।
आप्याययन्ते धर्मज्ञ यज्ञाः कल्याणहेतवः ॥

(विष्णुपुराण १।६।८)

'हे धर्मज्ञ ! यज्ञसे देवताओं का आप्यायन अथवा पोषण होता है, यज्ञद्वारा वृष्टि होने से मनुष्यों का पालन-पोषण होता है। इस प्रकार प्रायः जगत् का पालन-पोषण करने के कारण यज्ञ कल्याण के हेतु कहे जाते हैं।'

यज्ञेषु देवास्तुष्यन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
यज्ञेन ध्रियते पृथ्वी यज्ञस्तारयति प्रजाः ॥
अन्नेन भूता जीवन्ति यज्ञे सव प्रतिष्ठितम् ।
पर्जन्यो जायते यज्ञात्सर्वं यज्ञमयं ततः ॥

(कालिकापुराण ३२।७–८)

'यज्ञों से देवता सन्तुष्ट होते हैं, यज्ञ ही समस्त चराचर जगत् का प्रतिष्ठापक है। यज्ञ पृथ्वी को धारण किये हुए है। यज्ञ ही प्रजा को पापों से बचाता है। अन्न से प्राणी जीवित रहते हैं, वह अन्न बादलों द्वारा उत्पन्न होता है और बादल की उत्पत्ति यज्ञ से होती है। अतः यह सम्पूर्ण जगत् यज्ञमय है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञाद्देवाः प्रजाश्चैव यज्ञादन्ननियोगिनः ।
सर्वं यज्ञात्सदा भावि सर्वं यज्ञमयं जगत् ॥

(कालिकापुराण ३१।४०)

'यज्ञ से देवगण, यज्ञ से समस्त प्रजा, यज्ञ से समस्त अन्नोपजीवी प्राणी और यज्ञ पर ही सम्पूर्ण भविष्य सदैव निर्भर रहता है। इस तरह समस्त जगत् ही यज्ञमय है।'

यज्ञैर्यज्ञेश्वरो येषां राष्ट्रे सम्पूज्यते हरिः ।
तेषां सर्वेप्सितावाप्तिं ददाति नृप भूभृताम् ॥

(विष्णुपुराण १।१३।१९)

'हे राजन् ! जिन राजाओं के राज्य में भगवान् हरि का यज्ञों द्वारा पूजन किया जाता है, वे उनकी सभी कामनाओं को पूर्ण कर देते हैं।'

ये यजन्ति स्पृहा शून्या हरिभक्तान् हरिं तथा ।
त एव भुवनं सर्वं पुनन्ति स्वांघ्रिपांशुना ॥

(नारदपुराण ३९।६४)

'जो स्पृहा से रहित (निष्काम-भाव से) होकर भगवान् और भगवद्भक्तों को यज्ञ के द्वारा पूजते हैं, वही अपने चरण-रज से समस्त ब्रह्माण्ड को पवित्र करते हैं।'

'यज्ञदानादिकं कर्म भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणाम् ।'

(अग्निपुराण ३८१।४८)

'मनुष्यों के लिये यज्ञ, दान आदि कर्म भुक्ति और मुक्ति को देनेवाले हैं।'

यज्ञेन लोकानाप्नोति पापनाशं हुतेन च ।
जप्येन कामानाप्नोति सत्येन च परां गतिम् ॥

(विष्णुधर्मोत्तर पुराण १३७।२)

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २-२३६४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'यज्ञ करने से मनुष्य देवलोकों को प्राप्त करता है, हवन करने से पापों का नाश होता है, जप करने से समस्त कामनाओं को प्राप्त करता है और सत्य-भाषण से परम-पद को प्राप्त करता है।'

यज्ञेन देवा जीवन्ति यज्ञेन पितरस्तथा।
देवाधीनाः प्रजाः सर्वा यज्ञाधीनाश्च देवताः॥
यज्ञो हि भगवान् विष्णुर्यत्र सर्वं प्रतिष्ठितम्।
यज्ञार्थं पशवः स्रष्टा देवास्त्वौषधयस्तथा॥
यज्ञार्थं पुरुषाः स्रष्टाः स्वयमेव स्वयंभुवा।
यज्ञश्च भूत्यै सर्वस्य तस्माद्यज्ञपरो भवेत्॥
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः।
धनं यद्यज्ञशीलानां देवस्वं तं विदुर्बुधाः॥

यज्ञेन सम्यक् पुरुषस्तु नाके
सम्पूज्यमानस्त्रिदशैर्महात्मा।
प्राप्नोति सौख्यानि महानुभावाः
तस्मात्प्रयत्नेन यजेत यज्ञैः॥

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण १६२।१–४,७)

'यज्ञ से देवगण और पितृगण जीवित रहते हैं, देवताओं के आधीन समस्त प्रजा रहती हैं और यज्ञ के आधीन समस्त देवता रहते हैं। यज्ञ ही भगवान् विष्णु हैं, विष्णु भगवान् में ही सब प्रतिष्ठित रहतेहैं, यज्ञ के लिये देवताओं तथा औषधियों की सृष्टि की गई है। स्वयम्भू ने यज्ञ के लिये ही मनुष्यों की सृष्टि कर उनसे कहा—यज्ञ सब का कल्याण करनेवाला है, अतः यज्ञ में तत्पर रहो। यज्ञ के अवशिष्ट भाग का भोजन करनेवाले समस्त पापों से मुक्त हो जाते हैं, यज्ञ-शीलों के धन को पण्डितों ने देवस्व (देवधन) कहा है। यज्ञ के द्वारा श्रेष्ठ महात्मा पुरुष स्वर्ग में जाकर देवताओं के द्वारा भलीभाँति

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पूजित होते हैं और यज्ञकर्ता पुण्यात्मा पुरुष स्वर्ग में जाकर अनेक प्रकार की सुखप्रद वस्तुओं की प्राप्ति करते हैं। अतः प्रयत्नपूर्वक यज्ञों द्वारा भगवान् का यजन करना चाहिये।'

होमेन पापं पुरुषो जहाति
होमेन नाकं च तथा प्रयाति।
होमस्तु लोके दुरितं समग्रं
विनाशयत्येव न संशयोऽत्र॥

(विष्णुधर्मोत्तर पुराण २८७।१५)

'यज्ञ के द्वारा मनुष्य अपने पापों को दूर करता है और यज्ञ से वह स्वर्ग को प्राप्त करता है। यज्ञ ही संसार के समस्त पापों को नष्ट करता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।'

मातापित्रोर्हिते युक्तो गो-ब्राह्मणहिते रतः।
दान्तो यज्वा देवभक्तो ब्रह्मलोके महीयते॥

(कूर्मपुराण, उत्तरार्ध १५।२४)

'माता-पिता के हित में संल्लग्न, गौ और ब्राह्मण के हित में निरत, देवभक्त और दानशील—ये सभी यज्ञ करने से ब्रह्मलोक में पूजित होते है।'

'यज्ञैरनेकैर्देवत्वमवाप्येन्द्रेण भुज्यते।'

(पद्मपुराण, सृष्टि० १३।३६८)

'अनेक यज्ञों के करने से देवत्व को प्राप्त करके इन्द्र के साथ दिव्य भोगों को भोगते हैं।'

प्रीयतां पुण्डरीकाक्षः सर्वयज्ञेश्वरो हरिः।
तस्मिंस्तुष्टे जगत्तुष्टं प्रीणिते प्रीणितं भवेत्॥

(मत्स्यपुराण २३८।३८)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'विष्णु भगवान् यज्ञ से सन्तुष्ट होते हैं, उनकी सन्तुष्टता से जगत् सन्तुष्ट होता है और उनकी प्रसन्नता से ही जगत् प्रसन्न होता है।'

यज्ञाय सृष्टानि धनानि धात्रा
यज्ञोद्दिष्टः पुरुषो रक्षिता च।
तस्मात्सर्वं यज्ञ एवोपयोज्यं
धनं ततोऽनन्तर एव कामः॥
यज्ञैरिन्द्रो विविधै रत्नवद्भि-
र्देवान् सर्वानत्ययाद् भूरितेजाः।
तेनेन्द्रत्वं प्राप्य विभ्राजतेऽसौ
तस्माद्यज्ञं सर्वमेवोपयोज्यम्॥

(महाभारत, शान्तिपर्व २०।१०-११)

'ब्रह्मा ने यज्ञ के लिये ही अनेक प्रकार की धन की सृष्टि की है। यज्ञनिष्ठ पुरुष ही सबकी रक्षा करने में समर्थ होता है। इसलिये यज्ञ ही सबका परम उपयोगी धन है। यज्ञ के बाद ही अर्थ, काम आदि का उपयोग लिखा है। इन्द्र ने अनेक प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण यज्ञों के द्वारा दिव्य तेज प्राप्त कर समस्त देवताओं का अतिक्रमण कर 'इन्द्रपद' प्राप्त किया और वह आज भी उसी पद-पर शोभित है। अतः यज्ञ में समस्त उपयोगी साधन सन्निहित हैं।'

'दानशीलो भवेद्राजा यज्ञशीलश्च भारत।'

(महाभारत, शान्तिपर्व ६१।५३)

'हे युधिष्ठिर! दान करनेवाला तथा यज्ञ करनेवाला राजा होता है।'

न हि यज्ञसमं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते।
तस्माद्यष्टव्यमित्याहुः पुरुषेणानुसूयता॥

(महाभारत, शान्तिपर्व ६१।५३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'तीनों लोकों में यज्ञ के बराबर और कोई उत्तम वस्तु नहीं है। इसलिये दोषदृष्टि से रहित होकर मनुष्य को यज्ञ करना चाहिये, ऐसा महर्षियों ने कहा है।'

यानि यज्ञेष्विहेज्यन्ति सदा प्राज्ञा द्विजर्षभाः।
तेन ते देवयानेन पथा यान्ति महामुने॥

(महाभारत, शान्तिपर्व २६३।२६)

'हे महामुने ! जो बुद्धिमान् विप्र सर्वदा श्रेष्ठ यज्ञ करते रहते हैं, वे यज्ञ के प्रभाव से देवयान मार्ग के द्वारा देवलोक को प्राप्त करते हैं।'

स्वाहा-स्वधा-वषट्कारा यत्र सम्यगनुष्ठिताः।
अजस्रं चैव वर्तन्ते वसेत्तत्राविचारयन्॥

(महाभारत, शान्तिपर्व २८७।५१)

'जिस राष्ट्र में स्वाहा, स्वधा और वषट्कार के अनुष्ठान विधि-पूर्वक सर्वदा होते रहते हैं, वहीं पर मनुष्य को बिना विचारे निवास करना चाहिये।'

'हुतेन शाम्यते पापम्।'

(महाभारत, शान्तिपर्व १६१।२)

'हवन करने से पापों का शमन हो जाता है।'

'विधिवत्पावकं हुत्वा ब्रह्मलोके महीयते।'

(महाभारत, अनुशासन० ७५।१६)

'विधिपूर्वक अग्नि में हवन करनेवाला पुरुष ब्रह्मलोक में जाता है।'

स तु द्वादश मासान्वै जुह्वानो जातवेदसम्।
अहिंसानिरतो धीमान् सत्यवागनुसूयकः॥
लोकान्वसूनामाप्नोति दिवाकरसमप्रभः॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व १०७।६७–६८)

२

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'जो मनुष्य हिंसा से रहित, सत्यवादी होकर और निन्दाशून्य होकर बारह मास तक अग्नि में हवन करता है, वह सूर्य के सदृश अष्ट वसुओं के लोकों को प्राप्त करता है।'

तपोभिः क्रतुभिश्चैव दानेन च युधिष्ठिर।
तरन्ति नित्यं पुरुषा ये स्म पापानि कुर्वते॥

(महाभारत, आश्वमेधिकपर्व ३।४)

'हे युधिष्ठिर ! जो मनुष्य नित्य पापकर्म करते हैं, वे भी तप, यज्ञ और दान के द्वारा पापों से तर जाते हैं।'

देवाः सन्तोषिता यज्ञैर्लोकान् संवर्धयन्त्युत।
उभयोर्लोकयोर्देवि भूतिर्यज्ञैः प्रदृश्यते॥
तस्माद्यज्ञाद्दिवं याति पूर्वजैः सह मोदते।
नास्ति यज्ञसमं दानं नास्ति यज्ञसमो विधिः।
सर्वधर्मसमुद्देशो देवि यज्ञे समाहितः॥

(महाभारत)

'यज्ञों से सन्तुष्ट होने पर देवगण लोकाभ्युदय की कामना करते हैं, साथ ही यज्ञों के द्वारा दोनों लोकों का कल्याण सम्पन्न होता है। यज्ञ से प्राणी के लिये विशेष फल यह होता है कि वह स्वर्गलोक का भागी बनता है और वहाँ पर अपने पूर्वजों के साथ आनन्द करता है। संसार में यज्ञ के समान कोई दान नहीं और यज्ञ के समान कोई विधि-विधान नहीं है। यज्ञ से ही समस्त धर्मों का उद्देश्य सिद्ध होता है, यह बात सुस्पष्ट है।'

यज्ञकर्ता शक्रलोके वसते शाश्वतीः समाः।
दानी चान्द्रमसं लोकं व्रती सौरं व्रजत्यलम्॥

(गर्गसंहिता वि० ख० ६।१०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'यज्ञ करनेवाला मनुष्य इन्द्रलोक में सैकड़ों, हजारों वर्ष-पर्यन्त निवास करता है। दान करनेवाला मनुष्य चन्द्रलोक और व्रत करनेवाला सूर्यलोक को प्राप्त करता है।'

यज्ञेन देवा विमला विभान्ति
यज्ञेन देवा अमृतत्वमाप्नुयुः।
यज्ञेन पापैर्बहुभिर्विमुक्तः
प्राप्नोति लोकान् परमस्य विष्णोः॥

(महर्षि हारीत)

'यज्ञ से समस्त लोक निर्मलता एवं सुन्दरता को प्राप्त करते हैं। यज्ञ से देवगण अमरत्व को प्राप्त करते हैं। यज्ञ के द्वारा अनेक तरह के पापों का प्रक्षालन कर प्राणी भगवान् विष्णु के परम वैष्णव-धाम की प्राप्ति करते हैं।'

'यज्ञादिभिर्देवाः शक्तिसुखादीनाम्।'

(महर्षि अङ्गिरा)

'यज्ञादि करने से देवगण सन्तुष्ट होते हैं, उनकी सन्तुष्टता से मनुष्य शक्ति और सुखादि की प्राप्ति करता है।'

तथा अन्यान्य धर्मग्रन्थों में—

अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।	(ऋग्वेद १।१६४।३५)
अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।	(शु० य० २३।६२)
यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः।	(अथर्ववेद ९।१०।१४)
यज्ञेन देवानाप्नोति।	(वायुपुराण ५७।११७)
यज्ञैश्च देवानाप्नोति।	(मत्स्यपुराण १४२।३३)
यज्ञैश्च देवानाप्नोति।	(अग्निपुराण ३७९।१)
यज्ञभागभुजो देवाः।	(मत्स्यपुराण २४५।१४)
यज्ञभागभुजः सर्वे।	(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ७।६७)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञभागभुजः सर्वे । (दुर्गा १२।३४)
यज्ञो वै सर्वकामधुक् । (वायुपुराण ६०।७)
यज्ञो यज्ञपतिः साक्षात् । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड २२४।१७)
यज्ञोऽयं सर्वकामधुक् । (विष्णुपुराण ३।४।१)
यज्ञोऽयं सर्वकामधुक । (पद्मपुराण)
यज्ञाः पृथिवीं धारयन्ति । (अथर्ववेद)

उपर्युक्त यज्ञ के महत्त्व को प्रकट करनेवाले अनेक प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है कि यज्ञ का फल केवल ऐहलौकिक ही नहीं है, अपितु पारलौकिक भी है। अतः जिस यज्ञानुष्ठान के प्रभाव से जीव की क्षुद्रता, अल्पज्ञता आदि विविध उपद्रवों का विनाश होता है और वह परमात्मा के साथ एकता को प्राप्त होता है, उस यज्ञ का महत्त्व सर्वमान्य है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

—०—

यज्ञकी आवश्यकता

कर्म-मीमांसा के प्रवृत्त होने पर मानव-देह धारण करते ही द्विज ऋषि-ऋण, देव-ऋण और पितृ-ऋण—इन तीन प्रकार के ऋणों से ऋणी बन जाता है।

श्रीमद्भागवत (१०।८४।३९) में आया है—

ऋणैस्त्रिभिर्द्विजो जातो देवर्षिपितृणां प्रभो ।
यज्ञाध्ययनपुत्रैस्तान्यनिस्तीर्य त्यजन् पतेत् ॥

'द्विजाति देवता, ऋषि और पितर—इन तीनों का ऋण लेकर ही उत्पन्न होते हैं। इनके ऋणों से मुक्त होने के लिये यज्ञ, अध्ययन और सन्तानोत्पत्ति करना आवश्यक है। इनसे उऋण हुए बिना जो संसार का त्याग करता है, उसका पतन हो जाता है।'

तैत्तिरीय संहिता (३।१०।५) में भी आता है—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

"जायमानो वै *ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवान् जायते ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः ।"

'द्विज जन्म लेते ही ऋषि-ऋण, देव-ऋण और पितृ-ऋण—इन तीन प्रकार के ऋणों से ऋणी बन जाता है। ब्रह्मचर्य के द्वारा ऋषि-ऋण से, यज्ञ के द्वारा देवऋण से और सन्तति के द्वारा पितृ-ऋण से मुक्ति होती है।'

भगवान् मनु ने भी **'ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य'** (६।३५) इत्यादि वाक्यों द्वारा उपर्युक्त ऋणत्रय के अपाकरण को ही मनुष्य का प्रधान कर्म बतलाया है। ऋणत्रय में 'देवऋण' का भी उल्लेख है। देव-ऋण से मुक्त होने के लिये उपर्युक्त तैत्तिरीय श्रुति ने स्पष्ट बतला दिया है कि यज्ञों के द्वारा ही देव-ऋण से मुक्ति होती है। वह यज्ञादि कर्म अत्यन्त पावन तथा अनुपेक्षणीय है, जैसा कि अनेक मत-मतान्तरों का निरास करते हुए गीता के परमाचार्य स्वयं भगवान् ने सिद्धान्त किया है—

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ।।

(गीता १८।५)

इतना ही नहीं, जगत्-कल्याण की मीमांसा तथा कर्तव्य-सत्पथ का निश्चय करते हुए भगवान् ने स्पष्ट कहा है—यज्ञिय कर्मों के अतिरिक्त समस्त कर्म लोक-बन्धन के लिये ही हैं—

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।

(गीता ३।९)

---

* 'ब्राह्मण' यह पद द्विजातिमात्र का उपलक्षण है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इस प्रकार अनेक श्रुति-स्मृति-ग्रन्थों में तथा उपनिषदों में यज्ञ को मानव का प्रधान धर्म कहा गया है। अतः प्रत्येक द्विज को यज्ञ करते रहना चाहिये। जो लोग यज्ञ के वास्तविक रहस्य और महत्त्व को न समझकर यज्ञ के प्रति श्रद्धा नहीं रखते अथवा यज्ञ नहीं करते, वे नष्ट हो जाते हैं। इस विषय में शास्त्रों की आज्ञा है—

नास्त्ययज्ञस्य लोको वै नायज्ञो विन्दते शुभम्।
अयज्ञो न च पूतात्मा नश्यति च्छिन्नपर्णवत्॥

'यज्ञ न करनेवाले पुरुष पारलौकिक सुखों से तो वञ्चित रहते ही हैं, वे ऐहिक कल्याणों की भी प्राप्ति नहीं कर सकते। अतः यज्ञहीन प्राणी आत्म-पवित्रता के अभाव से छिन्न-भिन्न पत्तों की तरह नष्ट हो जाते हैं।'

महाभारत में लिखा है—

न ह्ययज्ञा अमुं लोकं प्राप्नुवन्ति कथंचन।
(आपद्धर्मपर्व १५१।८)

'जो यज्ञ नहीं करते, वे उस श्रेष्ठ लोक (परलोक) को प्राप्त नहीं करते।'

गीता (४।३१) में भी कहा है—

नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरु सत्तम।

'हे अर्जुन! यज्ञ न करनेवाले को यह मृत्युलोक भी प्राप्त नहीं हो सकता, फिर दिव्यलोक (परलोक) की तो बात ही क्या है।'

अथर्ववेद (१२।२।३७) भी कहता है—

अयज्ञियो हतवर्चा भवति।

'यज्ञहीन (यज्ञ न करनेवाले) पुरुष का तेज नष्ट हो जाता है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

महर्षि भारद्वाज के **'यागपरः पुरुषधर्मः'** के अनुसार 'यज्ञ' मानव-जाति का विशेष धर्म है। अतः मनुष्य को अपना जीवन यज्ञमय बनाना चाहिये। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों का जीवन यज्ञमय था। वे यज्ञ-यागादि की उपासना द्वारा ही देवताओं को सन्तुष्ट कर सर्वविध ऋद्धि-सिद्धियों को आत्मसात् कर अपना और विश्व का कल्याण किया करते थे। इसलिये निश्चित है कि यज्ञ के द्वारा ही मनुष्य का जीवन उन्नत और सुखी बन सकता है।

जो लोग यज्ञ के प्रति श्रद्धा-भाव न रखकर यज्ञ नहीं करते, वे देवताओं के कोपभाजन बनते हैं। देवताओं के कुपित होने से प्राणि-मात्र को विविध प्रकार के दुःखों को भोगना पड़ता है।

शास्त्रों में लिखा है—

'यज्ञे नष्टे देवनाशस्ततः सर्वं प्रणश्यति।'

(वायुपुराण ६०।६)

'यज्ञ के न होने से देवताओं का नाश होता है। देवताओं के नाश से समस्त जगत् का नाश होता है।'

यज्ञे विनष्टे सकलाः प्रजाः क्षुद्भयकातराः।
वृष्ट्यभावान्महद्दुःखं प्राप्य नष्टाश्च काश्चन॥

(कालिकापुराण २१।१६)

'यज्ञ के न होने से समस्त प्रजा भूख से पीड़ित हो जाती है और वर्षा के अभाव से बहुत कष्ट प्राप्त कर वह नष्ट हो जाती है।'

यज्ञाभावात्तु देवानामन्नं सर्वं क्षयं गतम्।
पर्जन्याश्च ततो नष्टास्ततो वृष्टिर्नचाभवत्॥
वृष्ट्यभावे तु लोकानामाहाराः क्षीणतां गताः।
दुर्भिक्षव्यसनोपेते सर्वलोके द्विजोत्तमाः॥

(कालिकापुराण २०।११२-११३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'देवताओं के निमित्त यज्ञ न होने से अन्न का क्षय होता है, बादल नष्ट हो जाते हैं, बादलों के नष्ट होने से वर्षा नहीं होती। वर्षा के अभाव से मनुष्यों के लिये भोजन की कमी हो जाती है, जिससे सारा संसार दुर्भिक्ष से पीड़ित हो जाता है।'

महर्षि वसिष्ठ कहते हैं—

यज्ञात् सृष्टिः प्रजायन्ते अन्नानि विविधानि च।
तृणान्यौषधान्यथ च फलानि विविधानि च।
जीवानां जीवनार्थाय यज्ञः संक्रियतां बुधैः॥

'यज्ञ से सृष्टि चलती है, यज्ञ से विविध प्रकार के अन्न, घास, औषधि और फल होते हैं। अतः बुद्धिमानों को चाहिये कि वे प्राणि-मात्र के जीवन के लिये यज्ञ को अवश्य किया करें।'

पूर्वकाल के प्राणी यज्ञ के वास्तविक तत्त्व को भलीभाँति जानते थे और उनके हृदय में यज्ञ के प्रति श्रद्धा-भक्ति का अस्तित्व था। अतएव वे समय-समय पर यज्ञादि धार्मिक कार्य करते रहते थे, जिससे उनका तथा संसार का कल्याण होता रहता था। उस समय हमारा यह पवित्र भारतवर्ष अनेक सुख-समृद्धियों से परिपूर्ण था। समस्त प्राणी सर्वदा सर्वप्रकार से सुखी रहते थे। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, अकाल मृत्यु, महामारी प्रभृति रोग-शोकादि का तो लोग नाम भी नहीं जानते थे। किन्तु आज के प्राणी समय के हेर-फेर से यज्ञ के महत्त्व को भूलकर यज्ञ करना तक त्याग चुके हैं। इसीलिये देवगण भी हमसे असन्तुष्ट हैं। देवताओं की असन्तुष्टता से ही आज सारा संसार अनेकानेक कष्टों से पीड़ित है। सर्वत्र भूकम्प, अकाल, बाढ़, महामारी आदि किसी-न-किसी प्रकार की विपत्ति सर्वदा अपनी स्थिति जमाये रहती है। ऐसी भीषण परिस्थिति में संसार के सर्व-विध कल्याणार्थ यदि कोई सीधा-सादा सरल मार्ग है तो वह है यज्ञ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ ही एक ऐसा अमोघ साधन है, जिसके अनुष्ठान से देवगण की सन्तुष्टि होती है और देवगण की सन्तुष्टि से मानव पुत्र-पौत्रादि एवं धन-धान्यादि सभी प्रकार के ऐहलौकिक सुखों को प्राप्त करता है और मरने के बाद स्वर्गलोक की प्राप्ति करता है।

इस पवित्र भारत-भूमि में जबतक यज्ञों का उचित सम्मान था, तबतक इसकी मर्यादा तथा सुख सराहनीय था। प्राणी-प्राणी में सद्भावना थी। सर्वत्र कल्याण-ही कल्याण दृष्टिगोचर होता था। जब से नवयुग ने अपनी महिमा के प्रचुर प्रसार का प्रारम्भ किया, तभी से यज्ञादि कर्म में शिथिलता आने लगी, जिसका परिणाम यह हुआ कि सुख के बदले दुःख, मर्यादा के बदले अकीर्ति, पारस्परिक प्रेम के बदले ईर्ष्या तथा द्वेष, द्रव्य के बदले दरिद्रता का नग्न नृत्य एवं नाना प्रकार के अकल्याण ही दृष्टिपथ हो रहे हैं। राजा, रङ्क, फकीर—सभी सुख-लेश की आकाङ्क्षामात्र में ही सफल होते दिखायी दे रहे हैं। अतः सुस्पष्ट है कि उपर्युक्त दुःख-राशि एवं संसार के समस्त दुःखसमूह को आमूलचूल नष्ट-भ्रष्ट करनेवाला केवल यज्ञ ही ऐसा अव्यर्थ साधन है जिसके द्वारा मानव सर्वतोभावेन सुखी और सन्तुष्ट हो सकता है।

पहले किसी समय इसी पुण्य भारत-भूमि में समी त्रैवर्णिक श्रद्धा-भक्तिपूर्वक अपने श्रौत-स्मार्त यज्ञों का अनुष्ठान किया करते थे। उस समय कोई भी द्विज ऐसा नहीं था, जो वेदों का स्वाध्याय अथवा वेदोक्त कर्म अग्न्याधान (अग्निहोत्र) न करता हो। इस समय सैकड़ों-हजारों में भी ढूंढ़ने से यथाविधि अग्निहोत्र करनेवाला कोई 'अग्निहोत्री' नहीं दिखलायी देता। सैकड़ों-हजारों में भी कोई सोम-पान करनेवाला 'सोमयाजी' नहीं दिखलायी देता।

वर्त्तमान कराल कलिकाल के भयङ्कर प्रभाव से अत्यल्प संख्या में गिने-चुने याज्ञिक दिखलायी देते हैं। आज तो वेद के एक अक्षर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

को भी न जाननेवाले अपने को 'महावैदिक' और 'यज्ञ' शब्दार्थ तक को न जाननेवाले अपने को 'महायाज्ञिक' बतलानेवाले अधिक मिलते हैं। दर्श-पूर्णमास की भी प्रक्रिया को न जाननेवाले अपने को 'अश्व-मेधयाजी' कहने का दुस्साहस करते हैं।

अस्तु, अन्त में मेरी भूतभावन श्री विश्वनाथजी के चरणों में प्रार्थना है कि यह देश पुनः अपनी प्राचीन उन्नति के लिये अग्रसर हो, घर-घर में त्रेताग्नियाँ प्रज्वलित हों, सब लोग पुनः अपने मुख्य धर्म यज्ञादि पर आरूढ़ हों, देवगण तृप्त हों, तृप्त देवगण मानवमात्र को अभीष्ट फल प्रदान करें। भारतीय आर्यजाति में परस्पर प्रेमाधिक्य हो तथा यह भूमण्डल मूर्द्धन्य पवित्र भारत-भूमि एवं आर्य-जाति पुनः **'सत्यमेव जयते नानृतम्'** के अवलम्ब से विश्वविजयी बने।

—:o:—

यज्ञसे देवताओंकी तृप्ति

कुछ लोगोंका ऐसा मत है कि यज्ञ केवल वायु-शुद्धिके लिये किया जाता है, इसके अतिरिक्त इसका और कोई प्रयोजन नहीं है। किन्तु यथार्थमें ऐसी बात नहीं है। यज्ञका वायुशुद्धिमात्र प्रयोजन नहीं है, उसे तो नान्तरीयक भी माना जा सकता है। यज्ञका आत्यन्तिक प्रयोजन है यज्ञ-कर्ताका देवताओं के साथ परस्पर-भावन। शास्त्रोंमें स्पष्ट शब्दों में इस बातकी पुष्टि की गयी है। ऋग्वेदमें यजमान अग्निसे प्रार्थना करता है कि वे उसके हविको देवतातक पहुँचा दें—

'आ अग्ने! वह हविरद्याय देवान्'

(ऋग्वेद ७।११।५)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अग्निमें जब उन-उन देवताओं को उद्देश्य करके मन्त्रोच्चारण-पूर्वक द्रव्यका त्याग किया जाता है, तब अग्निके लिये यह आवश्यक हो जाता है कि वे उन-उन देवताओं तक उस-उस द्रव्यको पहुँचा दें, जिसमें कि उनकी तृप्ति हो जाय। इसलिये वेदने अग्निके लिये 'देवदूत' और 'देवमुख' जैसे शब्दोंका प्रयोग किया है—**'अग्निर्हि देवानां मुखम्'** (शतपथब्राह्मण ३।७।४।१०) और इसलिये होमके समय यह आवश्यक हो जाता है कि जिस देवताके लिये द्रव्य-त्याग किया जा रहा है, उस देवताका उस समय ध्यान अवश्य कर लिया जाय—

'यस्यै देवतायै हविर्गृहीतं स्यात्, तां मनसा ध्यायेत्'

(निरुक्त ८।२२।११)

यही कारण है कि देवताओंमें हविके लिये पर्याप्त उत्सुकता बनी रहती है। और जो लोग ऐसा नहीं कर पाते, उन पर उनकी कठोर दृष्टि बन जाती है। ऋग्वेदमें मरुत् देवताके लिये 'अभोग्घन' विशेषण दिया है, जिसका अर्थ होता है कि जो देवताओंको भोजनके लिये हवि नहीं देते, मरुद्देवता उन्हें मार डालते हैं—

'ये देवान् हविर्न भोजयन्ति तेषां हन्तारः।'

(सायण)

यद्यपि देवता समर्थ हैं, पर प्रशास्ताका कुछ प्रशासन ही ऐसा हैं कि इस दीन-वत्तिका आश्रयण उन्हें करना ही पड़ता है, जीवन निर्वाहके लिये यजमानकी बाट देखनी ही पड़ती है—

'तथा च यजमानं देवा ईश्वराः सन्तो जीवनार्थेऽनुगताश्चरुपुरोडाशाद्युपजीवनप्रयोजनेन अन्यथापि जीवितुमुत्सहन्तः कृपणां दीनवृत्तिमाश्रित्य स्थिताः, तच्च प्रशास्तुः प्रशासनात्।'

(बृ० उ० भा० ३।८)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मनुष्योंको तो पग-पग पर दैवी–सहायताकी आवश्यकता पड़ती है, इसलिये इन्हें तो उधर मुड़ना ही पड़ता है, किन्तु देवताओंको भी हविके लिये मनुष्यों की ओर उन्मुख होना पड़ता है और इस तरह दोनोंका परस्पर–भावन बड़ा दृढ़मूल हो गया है। भगवान्‌ने भी कहा है—

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥

(गीता ३।११)

उनकी पुष्टि मनुष्योंके अधीन है और मनुष्यों की भी अभिलषित वस्तुएँ उनसे मिल सकती हैं—

'इष्टान् भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।'

(गीता ३।१२)

वेदों में भी देवताओं के इस परस्पर-भावन, इस अन्योन्याश्रयता का बड़े विस्तार से वर्णन है। शुक्ल यजुर्वेद के तृतीय अध्याय के ४९ वें मन्त्र में यजमान और इन्द्र का संवाद है। यजमान कहता है—

'वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जं० शतक्रतो।'

'हे शतक्रतो ! हम दोनों हवि और उसके फल का परस्पर में क्रय-विक्रय करें, मैं हवि देता हूँ, आप मुझे फल दें।'

इन्द्र उत्तर देते हैं—

'देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे।'

(शु० य० ३।५०)

'तुम हमें प्रथम हवि दो, पश्चात् तुम्हें उसका फल देंगे, तुम हमारे समक्ष हवि रखकर देखो तो हम फल देते हैं कि नहीं ?'

यजमान प्रत्युत्तर देता है—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा।'

(शु० य० ३।५०)

'आप ही प्रथम क्रेतव्य वस्तुरूप फल दे दीजिये, पश्चात् मैं उसके मूल्यस्वरूप हवि दूँगा।'

इस संवाद से परस्पर–भावन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इसी सत्य से प्रेरित होकर महर्षि सायणाचार्य ने भी बड़ी दृढ़ता से कहा है—

'तस्मान्मनुष्याणां क्रयविक्रयाविव यजमानदेवतयोर्याग-तत्फले विश्रम्भेण व्यवहर्तुं शक्येते।'

(तै० सं० का० १, प्रपा० १, अनु० १)

वेदका एक दूसरा मन्त्र बहुत स्पष्ट एवं निर्धारणात्मक शब्दों में बतलाता है कि देवता जब स्वयं प्रथम तृप्त हो चुकते हैं, तब यजमान को तृप्त करते हैं—

'तृप्त एव एनमिन्द्रः प्रजया पशुभिश्च तर्पयति।'

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यज्ञ का केवल अधिभूत ही प्रयोजन नहीं है, उसका वास्तविक प्रयोजन तो आधि-दैविक है। अतः इस सम्बन्ध में जो भ्रमात्मक धारणाएँ फैल रही हैं, उनका कोई आदर न होना चाहिये।

—:o:—

गृहस्थके पञ्चमहायज्ञका विवरण

कर्म तीन प्रकार के होते हैं—नित्य, नैमित्तिक और काम्य। जिन कर्मों के करने से किसी फल की प्राप्ति न होती हो और न

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

करने से पाप लगे, उन्हें *नित्य कहते हैं; जैसे त्रिकालसन्ध्या, पञ्च-महायज्ञ इत्यादि।

पञ्चमहायज्ञ करने से आत्मोन्नति आदि अवान्तर फल की प्राप्ति होने पर भी 'पञ्चसूना' दोष से छूटकारा पाने के लिये शास्त्रकारों की आज्ञा है कि—

'सर्वैर्गृहस्थैः पञ्चमहायज्ञा अहरहः कर्तव्याः।'

अर्थात् गृहस्थमात्र को प्रतिदिन पञ्चमहायज्ञ करने चाहिएँ। इससे यह स्पष्ट है कि पञ्चमहायज्ञ करने से पुण्य की प्राप्ति नहीं होती, किन्तु न करने से पाप का प्रादुर्भाव अवश्य होता है।

हम लोगों की जीवनयात्रा मे सहज ही हजारों जन्तुओं की प्रतिदिन हिंसा होती है; जैसे—चलने-फिरने में, भोजन के प्रत्येक ग्रास में तथा श्वास-प्रश्वास में जीव की हिंसा अवश्य होती है। प्राणधारी मनुष्य के लिये इन पापों से बचना कदापि सम्भव नहीं है। अतः इन पापों से मुक्त होने के लिये ही महामहिमशाली महर्षियों ने 'पञ्चमहायज्ञ' का विधान बताया है। भगवान् मनु कहते हैं—

पञ्चसूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः।
कण्डनी चोदकुम्भस्य बाध्यते यास्तु वाहयन्॥
तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः।
पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम्॥

(३।६८, ६९)

* पूर्व कर्मानुसार जन्म ग्रहण कर जो मनुष्य जिस कक्षा (श्रेणी) में प्रविष्ट होता है, उसमें अपनी स्थिति बनी रहे, इसके लिये ही उसे अपनी कक्षा के योग्य समस्त कर्म करने पड़ते हैं, जिससे उसका उक्त स्थानसे अधःपतन नहीं हो सकता। इसलिये नित्य कर्मोंके करनेसे पुण्यकी प्राप्ति नहीं होती, बल्कि इन्हें न करनेसे पाप अवश्य लगता है, क्योंकि उनके किये बिना उस कक्षामें स्थायी स्थिति सर्वथा असम्भव है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'प्रत्येक गृहस्थ के यहाँ चूल्हा, चक्की, बुहारी (झाड़ू), ऊखल और जलपान—ये पाँच प्रकार के हिंसा के स्थान हैं। इनसे होनेवाली हिंसाकी निष्कृति के लिये महर्षियों ने गृहस्थों के लिये प्रतिदिन पञ्चमहायज्ञ करने का विधान कहा है।'

पञ्चमहायज्ञ

पञ्चमहायज्ञ का वर्णन प्रायः सभी ऋषि-मुनियों ने अपने-अपने धर्मग्रन्थों में किया है, जिनमें से कुछ ऋषियों के वचनों को यहाँ उद्धृत किया जाता है—

'भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञः पितृयज्ञो देवयज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति।'

(शतपथब्राह्मण ११।५।५।१)

'पञ्च वा एते महायज्ञाः सतति प्रतायन्ते सतति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो मनुष्ययज्ञो भूतयज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति।'

(तैत्तिरीयारण्यक २।१०)

'अथातः पञ्चमहायज्ञा देवयज्ञो भूतयज्ञः पितृयज्ञो ब्रह्मयज्ञो मनुष्ययज्ञ इति।'

(आश्वलायनगृह्यसूत्र ३।१।१)

देवभूतपितृब्रह्ममनुष्याणामनुक्रमात्।
महासत्राणि जानीयात्त एव हि महामखाः॥

(छन्दोगपरिशिष्ट)

बलिकर्मस्वधाहोमस्वाध्यायातिथिसत्क्रियाः।
भूतपित्रमरब्रह्म मनुष्याणां महामखाः॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति, आचाराध्याय १०२)

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्॥

(मनुस्मृति ३।७०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥

(कालिकापुराण ३२।१६)

देवयज्ञो भूतयज्ञः पितृयज्ञस्तथैव च ।
नृयज्ञो ब्रह्मयज्ञश्च पञ्चयज्ञाः प्रकीर्तिताः ॥

(बृहन्नारदीय पुराण)

जो मनुष्य पूर्वकथित पञ्चमहायज्ञ के द्वारा देवता, अतिथि, पोष्यवर्ग, पितृलोक और आत्मा—इन पाँचों को अन्नादि नहीं देते, वे जीते हुए भी मरे के समान हैं अर्थात् उनका जीवन निष्फल है ।

भगवान् मनु की आज्ञा है कि—

पञ्चैतान् यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः ।
स गृहेऽपि वसन्नित्यं सूनादोषैर्न लिप्यते ॥

(मनु० ३।७१)

'जो गृहस्थ शक्ति के अनुकूल इन पञ्चमहायज्ञों का एक दिन भी परित्याग नहीं करते, वे गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी प्रतिदिन के पञ्चसूनाजनित पापके भागी नहीं होते ।'

महर्षि गर्ग ने भी कहा है—

पञ्चयज्ञांस्तु यो मोहान्न करोति गृहाश्रमी ।
तस्य नायं न च परो लोको भवति धर्मतः ॥

महर्षि हारीत ने कहा है—

यत्फलं सोमयागेन प्राप्नोति धनवान् द्विजः ।
सम्यक् पञ्चमहायज्ञे दरिद्रस्तदवाप्नुयात् ॥

'धनवान् द्विज सोमयाग करके जो फल प्राप्त करता है, उसी फलको दरिद्र पञ्चमहायज्ञ के द्वारा प्राप्त कर सकता है ।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पञ्चमहायज्ञके अनुष्ठानसे समस्त प्राणियोंकी तृप्ति होती है, इस प्रकारका सङ्केत भगवान् मनु ने मनुस्मृति के तृतीय अध्यायके ८०, ८१ और ७५ श्लोकमें किया है।

पञ्चमहायज्ञ करनेसे अन्नादिकी शुद्धि और पापोंका क्षय होता है। पञ्चमहायज्ञ किये बिना भोजन करनेसे पाप लगता है। देखिये, आनन्दकन्द भगवान् श्रीकृष्णने गीता (३।१३) में क्या कहा है—

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्॥

'यज्ञसे शेष बचे हुए अन्नको खानेवाले श्रेष्ठ पुरुष पञ्चहत्याजनित समस्त पापोंसे मुक्त हो जाते हैं, किन्तु जो पापी केवल अपने लिये ही पाक बनाते हैं, वे पापका ही भक्षण करते हैं।'

महाभारतमें भी कहा है—

अहन्यहनि ये त्वेतानकृत्वा भुञ्जते स्वयम्।
केवलं मलमश्नन्ति ते नरा न च संशयः॥

'जो प्रतिदिन इन पञ्चमहायज्ञों को किये बिना भोजन करते हैं, वे केवल मल खाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।'

अतः पञ्चमहायज्ञ करके ही गृहस्थोंको भोजन करना चाहिये। पञ्चमहायज्ञके महत्त्व एवं इसके यथार्थ स्वरूप को जानकर द्विजमात्र का कर्त्तव्य है कि वे अवश्य *पञ्चमहायज्ञ किया करें—ऐसा करनेसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी सुतरां प्राप्ति होगी।

ब्रह्मयज्ञ

वेदोंके पठन—पाठनको ‡'ब्रह्मयज्ञ' कहते हैं। वेदमें कर्मकाण्ड,

---

* पञ्चमहायज्ञको ही 'बलिवैश्वदेव' कहते हैं।

‡मनु भगवान् ने तो 'अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः' ही लिखा है, परन्तु —
'गुरावध्ययनं कुर्वञ्छुश्रूषादि समाचरेत्।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्डमें 'ज्ञान' की ही प्रधानता और परमावश्यकता बतलायी गई है। ज्ञानके ही कारण जीवान्तर की अपेक्षासे मनुष्य-देह उत्तम माना गया है। शास्त्रोक्त सदाचार तथा धर्मानुष्ठानमें तत्पर रहना ही मनुष्यकी मनुष्यता है और वही मनुष्य वास्तविक मनुष्यत्वका अधिकारी समझा जाता है। इसके बाद कर्मकाण्डद्वारा अन्तःकारणकी शुद्धि हो जाने पर मनुष्य उपासनाकाण्डका अधिकारी बनता है, तदनन्तर भगवत्कृपाकटाक्षके लेशसे ज्ञान प्राप्त कर मुक्त हो जाता है। यह मनुष्योंका सामान्य उन्नतिक्रम है। क्रमिक उन्नति में ज्ञानका प्राधान्य है। अतः सभी अवस्थाओंमें ज्ञानकी आवश्यकता है। इसलिये प्रथमावस्थामें भी ज्ञानके बिना असदाचरणका परित्याग तथा धर्मानुष्ठानमें प्रवृत्ति कदापि नहीं हो सकती।

'बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति।'

(मनु० २।२१५)

इस उपदेश के अनुसार बलवान् इन्द्रियसमूह उसमें प्रतिबन्धक अवश्य हैं, तथापि इन्द्रियाँ प्रथमावस्थामें मनुष्यको अपनी ओर प्रवृत्त करती हैं न कि धर्मानुष्ठानादिमें। इसी समय माता, पिता तथा गुरुजन भी धर्मानुष्ठानमें प्रवृत्त तथा अधर्मानुष्ठानमें निवृत्त करते हैं। इस प्रकार सभी अवस्थाओंमें ज्ञानकी ही प्रधानता सिद्ध होती है। अतएव ज्ञानयज्ञरूप स्वाध्याय (वेद-शास्त्रोंका पठन-पाठन) करना चाहिये। अशक्तिमें गायत्री-जपमात्र करना चाहिये।

ब्रह्मयज्ञ करनेसे ज्ञानकी वृद्धि होती है। ब्रह्मयज्ञ करनेवाला मनुष्य ज्ञानप्रद महर्षिगणका अनृणी और कृतज्ञ हो जाता है।

स सर्वो ब्रह्मयज्ञः स्यात्तपः परममुच्यते ॥'

इस कुल्लूक भट्टकृत भाष्यके अनुसार अध्ययनको 'ब्रह्मयज्ञ' कहते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

देवयज्ञ

अपने इष्टदेवकी उपासनाके लिये परब्रह्म परमात्माके निमित्त अग्निमें किये हुए हवनको 'देवयज्ञ' कहते हैं।

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥

(गीता ९।२७)

भगवान्के इस वचनसे सिद्ध होता है कि परब्रह्म परमात्मा ही समस्त यज्ञोंके आश्रयभूत हैं। इसलिये ब्रह्मयज्ञमें ऋषिगण, पितृयज्ञमें अर्यमादि नित्य पितृगण और परलोकगामी नैमित्तिक पितृगण, भूतयज्ञमें देवरूप अनेक प्राणियोंको जानकर **'यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वम्'** (गी० १०।४१) इस गीतोक्त भगवद् वचनके अनुसार ईश्वर-विभूतिधारी देवताओंकी जो-जो पूजा कीजाती है, वह सर्वव्यापक अन्तर्यामी परमात्माकी अर्चना (पूजा) के अभ्यासके लिये ही की जाती है।

नित्य और नैमित्तिक-भेदसे देवता दो भागों में विभक्त हैं, उनमें रुद्रगण, वसुगण और इन्द्रादि नित्य देवता कहे जाते हैं और ग्रामदेवता, बनदेवता तथा गृहदेवता आदि नैमित्तिक देवता कहे जाते हैं। दोनों तरहके ही देवता इस यज्ञसे तृप्त होते हैं। जिन देवताओं की कृपासे जड़भावको प्राप्त होते हुए भी विनश्वर कर्मफल उत्पन्न हो रहा है, जिनकी कृपासे समस्त सुख-शान्तिकी प्राप्ति होती है, जिनकी कृपासे संसार के समस्त कार्यकलाप की भलीभाँति उत्पत्ति और रक्षा होती है, उन देवताओंसे उऋण होनेके लिये देवयज्ञ करना परमावश्यक है।

देवयज्ञसे नित्य और नैमित्तिक देवता तृप्त होते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भूतयज्ञ

कृमि, कीट, पतङ्ग, पशु और पक्षी आदि की सेवाको 'भूतयज्ञ' कहते हैं।

ईश्वररचित सृष्टि के किसी भी अङ्ग की उपेक्षा कभी नहीं की जा सकती, क्योंकि सृष्टि के सिर्फ एक ही अङ्ग की सहायता से समस्त अङ्गों की सहायता समझी जाती है, अतः 'भूतयज्ञ' भी परम धर्म है।

प्रत्येक प्राणी अपने सुख के लिये अनेक भूतों (जीवों) को प्रतिदिन क्लेश देता है, क्योंकि ऐसा हुए बिना क्षणमात्र भी शरीर-यात्रा नहीं चल सकती।

प्रत्येक मनुष्यके निःश्वास-प्रश्वास, भोजन-प्राशन, विहार-सञ्चार आदि में अगणित जीवों की हिंसा होती है। निरामिष भोजन करनेवाले लोगों के भोजन के समय भी अगणित जीवों का प्राण-वियोग होता है, आमिषभोजियों की तो कथा ही क्या है? अतः भूतों (जीवों) से उऋण होने के लिये *'भूतयज्ञ' करना आवश्यक है।

भूतयज्ञसे कृमि, कीट, पशु, पक्षी आदिकी तृप्ति होती है।

पितृयज्ञ

अर्यमादि नित्य पितरों की तथा परलोकगामी नैमित्तिक पितरों की पिण्डप्रदानादि से किये जानेवाले सेवारूप यज्ञको 'पितृयज्ञ' कहते हैं।

---

* देवेभ्यश्च हुतादन्नाच्छेषाद् भूतबलिं हरेत्।
अन्नं भूमौ श्वचाण्डालवायसेभ्यश्च निःक्षिपेत्॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति)

'देवयज्ञसे बचे हुए अन्नको जीवोंके लिये भूमि पर डाल देना चाहिये और वह अन्न पशु, पक्षी एवं गौ आदिको देना चाहिये।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सन्मार्गप्रवर्त्तक माता-पिताकी कृपासे असन्मार्ग से निवृत्त होकर मनुष्य ज्ञान की प्राप्ति करता है, फिर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि सकल पदार्थों को प्राप्त कर मुक्त हो जाता है। ऐसे दयालु पितरों की तृप्ति के लिये, उनके सम्मान के लिये, अपनी कृतज्ञता के प्रदर्शन तथा उनसे उऋण होने के लिये 'पितृयज्ञ' करना नितान्त आवश्यक है।

पितृयज्ञ से समस्त लोकों की तृप्ति और पितरों की तुष्टि की अभिवृद्धि होती है।

मनुष्ययज्ञ

क्षुधा से अत्यन्त पीड़ित मनुष्य के घर आ जाने पर उसकी भोजनादि से की जानेवाली सेवारूप यज्ञ को 'मनुष्ययज्ञ' कहते हैं।

अतिथि के घर आ जाने पर वह चाहे किसी जाति या किसी भी सम्प्रदाय का हो, उसे पूज्य समझ कर उसकी पाद्य और अर्घ्यादि से समुचित पूजा कर उसे अन्नादि देना चाहिये। इस विषय की पुष्टि भगवान् मनु ने भी अपनी स्मृति के तीसरे अध्याय (३।९९–१०२, १०७, १११) में विशदरूप से की है। इससे यह सिद्ध हुआ कि पृथ्वी के सभी समाज–वालों को अतिथि–सेवारूप धर्म का परिपालन अवश्य करना चाहिये।

प्रथमावस्था में मनुष्य अपने शरीरमात्र के सुख से अपने को सुखी समझता है, फिर अपने पुत्र, कलत्र, मित्रादि को सुखी देखकर सुखी होता है। तदनन्तर स्वदेशवासियों को सुखी देखकर सुखी होता है। इसके बाद पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने पर वह समस्त लोकसमूह को सुखी देखकर सुखी होता है। परन्तु वर्त्तमान समय में एक मनुष्य समस्त प्राणियों की सेवा नहीं कर सकता, इसलिये यथाशक्ति अन्न-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दान द्वारा मनुष्यमात्र की सेवा करना ही 'मनुष्ययज्ञ' कहा जाता है। मनुष्ययज्ञ से धन, आयु, यश और स्वर्गादि की प्राप्ति होती है।

—:०:—

सर्वं यज्ञमयं जगत्

कालिकापुराण (३१।४०) में लिखा है कि **'सर्वं यज्ञमयं जगत्'**—यह सम्पूर्ण जगत् यज्ञमय है। सन्ध्या, तर्पण, बलिवैश्वदेव, देवपूजन, अतिथिसत्कार, व्रत, जप, तप, कथाश्रवण, तीर्थयात्रा, अध्ययनाध्यापन, खान-पान, शयन, जागरण आदि नित्य और उपनयन, विवाह-संस्कार आदि नैमित्तिक एवं पुत्रेष्टि, राज्यप्राप्ति आदि काम्यकर्म—सभी यज्ञस्वरूप ही हैं। इतना ही नहीं, जीवन-मरण तक को भी यज्ञ का स्वरूप दिया गया है। गीता (४।४८) में भगवान् ने भी द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, योगयज्ञ, स्वाध्याययज्ञ आदि का उल्लेख करके इन सभी को यज्ञ का ही रूप दिया है।

गीता (२।३१) में भगवान् ने गर्भाधान और युद्ध को भी यज्ञ बतलाते हुए मनुष्य के धर्म-समन्वित सभी कर्मों को यज्ञ का रूप दिया है। उसका (गीता ३।९) कहना है—

'यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।'

अर्थात् मनुष्य के समस्त कर्म यज्ञ के लिये ही होने चाहिएँ। इस तरह मनुष्य के धर्म-समन्वित सभी सत्कर्म यज्ञ हो सकते हैं, बशर्ते वे स्वेच्छाचारिता से प्रेरित न होकर वेदादि सद्ग्रन्थों पर आधृत हों। शास्त्रों के अनुकूल होनेवाले यज्ञ ही फलप्रद और महत्त्वप्रद होते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हिन्दूधर्म में गृहस्थ-जीवन को भी एक यज्ञ का स्वरूप दिया गया है। इस यज्ञ में विवाहिता धर्मपत्नी को जीवनपर्यन्त अपने पति की सदा सेवा, सहायता और आज्ञा का पालन करना पड़ता है। महाकवि कालिदास ने गृहस्थाश्रम में परिनिष्ठित आदर्श पति-पत्नी का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है—

विधेः सायन्तनस्यान्ते स ददर्श तपोनिधिम् ।
अन्वासितमरुन्धत्या स्वाहयेव हविर्भुजम् ॥

(रघुवंश १।५६)

गृहस्थ-धर्म के महान् आदर्शस्वरूप भगवान् राम ने अपने पिता दशरथ की आज्ञा से चौदह वर्ष का जो 'वनवास' स्वीकार किया था, उस यज्ञ को साङ्गोपाङ्ग परिपूर्ण करने के लिये ही 'सीता वन-वास' हुआ था। भगवान् राम के सेवार्थ सीता का वनवास भी एक महान् यज्ञ था, जिस यज्ञ को हिन्दू-जाति कभी भी भूल नहीं सकती।

इसी प्रकार भगवान् शङ्करद्वारा माता पार्वती का भगवान् राम की कथा का श्रवण करना और भगवान् कृष्ण का धर्मसंस्थापनार्थ अवतार लेकर गो-सेवा करना, साधु-सन्तों का दुःखों से उद्धार करना और माता, पिता, आचार्य आदि गुरुजनों की सेवा करना—ये सभी यज्ञ ही कहे जायँगे।

भगवान् राम का पूरा जीवन ही यज्ञमय था और उसीसे आज हम भगवान् राम को आदर्श और पूज्य मानकर उनकी पूजा करते हैं। इसी प्रकार भगवान् कृष्ण का भी जीवन यज्ञमय था, जिस कारण आज हम उनकी यज्ञपुरुष भगवान् के रूप में पूजा-अर्चा करते हैं—**'यज्ञो वै विष्णुः'** (शतपथ ब्रा० १।१।२।१३)। इस तरह स्पष्ट है कि जिस प्रकार भगवान् राम और कृष्ण ने अपना

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

समूचा जीवन यज्ञमय बिताया था, उसी प्रकार हमें भी अपना समग्र जीवन यज्ञमय बिताना चाहिये।

ब्रह्मचर्य को भी यज्ञ कहा गया है। ब्रह्मचर्यरूपी यज्ञकी साधना बड़ी कठिन है। इसकी साधन-सिद्धिमें बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी असफल हो जाते हैं। जो लोग ब्रह्मचर्यरूपी यज्ञपर विजय प्राप्त कर लेते हैं वे विश्वविजयी बन जाते हैं और उनका जीवन दिव्य और बलिष्ठ बन जाता है। ब्रह्मचर्यरूपी यज्ञ की साधनाद्वारा देवताओंने मृत्युको भी जीत लिया था। भीष्मपितामहकी ब्रह्मचर्य-साधना तो प्रसिद्ध ही है, जिन्होंने ब्रह्मचर्य-व्रतपालन के प्रभाव से मृत्युको अपने वश में कर लिया था। केवल ब्रह्मचर्य ही ऐसा महान् यज्ञ है जिसके ठीक पालनसे गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और संन्यासाश्रम तक सुखद और सुव्यवस्थित बन जाते हैं। अतः हमें भी ब्रह्मचर्यरूप यज्ञका पालन और संरक्षण करते हुए उसकी जड़को सर्वदा सुदृढ़ रखना चाहिये, जिससे हमारी सभी कामनाएँ सिद्ध हों।

भगवत्प्रार्थना भी एक महान् यज्ञ है। भगवत्प्रार्थनारूपी यज्ञसे अनेक लाभ होते हैं। महात्मा गान्धी तो प्रार्थनारूप यज्ञके मूर्तिमान् स्वरूप थे। वे प्रार्थना को अपना परम धर्म और परम कर्त्तव्य समझते थे। प्रार्थनाके बिना वे जीवन व्यर्थ समझते थे। उन्हें प्रार्थना से सुख-शान्ति मिलती थी। इसीलिये वे प्रतिदिन नियत समय पर प्रार्थना-सभामें सम्मिलित होकर भगवच्चिन्तन करते थे। अनेक अत्यावश्यक कार्यों को छोड़कर भी समय पर वे प्रार्थनामें सम्मिलित होते थे। यही कारण था कि उनके प्राणोंका विसर्जन (आहुति) भी भगवत्प्रार्थना करते समय भगवान् का पावन नाम 'राम-राम' उच्चारण करते हुए हुआ था। गान्धीजीका यह देवतुल्य प्राण-विसर्जन यज्ञमय ही था, जो बड़े-बड़े ज्ञानी विद्वानों को भी दुर्लभ है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

धर्मार्थ बलिदानको भी यज्ञ कहा गया है। हमारा देश सदैवसे धर्मप्रधान रहा है। हमारे देशमें धर्मवीरोंकी कमी नहीं रही है। इस देशके वासी धर्मके रक्षार्थ समय-समय पर हँसी-खुशीसे अपने अपने सिर दे देते थे, जिनकी पवित्र गाथाओंसे हमारे इतिहासके पृष्ठ गौरवान्वित हैं। धर्मप्रेमियोंका स्वधर्मकी रक्षाके लिये,मानवता की रक्षाके लिये, गो-ब्राह्मणकी रक्षाके लिये, देवमन्दिरोंकी रक्षाके लिये और देशको स्वातन्त्र्य दिलानेके लिये अपने शरीरका बलिदान देना भी यज्ञ है। आजके युगमें धर्मरक्षार्थ बलिदान-यज्ञ दुर्लभ हो गये हैं और अब इन महान् बलिदान-यज्ञों की कथामात्र शेष रह गई है।

समाज-सेवाको भी यज्ञ कहा गया है। मानव के लिये समाज-सेवारूपी यज्ञ बहुत ही आवश्यक और कल्याणकारी है। मानव-शरीर पाकर केवल अपना उदर-पोषण करना, अपना स्वार्थ-साधन करना और अपना ही हित-साधन करना मानव-जीवन का उद्देश्य नहीं है। मानव-जीवन व्यक्तिशः अपने लिये ही न होकर समस्त समाज के हित के लिये होना चाहिये। अतः जो मनुष्य समाज-सेवा को यज्ञ का रूप देकर समाज के हित का ध्यान रखता है, समाज की चिन्ता करता है एवं समाज की सेवा और रक्षा में अपने जीवन को होम देता है, वही सच्चा याज्ञिक है और उसीका जीवन यज्ञमय कहा जाता है। समाज-सेवारूपी यज्ञ यदि निष्काम-भाव से किया जाय, तो वह मनुष्य को अनन्त सुख-शान्ति प्रदान करता है।

परोपकार की भी यज्ञ में गणना की गई है। शास्त्रों में परोपकाररूपी यज्ञ की विशेष महिमा लिखी है। मनुष्य-शरीर पाकर जिसने परोपकार जैसा महत्त्वपूर्ण यज्ञ नहीं किया, उसका जीवन ही व्यर्थ है। अतः परोपकार-यज्ञ को अवश्य अपनाना चाहिये। परोपकार-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ को अपनाने से मानव-जीवन सार्थक और प्रशंसनीय होता है। यह परोपकार-यज्ञ विभिन्न रूपों में किये जा सकते हैं। जैसे—दूसरों के सुख-दुःख को अपना सुख-दुःख समझकर उनके सुख-दुःख में सदा काम आना, दूसरों के हित में सदा तत्पर रहना और दूसरों की सेवा-शुश्रूषार्थ सदा संलग्न रहना, ये भी यज्ञ कहे जाते हैं। इसी प्रकार भूमिहीनों को भूमि देना, निर्धनों को धन देना, निर्बलों को विविध रूप में बल प्रदान करना, विद्याहीनों को विद्या देना, साधन-हीनों को साधनसम्पन्न करना और दीन-हीन अनाथों का पालन करना भी परोपकारमय यज्ञ कहे जाते हैं। आज के युग में इन्हीं परोपकारी यज्ञों की विशेष आवश्यकता है।

भूदान (पृथ्वीदान), गृहदान, द्रव्यदान, विद्यादान, अन्नदान, श्रमदान, वाणीदान (धर्मोपदेश) और अभयदान—ये सभी यज्ञ कहे जाते हैं। ये दानात्मक यज्ञ नये नहीं, सनातन, अत्यन्त प्राचीन हैं। जिस प्रकार आज स्वतन्त्र भारत में त्यागी विरक्त शान्ति-सेनानी श्री विनोबा भावे द्वारा 'भूदानयज्ञ' बहुत प्रगति से चल रहा है, उसी प्रकार पूर्वकाल में भी भूदान, गृहदान आदि अनेक प्रकार के लोकोपकारक यज्ञ विश्वकल्याणार्थ हुआ करते थे। किन्तु आज के स्वार्थ-परायण अब इन लोकोपकारक यज्ञों को सर्वथा भूल गये। पहले जब ये लोकोपकारक यज्ञ हुआ करते थे, उस समय हमारा यह देश सब प्रकार से समृद्ध और सुखी था। यदि हम पुनः भूदान-यज्ञ, गृहदान-यज्ञ, अन्नदान-यज्ञ और द्रव्यदान-यज्ञ जैसे लोकोपकारी यज्ञों को अपना लें, तो हमारा देश पुनः उन्नति के शिखर पर आरूढ़ हो सकता है।

महात्मा गान्धीजी के अहिंसा और सत्यपालनरूपी दो यज्ञ विश्व-विख्यात हैं। महात्मा गान्धी ने इन्हीं दो यज्ञों को अपनाकर हमारे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भारतवर्ष को परतन्त्रता की कठिन बेड़ी से मुक्त कराकर स्वतन्त्र कर दिया था। उनकी कृपा से आज हमारा भारतवर्ष और हम स्वतन्त्र हैं। आज के स्वातन्त्र्य युग में अहिंसा और सत्यपालन जैसे यज्ञों की विशेष आवश्यकता है। किन्तु इन यज्ञों में निःस्वार्थ भाव की प्रधानता के साथ जगत्कल्याण की भावना विशेष रूप से निहित होनी चाहिये। जो यज्ञ जगत्कल्याण की भावना से भूषित होंगे, वे ही यज्ञ देश और समाज का कल्याण कर सकते हैं। अन्यथा यज्ञों से देश और समाज का कल्याण होना तो दूर रहा, प्रत्युत वे देश और समाज के सम्मुख विशेष अश्रद्धा की वस्तु बन जायँगे।

आजकल दरिद्रनारायणों को भोजन कराने की विशेष प्रथा प्रचलित है। दरिद्रनारायणों को भोजन कराना भी एक प्रकार का 'यज्ञ' ही है।

शास्त्रों में 'नारायण' शब्द की विशेष महिमा है। 'नारायण' शब्द जिस शब्द के साथ जोड़ दिया जाता है, उस शब्द की भी महिमा बढ़ जाती है और वह शब्द 'देवमय' अथवा 'यज्ञमय' बन जाता है।

'नारायण' शब्द 'दरिद्र' शब्द के साथ लग जाने से 'दरिद्र-नारायण' बन जाता है, जो कि भगवान् 'नारायण' के नाम को व्यक्त करता है। नारायण शब्द की एक विचित्र बात यह है कि वह 'दरिद्र' शब्द के साथ लगकर जितना सुन्दर और श्रेष्ठ लगता है, उतना 'धनिक' शब्द के साथ लगकर श्रेष्ठ और शोभायमान नहीं लगता। यदि 'नारायण' शब्द को 'धनिक' शब्द के साथ सम्बन्धित कर दिया जाय, तो 'धनिक नारायण' शब्द होगा, किन्तु उसका वह महत्त्व नहीं होता, जो 'दरिद्र-नारायण' शब्द के साथ जुड़कर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

होता है। यही कारण है कि जिस प्रकार नारायण शब्द 'दरिद्र' शब्द के साथ जुड़ने से शोभा देता है, उस प्रकार वह 'धनिक' शब्द के साथ जुड़ने से शोभा नहीं देता। वस्तुतः नारायण-शब्द की महत्ता और मान्यता जितनी 'दरिद्र' शब्द के साथ हो सकती है, उतनी 'धनिक' शब्द के साथ नहीं हो सकती। क्योंकि दरिद्र व्यक्ति ही ठीक-ठीक 'नारायण' का स्मरण कर सकता है, धनिक नहीं कर सकता। अतः 'नारायण' भी सर्वदा 'दरिद्र' का ही साथ देते हैं, 'धनिक' का नहीं। अतः भगवान् के प्रत्यक्ष दर्शन दरिद्रों (निर्धनों) में ही हो सकते हैं, धनिकों में नहीं। इसलिये भगवान् के प्रतिनिधि-स्वरूप दरिद्रनारायणों की सहायता और सेवा विशेष रूप से करनी चाहिये। दरिद्रनारायणों की सेवा साक्षात् भगवान् की सेवा है।

वेदों, उपनिषदों एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में भी लिखा है कि मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन ही यज्ञमय है। यदि मनुष्य अपना जीवन शास्त्रोक्त विधि से व्यतीत करे तो उसका जीवन यज्ञमय बन जाता है। देखिये, उपनिषद् क्या कहती है—

'पुरुष का जीवन निश्चित ही एक यज्ञ है। पुरुष की आयु के जो प्रथम चौबीस वर्ष हैं, वे प्रातःसवन हैं। पुरुष की आयु के जो अग्रिम चौवालीस वर्ष हैं, वे माध्यन्दिन सवन हैं और पुरुष की आयु के जो अग्रिम अड़तालीस वर्ष हैं, वे तृतीय-सवन हैं। इस प्रकार पुरुष के जीवन में ११६ वर्ष पर्यन्त चलनेवाला यज्ञ कहा गया है। अतः जो पुरुष अपने जीवन के प्रारम्भिक चौवालीस वर्षों में प्रातः-सवन की, उसके बाद वाले चौवालीस वर्षों में माध्यन्दिन सवन की और अन्तिम अड़तालीस वर्षों में तृतीय सवन की भावना करता हुआ शास्त्रोक्त विधि से जीवन व्यतीत करता है, वह ११६ वर्ष तक

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्वस्थतापूर्वक जीवित रहता है और वह अल्पायु को प्राप्त नहीं होता[1]।' (छान्दोग्योपनिषद् ३।१६)

'हे गौतम ! पुरुष ही अग्नि है, उसकी वाणी ही समिधा है, प्राण धूम है, जिह्वा ज्वाला है, चक्षु अङ्गारे हैं, कान चिनगारियाँ हैं, उसी अग्नि में देवगण अन्न का होम करते हैं, उस आहुति से वीर्य उत्पन्न होता है।

'हे गौतम ! स्त्री ही अग्नि है, उसका उपस्थ (लिङ्गेन्द्रिय) ही समिधा है, पुरुष जो उपमन्त्रण (रहः-संल्लाप) करता है वह धूम है, योनि ज्वाला है, प्रसङ्ग (मैथुन) अङ्गारे हैं और उससे जो विषयजन्य सुख प्रतीत होता है, वह चिनगारियाँ हैं, उसी अग्नि में देवगण वीर्य का हवन करते हैं। उस आहुति से गर्भ उत्पन्न होता है।' (छान्दोग्योपनिषद् ५।७–८)

'हमलोग प्रतिदिन भोजन करते हैं। भोजन के समय यदि हम प्रारम्भमें पाँच ग्रासोंका शास्त्रीय विधिसे भोजन करें तो हमारा भोजन 'अग्निहोत्र-यज्ञ' बन जाता है, जिससे हमें सन्तति, पशु, अन्न, तेज और ब्रह्मतेजकी प्राप्ति होती है और हमारे समस्त पाप-ताप नष्ट हो जाते हैं।' (छान्दोग्योपनिषद् ५।१८-२४)

१-श्रौतयज्ञों में प्रातःसवन, माध्यन्दिनसवन और तृतीयसवन—ये तीन सवन होते हैं। इनमें प्रातःसवन का सम्बन्ध चौबीस अक्षरवाले गायत्री छन्द और वसु देवताओं से है। माध्यन्दिन सवन का सम्बन्ध चौवालीस अक्षरवाले त्रिष्टुप् छन्द और रुद्र देवताओंसे है और तृतीय सवनका सम्बन्ध अड़तालीस अक्षर वाले जगती छन्द और आदित्य देवताओं से है। इन तीनों सवनों के देवता शास्त्रोक्त विधि से यज्ञमय जीवन व्यतीत करने वाले पुरुषों के कष्टों को दूर कर नीरोग बनाते हैं, जिनसे मनुष्य ११६ वर्ष पर्यन्त जीवित रहता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'द्युलोक, पर्जन्य, पृथ्वी, पुरुष और पत्नीमें यज्ञ की भावना प्रदर्शित की गई है। इनमें ठीक-ठीक यज्ञ का अनुसन्धान किया जाय तो अनुसन्धानकर्त्ता को ब्रह्म-लोक की प्राप्ति होती है जिससे वह जनन-मरणके बन्धनसे मुक्त हो जाता है।' (बृहदारण्यकोपनिषद् ६।२।६–१५)

'पुरुष ही यज्ञ है। क्योंकि पुरुष ही यज्ञ को करता है और पुरुष उतना ही सत्कर्म करता है जितना वह स्वयं होता है। अतः पुरुष ही यज्ञ है।' (शतपथ ब्रा० १।३।२)

जिस प्रकार मनुष्योंका यज्ञ नित्य हुआ करता है, उसी प्रकार प्रकृतिका भी यज्ञ नित्य हुआ करता है। जैसे––आकाश में जो सूर्य है, उसे 'यज्ञ-कुण्ड' कहा जाता है। उसमें जो जल है उसे 'हवनीय पदार्थ' कहा गया है। सूर्य अपनी स्वर्णमयी किरणों द्वारा समस्त प्राणियों तथा वनस्पतियोंको प्रकाश और उष्णता देकर जीवन-शक्ति देता है। इसीलिये सूर्यको प्राणिमात्र का जीवन कहा है—

'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।' (शु० यजु० ७।४२)

पृथ्वीको 'यज्ञ-कुण्ड' कहा गया है, उसमें बीजका वपन करना 'आहुति' डालना कहा गया है। जिस प्रकार अग्निमें डाला हुआ 'हवनीय पदार्थ' भस्म होकर देवताओंको प्राप्त होता है और उससे देवगण प्रसन्न होकर समस्त विश्वका कल्याण करते हैं, उसी प्रकार पृथ्वीमें डाला हुआ बीज भी मिट्टीमें मिलकर सूर्य, जल और वायु आदि देवताओंकी सहायतासे वृक्ष, लता आदि रूपोंमें परिणत होकर विविध पुष्पों, फलों और अन्नों-द्वारा प्राणिमात्रका कल्याण करते हैं।

जिस प्रकार प्रकृतिका यज्ञ नित्य-निरन्तर हुआ करता है उसी प्रकार देवताओंका भी यज्ञ नित्य-निरन्तर चलता रहता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जैसे—सूर्यदेव हमें प्रकाश देते हैं, चन्द्रमा हमें शीतलता देते हैं, अग्नि हमें उष्णता देते हैं, वायु प्राणशक्ति (जीवनशक्ति) देते हैं, गङ्गा आदि नदियाँ हमें सुमधुर पवित्र जल देती हैं, वृक्ष हमें फल, पुष्प और छाया देते हैं और पृथ्वी हमें चलने-फिरने एवं निवासके लिये स्थान देती है तथा भोजनके लिये अन्न, फल आदि पदार्थोंको देती है। इस प्रकार जगत्कल्याणार्थ देवताओंका विविध रूपमें यज्ञ चलता रहता है।

गीतामें भगवान्के—

'यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥'
(९।२७)

'मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।'
(९।३४)

—इत्यादि वचनोंसे सिद्ध होता है कि संसारके समस्त पदार्थ यज्ञ-स्वरूप हैं और उन समस्त यज्ञोंके आश्रयभूत परब्रह्म परमात्मा ही हैं।

'मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।'
(गीता ७।७)

'अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।'
(गीता १०।८)

इस प्रकार जब सांसारिक सभी चल-अचल वस्तुएँ यज्ञ ही हैं तब उन सभी यज्ञोंका अनुष्ठान सविधि और सनियम करना चाहिये, जिससे वे यज्ञ मानव-मात्रके लिये कल्याणकारी बनें। जो लोग

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञोंके प्रति श्रद्धा नहीं रखते, वे विविध अनर्थों के शिकार बनते हैं और ऐसे लोगों के लिये ही **'नास्ति यज्ञसमो रिपुः'** कहा गया है।

मानवता और यज्ञ

मनुसे उत्पन्न *'मानव' कहलाते हैं—**'मनोर्जातास्तु मानवाः'**। मानव में रहनेवाले दया, दान, शील, सौजन्य, क्षमा आदिके समवायरूप लोकोपकारक धर्मको 'मानवता' कहते हैं। इसके विपरीत धर्म (तत्त्व) को 'पशुता' कहते हैं।

'अयं मानवः' यह व्यवहार किस वस्तुको देखकर किया जाता है, इस विषयपर विभिन्न विचार उपस्थित हो सकते हैं। जैसे उदाहरणतः कुछ लोग **'आकृतिग्रहणा जातिः'** (व्याकरण महाभाष्य) इस सिद्धान्तसे मनुष्यके आकार-प्रकारको देखकर उद्बुद्ध होनेवाली जो मनुष्यत्त्व जाति है, उसीको मनुष्य-शब्दका प्रयोजक धर्म कहते हैं, किन्तु व्यवहारमें जब कोई किसी मनुष्यको देखकर कहता है कि 'यह मनुष्य है' तो यहाँ पर मनुष्यत्व—जाति मनुष्य-शब्दार्थ प्रयोगका हेतु नहीं है, बल्कि मनुष्यमें रहनेवाला वह एक असाधारण धर्म है, जिसे 'मानवता' कहते हैं। जो सत्यवाक्य हो, दृढ़व्रत हो, निर्भीक हो, धर्मज्ञ हो, धर्मतत्पर हो तथा कृतज्ञ हो, ऐसे महापुरुषमें रहनेवाले धर्म—विशेषको 'मानवता' कहते हैं, न कि

---

* मनुष्या मानुषा मर्त्या मनुजा मानवा नराः।
(अमरकोश, मनुष्यवर्ग १)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

समस्त पामरापामरमें रहनेवाले आकृत्या व्यङ्ग्य मनुष्यत्त्व जातिमें रहनेवाले धर्मको। जिस प्रकार '**रविकिरणानुगृहीतानि भवन्ति कमलानि कमलानि**' इत्यादि वाक्योंमें द्वितीय कमलका ही लक्षणया सौरभादि समुचित गुणोंसे विशिष्ट कमलका अर्थ किया जाता है, ठीक उसी प्रकार किसी मनुष्य-विशेषके लिये '**मानवोऽयम्**' यह व्यवहार किया जाता है। यहाँ मनुष्य शब्दका लोक और शास्त्र उभयसम्मत अनन्त उज्ज्वल गुणविशिष्ट मनुष्य, यही अर्थ किया जाता है। मानव-सम्बन्धी इन्हीं उज्ज्वल गुणोंको 'मानवता' शब्दसे पुकारा जाता है।

मानवता—गुण-विशिष्ट मानवमें सत्त्वगुणकी प्रधानता होती है, जिससे उसमें त्याग, तप, सत्य, सदाचार, परोपकार और अहिंसादि शम-दम—ये गुण स्वभावतः पाये जाते हैं। मानवता-गुण-विशिष्ट व्यक्ति सर्वदा सिद्धसङ्कल्प, सर्वसुहृद्, समदर्शी और सर्वहितैषी होता है। वह आत्मा और परमात्मामें भेद नहीं समझता। वह धर्मके बल पर सदा निर्भय रहता है और '**आत्मवत् सर्वभूतेषु**' के अनुसार प्राणिमात्रको अपना समझकर उनपर दया और प्रेमभाव रखता है। वह अपने प्रत्येक कार्यमें लोकोपकारकी सद्भावनाका ध्यान रखता हुआ प्राणिमात्रके लिये '**सर्वे भवन्तु सुखिनः**' की कामना करता है।

कलियुग तमःप्रधान युग है, इसमें पापका स्रोत प्रवलरूपसे प्रवाहित रहता है। इस पापरूपी प्रवाहमें प्रवाहित होकर मानव अपने वास्तविक धर्म-कर्मसे विमुख हो गया है, जिससे उसकी मानवताका भी ह्रास होता जा रहा है। मानवताके ह्राससे मानव अपने आदर्शोंसे च्युत होकर संसारकी दृष्टिमें भी गिर जाता है।

प्राचीनकाल में मानव अपनी मानवता की सर्वात्मना रक्षा करते

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

थे। वे मानवताको अपना परम धन और परम धर्म समझते थे। वे मानवताके बलपर अपना और संसार का कल्याण करते थे। आजके मानव मानवताको खोकर दूसरोंका तो क्या, अपना कल्याण करनेमें भी सर्वथा असमर्थ पाये जाते हैं। मानवताके ह्रास-से देश और समाजकी बहुत बड़ी क्षति होती है। अतः मानवताकी रक्षा और उसका परिज्ञान प्रत्येक मानवको होना ही चाहिये, क्योंकि मानवता ही मानव और अमानवका परिचय कराती है। मानवताके अज्ञानसे मनुष्य भूलकर कभी अमानवको 'मानव' मान ले, तो उसका अनिष्ट होना दुर्निवार है, जिससे वह विभिन्न प्रकारकी आपत्ति, धोखे और कष्टका शिकार बन सकता है। अतः मानवमात्रको मानवताका ज्ञान होना परमावश्यक है, क्योंकि मानवता ही मानवको स्वाभिमानकी प्रेरणा देती है, जिससे वह अपने सम्मानपूर्ण जीवनके लिये प्रेरित होकर स्वतन्त्रताकी प्राप्ति और परतन्त्रताकी निवृत्ति के लिये प्रयत्न करता है।

मानव-जीवनमें मानवताकी विशेष आवश्यकता है। संसार में जिन महापुरुषोंने यश-कीर्तिकी प्राप्ति की है और जो आज भी कर रहे हैं, वह केवल मानवताके बल पर। मानवताके बिना हमारा ज्ञान-विज्ञान, धर्माधर्म, विशिष्ट पाण्डित्य और परोपदेश आदि सभी व्यर्थ हैं। अतः मानवताके रक्षण और पालन पर मानव-को विशेष ध्यान देना चाहिये।

आज 'स्वराज्य-प्राप्ति' अर्थात् देशके स्वतन्त्र होनेके बाद भी हमारे देशमें जो अनेक प्रकारके अनर्थ हो रहे हैं, वे एकमात्र मान-वताके ह्राससे। प्राचीन ऋषि-महर्षियों, विद्वानों तथा आधुनिक विज्ञानवादियोंका कथन है कि 'मानवकी सर्वविध उन्नतिका एक-मात्र साधन उसकी मानवता है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

संसारकी सभी वस्तुएँ आधेय और आधार पर निर्भर रहा करती हैं। अतः आधेयका आधारके बिना काम नहीं चल सकता और आधारका आधेयके बिना काम नहीं चल सकता। ठीक यही व्यवस्था मानवकी भी है। मानव आधेय है और उसकी मानवता आधार है। मानवतारूप आधारके बिना आधेय अर्थात् मानवकी रक्षा कथमपि नहीं हो सकती। अतः धार्मिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक——सभी दृष्टियोंसे मानवको सर्वात्मना अपनी मानवताकी रक्षा करनी चाहिये।

जिस प्रकार मानवके लिये अपने जीवनमें मानवताका रक्षण और पालन आवश्यक है, उसी प्रकार उसके लिये यज्ञका रक्षण और पालन भी परमावश्यक है। यज्ञके बिना मानवकी और मानवमें रहनेवाली मानवताकी रक्षा कथमपि नहीं हो सकती। अतः मानवको अपने जीवनके सर्वविध कल्याणार्थ यज्ञ-धर्मको अपनाना चाहिये। मानवका और यज्ञका परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध सृष्टिके प्रारम्भ कालसे ही चला आ रहा है। वस्तुतः देखा जाय तो मानव-जातिके जीवनका प्रारम्भ ही यज्ञसे होता है। इस विषयका स्पष्टीकरण गीतामें भी किया गया है——

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥

(३।१०-११)

'प्रजापति (ब्रह्मा) ने सृष्टि-रचनाके समय यज्ञके साथ मानव-जातिको उत्पन्न करके उनसे कहा—'इस यज्ञके द्वारा तुम्हारी उन्नति

पं० प्रेम दत्त शास्त्री

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

होगी और यह यज्ञ तुम्हारे लिये मनोभिलषित फलको देनेवाला होगा। तुम इस यज्ञके द्वारा देवताओंको सन्तुष्ट करो और देवता तुमलोगों को यज्ञ-फल-प्रदानके द्वारा सन्तुष्ट करेंगे। इस प्रकार परस्पर तुम दोनों अत्यन्त कल्याण-पदको प्राप्त करो।'

पद्मपुराणमें भी आया है—

यज्ञनिष्पत्तये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकार ह।
चातुर्वर्ण्यं महाभाग यज्ञसाधनमुत्तमम्॥

(सृष्टिखण्ड ३।१२३)

'हे महाभाग ! ब्रह्माजीने यज्ञ-कर्मके लिये ही यज्ञके श्रेष्ठ साधन चातुर्वर्ण्यके रूपमें मानवकी रचना की।'

विष्णुपुराण (१।६।७) में भी लिखा है—

यज्ञनिष्पत्तये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकार वै।
चातुर्वर्ण्यं महाभाग यज्ञसाधनमुत्तमम्॥

इस संसारमें प्राणिमात्रकी यह स्वाभाविक अभिवाञ्छा रहती है कि मैं जीवनपर्यन्त सुखी रहूँ और मुझे इस लोकमें धन-धान्य, पत्नी–पुत्र, गृह–उपवन आदि परम ऐश्वर्यप्रद भोग्य-पदार्थ प्राप्त हों और शरीर-त्यागके अनन्तर मुझे परलोकमें सहृदय हृदयके द्वारा परिज्ञात अनिर्वचनीय परम पुरुषार्थस्वरूप स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्ति हो। किन्तु पूर्व पुण्य-पुञ्जके प्रभावके बिना कोई भी शरीर-धारी मानव ऐहलौकिक और पारलौकिक सुख-विशेषकी प्राप्ति कथमपि नहीं कर सकता, यह शास्त्रोंका अटल और परम सिद्धान्त है। वह पुण्य धर्मका ही दूसरा नाम है, जो कि सत्कर्मानुष्ठानद्वारा ही प्राप्त हो सकता है।

भगवती श्रुति कहती है—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥

(ईशोपनिषद् २)

'शास्त्रविहित मुक्तिप्रद निष्काम यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मोंको करते हुए ही जीव इस जगत्में सौ वर्ष-पर्यन्त जीनेकी इच्छा करे। इस प्रकार किये जानेवाले कर्म तुझ शरीरधारी मनुष्यमें लिप्त नहीं होंगे। इससे पृथक् और कोई मार्ग नहीं है, जिससे मनुष्य कर्मसे मुक्त हो सके।'

यह श्रुति मानवोंको सत्कर्मकी ओर विशेषरूपसे प्रेरित करती है।

गीता माता भी कहती है—

न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।

(६।४०)

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।

(३।२०)

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात् कर्मयोगो विशिष्यते॥

(५।२)

इन प्रमाणोंद्वारा इस कर्ममय संसारमें समस्त मनुष्योंको कर्मठ बनानेके लिये गीता भी माताकी तरह अपने यज्ञप्रेमी पुत्रोंको कल्याणार्थ उपदेश करती है। अतएव—

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥

(गीता ३।१४)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इस प्रमाणसे सिद्ध है कि व्यावहारिक और पारमार्थिक सभी कार्य यज्ञादि उत्तम क्रिया-कलापके ऊपर ही निर्भर है।

अत्यन्त प्रबल वेगशाली विषय-जालस्वरूप भयङ्कर सर्पसे ग्रसित इस कराल कलिकालमें यज्ञ ही ऐसा अपूर्व पदार्थ है, जिसको प्राप्तकर अनादिकालसे तीक्ष्ण विषय-विष-वासनाओंसे व्याप्त अन्त:करणवाले और क्लेशकर्मविपाक–स्वरूप नाना प्रकारकी कष्टप्रद वासनाओंसे दग्ध होनेवाले एवं विविध तापोंसे तप्त होनेवाले मानव स्वदु:खनिवृत्त्यर्थ अभिलाषा करते हैं, किन्तु अविद्यासे ग्रसित होनेके कारण घोर कष्टोंसे मुक्त होनेमें असमर्थ होते हुए भी वे यज्ञद्वारा दुस्तर संसारसागरको भलीभाँति पार कर **जाते हैं।**

अधिक क्या, जगन्नियन्ता परमेश्वर भी यज्ञस्वरूपसे ही पूर्ण प्रकाशमान होता हुआ यज्ञपरायण पुरुषोंसे पूजित होकर 'यज्ञपुरुष' पदसे व्यवहृत होता है—**'यज्ञो वै पुरुषः।'** (शतपथब्राह्मण)। उस यज्ञ—शब्दकी यौगिक व्युत्पत्ति कल्पवृक्षकी तरह समस्त अभीष्टको परिपूर्ण करनेके लिये पूर्ण समर्थ है, तथा किसी सर्वातिशायी विलक्षण अर्थका प्रतिपादन करनेवाली एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती है।

'यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु' (३।३। ९०) इस पाणिनीय धातुपाठके अनुसार यज् धातुसे 'नङ्' प्रत्यय करनेपर 'यज्ञ' शब्द निष्पन्न होता है। वह यज्ञ विष्णु आदि देवताओंके पूजन, ऋषि-महर्षि एवं सज्जन पुरुषोंके सत्सङ्ग और सुवर्ण—रजत आदि उत्तम द्रव्योंके प्रदानद्वारा सम्पादित होता है, उस महामहिमशाली धार्मिक यज्ञका अनुष्ठान कर्तव्यरूपसे यज्ञाधिकारी मानवको अवश्य करना

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

चाहिये। जैसा कि ऊपर कहा गया है, यज्ञोंमें इन्द्रादि देवताओंका पूजन तथा देवसदृश ऋषि-मुनि एवं श्रेष्ठ मानवोंके सत्सङ्गका लाभ और विविध वस्तुओंका दान होता है। अतः यज्ञोंमें होनेवाले उक्त तीन प्रकारके सत्कार्योंसे मानवोंके आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—ये तीनों ताप अनायास ही समूल नष्ट हो जाते हैं, यह ध्रुव है।

—:०:—

गीता और यज्ञ

मानव-जातिके जीवनका प्रारम्भ यज्ञ से ही होता है। अतः मानवके लिये यज्ञ बहुत ही महत्त्वपूर्ण वस्तु है। गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने यज्ञको मनुष्यके लिये 'इष्टकामधुक्' कहते हुए बतलाया है कि—

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेषवोऽस्त्विष्टकामधुक्॥
देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥

(गीता ३।१०-११)

'प्रजापतिने यज्ञके साथ प्रजाको उत्पन्नकर कहा कि इस यज्ञके द्वारा ही तुम समृद्धिको प्राप्त हो। यह यज्ञ तुम सभीके मनोरथोंको पूर्ण करनेवाला हो। यज्ञद्वारा तुम समस्त देवताओंको आप्यायन करो, जिससे देवगण भी फल प्रदानद्वारा तुम सबको आप्यायित करेंगे। इस प्रकार परस्पर एक दूसरेका आप्यायन-संवर्धन करते हुए परम श्रेयके भागी होंगे।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञपुरुष भगवान्‌ने यज्ञके साथ मनुष्यको उत्पन्नकर जीवन-पर्यन्त यज्ञ से सम्बन्धित रहने की उसे आज्ञा दी है। अतः मनुष्यका जीवन सर्वदा यज्ञमय होना चाहिये।

यज्ञ हिन्दू-जातिका विशेष धर्म है और वह यज्ञ साक्षात् भगवान् का स्वरूप है। भगवान्‌का ही दूसरा नाम 'यज्ञ' है। यज्ञमें सर्वव्यापक सर्वान्तिर्यामी भगवान् का निवास रहता है।

तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्।
(गीता ३।१५)

अतः मनुष्यको यज्ञमें रहनेवाले यज्ञस्वरूप भगवान्‌की सर्वदा उपासना करनी चाहिये।

गीताके कृष्णका जीवन यज्ञमय था। उन्होंने अपना सारा जीवन यज्ञमय बिताया था। इसीलिये आज सारा संसार उन यज्ञ-पुरुष विष्णु भगवान्‌का पूजन और यजन करता है—**'यज्ञो वै विष्णुः'** (ऐतरेयब्राह्मण ३४।१)। गीतामें यज्ञपुरुषकी पूजाको बहुत ही महत्त्व दिया है। इसीलिये गीतामें यज्ञ करनेवालोंको प्रशंसनीय एवं बुद्धिमान कहा गया है और यज्ञ न करनेवालोंको निन्दनीय और मूर्ख कहा है। गीतामें उन लोगों की भी वहुत निन्दा की है जो यज्ञों के प्रति संकुचित भाव अथवा यज्ञकी निन्दा करते हैं।

गीतामें भगवान्‌ने यज्ञका महत्त्व अपने सदृश देते हुए उसकी प्रशंसामें कहा है—

'यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।'

अर्थात् याज्ञिक कर्मके अतिरिक्त समस्त कर्म लोकबन्धनकारक हैं।

और भी भगवान्‌ने कहा है—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥

(गीता ४।२३)

अर्थात् आसक्तिरहित होकर यज्ञ करनेसे मनुष्यकृत समस्त बन्धनों का नाश हो जाता है।

गीतामें भगवान्‌ने यज्ञादि कर्मको अत्यन्त पवित्र बतलाया है—

'यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ।'

(गीता १८।५)

अर्थात् यज्ञ, दान और तप—ये तीनों मनुष्योंको पावन करते हैं।

भगवान्‌के बतलाये हुए त्रिविध कर्मोंमेंसे यज्ञ-कर्मको लोकैषणा, एवं स्वर्गादिकी प्राप्ति आदि किसी प्रकारकी स्वार्थ-भावनाको लेकर नहीं करना चाहिये, किन्तु निःस्वार्थभावसे विश्वकल्याणार्थ करना चाहिये। विश्वकल्याणकी भावनासे होनेवाला यज्ञ ही वास्तविक यज्ञ कहलाता है और वही यज्ञ सफल तथा कल्याणकारी होता है।

श्रुति कहती है—

'यज्ञोऽपि तस्यै जनतायै कल्पते ।'

(ऐतरेयब्राह्मण २।१)

अर्थात् यज्ञ जनता—जनार्दनके कल्याणार्थ ही होता है।

गीता (५।२०) में **'भोक्तारं यज्ञतपसाम्'** कहकर भगवान्‌को यज्ञ और तपोंका भोक्ता कहा है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्योंके किये हुए यज्ञ, दान, तप आदि सभी शास्त्रविहित शुभ कर्म भगवान्‌में उस प्रकार पर्यवसित होते हैं जिस प्रकार गङ्गा आदि नदियोंका जल समुद्रमें जाकर स्थित होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गीताके सोलहवें अध्यायमें यज्ञको 'दैवी-सम्पत्' कहा है। दैवी-सम्पत्तिसे परिपूर्ण होनेके लिये यज्ञकी आराधना आवश्यक है। यज्ञकी आराधनासे मनुष्य 'देवता' बन जाता है।

गीता (३।१६) के **'एवं प्रवर्तितं चक्रम्'** के अनुसार यह सृष्टि-क्रम यज्ञके द्वारा ही प्रचलित है। सृष्टिमें दिव्य शक्तिका विकास यज्ञों-द्वारा ही हो रहा है। यज्ञसे ही प्राणिमात्र जीवन—शक्ति प्राप्त कर रहे हैं। यज्ञसे ही धर्म, कर्म, सदाचार, संस्कृति, सभ्यता आदिका परिज्ञान होता है। यज्ञसे वर्णाश्रमधर्मकी और जगत्की रक्षा होती है। यज्ञसे ही ऐहलौकिक और पारलौकिक सुखोंकी प्राप्ति होती है। यज्ञसे ही मानव—जीवनके उत्थानमें सहायता मिलती है। यज्ञसे ही मनुष्यमें अद्भुत आत्मबल बढ़ता है, जिससे उसका आत्मा सर्वविध दुःखों और शोकोंसे विरत हो जाता है।

गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने अपने भक्त अर्जुनको विविध विषयोंके स्वरूपका दिग्दर्शन कराते हुए 'यज्ञ' पर भी बड़ी उदार भावनासे प्रकाश डाला है। भगवान्‌ने जिन यज्ञोंका वर्णन किया है, उन्हें गीतामें 'महायज्ञ' कहा गया है। वे महायज्ञ गीताके चतुर्थ अध्यायमें श्लोक २५ से ३० तक द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ और योगयज्ञ आदि नामोंसे प्रसिद्ध हैं। इनके अधिकारके विषयमें भगवान्‌ने स्पष्ट कहा है कि 'यज्ञ अनन्त हैं और वे मानवमात्रकी वस्तु हैं, उनका सभीको अधिकार है।'

गीतामें भगवान्‌के द्वारा कथित यज्ञोंका तत्त्व बहुत ही दुरूह है। उनके वास्तविक तत्त्वको जान लेना कोई खेल-तमाशा नहीं है। पूर्वकालके बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, ज्ञान-विज्ञान-विशारद विद्वानोंने भी बड़ी कठिनतासे यज्ञका तत्त्व जान पाया

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

था। भगवान्‌ने कृपाकर हमारे कल्याणार्थ विविध यज्ञोंके रूपमें विविध प्रकारकी अटूट लकड़ी (लाठी) हमारे लिये उपस्थित कर दी हैं, जिनमेंसे हम एक भी यज्ञरूपी लकड़ीका सहारा ले लें, तो हम सदैव अपने जीवनको सुखमय व्यतीत कर सकते हैं। ऐसी स्थितिमें भी जो लोग यज्ञके महत्त्व को न समझकर भगवन्निर्दिष्ट यज्ञोंकी उपासना नहीं करते, वे विविध प्रकारके दुःख भोगते हैं और उनका जीवन कीट, पतंग, मच्छर, मक्खी, खटमल आदिकी तरह व्यर्थ और निन्दनीय होता है। अतः मानव-जीवनको सार्थक करनेके लिये गीतोक्त यज्ञको अपनाना चाहिये। जो लोग गीताका अध्ययन करनेपर भी गीतोक्त यज्ञोंका महत्त्व नहीं समझते अथवा गीतोक्त यज्ञोंसे वञ्चित रहते हैं, उनका गीताका स्वाध्याय व्यर्थ है।

—:०:—

वेद और यज्ञ

महर्षि जैमिनिने **'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः'** (जै० सू० १।१।२) इस सूत्रके द्वारा धर्म ही वेदका एकमात्र प्रतिपाद्य अर्थ है, यह स्पष्ट किया है।

वार्तिककारने भी **'धर्मे प्रतीयमाने तु वेदेन करणात्मना'** इससे धर्मका प्रतिपादन ही वेदका मुख्य कर्तव्य माना है। अतः उपर्युक्त प्रमाणोंके द्वारा धर्म ही वेदका अर्थ है, यह निर्विवाद है।

महर्षि सायणाचार्य ने भी—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आध्वर्यवस्य यज्ञेषु प्राधान्याद् व्याकृतः पुरा ।
यजुर्वेदोऽथ हौत्रार्थमृग्वेदो व्याकरिष्यते ।।

—इत्यादि वचनोंके द्वारा यज्ञोंका प्रतिपादन ही यज्ञका मुख्य विषय माना है। अतः इस समय चारों वेदोंमें वेदोंकी जितनी शाखाएँ उपलब्ध हैं, उनकी यज्ञ-प्रधानताके रूपमें ही व्याख्या की गई है। यह सन्देह करना भी उचित नहीं है कि—"सभी वेदभाग अर्थान्तरपरक ही थे और बलपूर्वक उन्हें यज्ञपरक बनानेमें सायणाचार्यने बड़ा दुस्साहस किया।"

आज तो कराल कलिकालके प्रभावसे भारतीय, विशेषतः संस्कृतके विद्वान् संस्कृताभिमानीवर्ग अपने पूर्वाचार्योंसे प्रवर्तित मार्गको छोड़कर लोकविरुद्ध तथा लोकगर्हित मार्गपर चलनेमें अपनी शोभा समझते हैं। यह पहले ही कहा जा चुका है कि सायणाचार्यके भाष्यके पूर्व भी बहुतसे भाष्य थे, उन सभी भाष्योंने भी वेदको यज्ञपरक ही माना है। उन्हींके अनुसार सायणाचार्यका भी भाष्य बना। इस प्रकार वे भाष्य भी पूर्व—पूर्व भाष्योंके अनुसार ही बने होंगे, यह स्पष्ट कहा जा सकता है। इस तरह प्रवृत्त-भाष्यपरम्परा वेदोंकी यज्ञपरताके प्रतिपादनमें अविचार्य रही है। अधिक क्या कहा जाय, सायणाचार्यके हजारों वर्ष पूर्व भगवान् शबरस्वामीने वेदव्याख्यानरूप अपने मीमांसा-शास्त्रमें सम्पूर्ण वेदकी व्याख्या का पर्यवसान यज्ञोंमें ही माना है। अतः सायणाचार्यके ऊपर किसी प्रकारका आरोप करना अपनी अज्ञता को प्रकट करना है। इसी तरह एक-एक शाखाके कल्पसूत्र भी आश्वलायन, कात्यायन, बौधायन प्रभृति उपलब्ध हैं, उनमें भी यज्ञ-प्रधाननाका ही वर्णन प्राप्त होता है। जैसे—

"इषे त्वोर्जेत्वा व्वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्प्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे०" इत्यादि। (शु० यजु० १।१)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

"इषे त्वोर्ज्जे त्वेति वृष्ट्यै तदाह यदाहेषे त्वेत्त्यूर्ज्जे त्वेति यो वृष्ट्या-दूर्ग्रसो जायते तस्मै तदाह।" (**शतपथब्रा० १।७।१।२**)

इस ब्राह्मण-वाक्यमें बहुपर्णत्वादिगुणयुक्त शाखाके छेदनके अतिरिक्त कोई दूसरा अर्थ किस प्रकार किया जा सकता है ? थोड़ी देरके लिये यदि इसे भी अर्थान्तरपरक मान लिया जाय, तो भी **"पर्णशाखां छिनत्ति शामीलीं वेषेत्वेत्यूर्जेत्वेति वा"** इस कल्पसूत्रका कौनसा अर्थ कल्पित किया जा सकता है। यदि यज्ञादिबोधनतात्पर्यसे ही प्रवृत्त कल्पसूत्रोंका भी अर्थान्तर किया जाय, तो कोई क्या कह सकता है ? क्योंकि ऐसे लोग तो प्रत्यक्षरूपसे जाज्वल्यमान अग्निको 'जल' और हाथीको 'बिल्ली' कह सकते हैं।

भगवान्के श्वास-प्रश्वासरूपसे निकले हुए वेदोंका बहुत बड़ा अर्थ-गाम्भीर्य है, अतः इस सम्बन्धमें बड़ी-बड़ी शङ्काएँ उठा करती हैं। वेदका अधिकांश भाग यज्ञ-प्रतिपादक है, इस बातको वेदभाष्यकारोंने वार-वार कहा है।

कुछ आधुनिक विचारधाराके लोग वेदकी यज्ञ-परतामें विशेष आलोचना करते हैं तथा मनमाना वेदार्थ करके प्रसन्न होते हैं। ऐसे लोगोंके सम्बन्धमें क्या कहा जाय ? पता नहीं, ऐसे लोगोंका यज्ञोंने क्या अपराध किया और उनके मनमाने अर्थोंने उनका क्या उपकार किया ?

यदि वेदको यज्ञादिरूप धर्मप्रतिपादक नहीं माना जाय और अपनी बुद्धिके अनुसार मनमाने अर्थोंका आरोप किया जाय, तो "वेद धार्मिक ग्रन्थ हैं" यह परम्परा समाप्त हो जायगी। और **'वेदोऽखिलो धर्म-मूलम्'** (मनु० २।६) इत्यादि समस्त स्मृति-वचन भी निरर्थक हो

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जायँगे। क्योंकि अनादिरूपसे माने हुए वेदोंके सम्बन्धमें जब ऐसी धारणा बनाली जायगी,तो उन्हीं के आधार पर बने हुए स्मृति-ग्रन्थों की क्या दशा होगी ? ऐसी स्थितिमें तो समस्त धार्मिक ग्रन्थोंका विलय हो जायगा।

जिस वेदके सहारे यह भारतवर्ष आजतक विश्वके समस्त देशोंमें सर्वश्रेष्ठ समझा गया, जिसके सहारे सभी भारतीय अन्य लोगोंकी अपेक्षा सर्वोत्तम समझे गये और जिसके सहारे हमारी दैनन्दिन चर्या उत्तम चलती आई, उस धर्ममूल वेदके उच्छिन्न (अप्रामाणिक) होनेसे शेष ही क्या रह जायगा। अतः उपर्युक्त विचारधारा केवल मूर्ख अथवा पागलकी ही हो सकती है, न कि बुद्धिमान व्यक्ति की।

इसी प्रकार वेदोंके अर्थोंको तथा वेदोंके यज्ञ-बोधक अर्थोंको पुष्ट करनेवाले प्रमाणोंको छोड़कर अपनी बुद्धिके अनुसार मनमाने अर्थ करनेवाले लोगोंको क्या कहा जाय ? या तो उन्हें यज्ञोंका ज्ञान नहीं, या यज्ञों के प्रति उनका महान् द्वेष है, यही कहा जा सकता है।

इसी प्रकार आजके कुछ लोग सम्पूर्ण वेदोंका केवल आध्यात्मिक अर्थमें ही पर्यवसान मानते हैं, यह भी उनकी बुद्धिकी विचित्रता ही है। वस्तुतः यज्ञोंकी अमान्यता और अभावसे ही हमलोग आज दीन-हीन और क्षीण हो गये हैं। भगवान् मनु (३।७६) के —

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥

इस वचनके अनुसार यज्ञमें डाला हुआ बलवर्धक आज्य प्रभृति सभी हव्य पदार्थ भस्मीभूत होकर वाष्परूपसे (भापरूपसे) ऊपर आकाश में जाता है, फिर वही कुछ समयके बाद वर्षाके रूप में पृथ्वी पर आता है और वह औषधियोंके रूपमें परिणत होकर हम लोगोंका

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का पोषकतत्त्व बन जाता है। वह बल खाद्य-पदार्थों के बलकी अपेक्षा बहुत बड़ा होता है। बड़े खेदकी बात है कि वेदोक्त श्रौत-स्मार्त्तादि यज्ञोंके अभावसे, कालकी महिमा तथा देश-दोषसे और आहार-विहारादिके दोष से हमारा ह्रास होता जा रहा है, यह प्रत्यक्ष है।

यज्ञ और ब्राह्मण

देवता दो प्रकारके होते हैं—एक मनुष्योंमें ब्राह्मण और दूसरे देवताओंमें भौतिक देवता।

'अथ हैते मनुष्यदेवा ये ब्राह्मणाः।'

(षड्विंशब्राह्मण १।१)

'मनुष्योंमें ब्राह्मण ही देवता कहे जाते हैं।'

'एते वै देवाः प्रत्यक्षं यद् ब्राह्मणाः।'

(तैत्तिरीयसंहिता १।७।३)

'ये ब्राह्मण प्रत्यक्ष देवता हैं।'

ब्राह्मण देवताके सम्बन्धमें कहा गया है—

'ये ब्राह्मणाः शुश्रुवाँ सोऽनूचानास्ते मनुष्यदेवाः।'

(शतपथब्रा० २।२।२।६)

'जो ब्राह्मण वेदादि शास्त्रोंके ज्ञाता, बहुश्रुत और पूर्ण विद्वान् हैं, वे मनुष्योंमें देवता हैं।'

'विद्वांसो हि देवाः।' (शतपथब्रा० ३।७।३।१०)

'विद्वान् ही देवता कहे जाते हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'मन्त्रयज्ञपरा विप्राः' (ब्रह्मपुराण १८७।५०) के अनुसार ब्राह्मण:ही वेदमन्त्र और यज्ञ के ज्ञाता अथवा अनुष्ठाता कहे जाते हैं। ब्राह्मणों पर ही यज्ञकी मर्यादाका रक्षण निर्भर है। ब्राह्मण ही यज्ञके रक्षार्थ वेदोंका अध्ययन कर उन्हें कण्ठस्थ रखते हैं और यज्ञोंमें वेदोंका उचित रूपसे प्रयोग कर वेदोंको जीवित रखते हैं। वेदोंके स्वाध्याय और रक्षणके कारण ही ब्राह्मणको भगवत्स्वरूप 'वेद' और 'यज्ञ' शब्दसे व्यवहृत किया गया है—

'ब्रह्म हि ब्राह्मणः।' (शतपथब्रा० ५।१।५।२)

'वेद ही ब्राह्मण है।'

'ब्रह्म हि यज्ञः' (शतपथब्रा० ५।३।४)

'ब्राह्मण ही यज्ञ है।'

ब्राह्मण ही यज्ञके मुख्य आधार कहे जाते हैं। ब्राह्मणोंके बिना यज्ञ सुसम्पन्न नहीं हो सकते। महर्षि कात्यायनके **'ब्राह्मणा ऋत्विजो भक्षप्रतिषेधादितरयोः'** (का० श्रौ० सू० १।२।८) तथा यज्ञपरिभाषासूत्रकारके **'ब्राह्मणानामार्त्विज्यम्'** (२४) इस सूत्रसे स्पष्ट है कि यज्ञमें केवल ब्राह्मण ही 'ऋत्विक्' हो सकता है। इसीलिये प्रत्येक यज्ञ में हवन करनेवाले ब्राह्मण ही होते हैं।

जिस प्रकार यज्ञमें हवन करने के लिये ब्राह्मणोंका होना आवश्यक है, उसी प्रकार यज्ञ-कर्मको करानेके लिये 'आचार्य' का भी ब्राह्मण होना आवश्यक है।

यज्ञ अत्यन्त श्रेष्ठ और पवित्र कर्म है। अतः पवित्रताकी दृष्टिसे यज्ञ करनेका अधिकार केवल द्विजको ही है। किन्तु कुछ यज्ञ ऐसे हैं,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जिनका अधिकार केवल 'ब्राह्मण' को ही है। जिन यज्ञोंको करनेका अधिकार क्षत्रिय और वैश्यको है, वे भी यज्ञके प्रभावसे यज्ञ करनेके समय ब्राह्मणत्वको प्राप्त करते हैं। ब्राह्मणत्वकी प्राप्तिके लिये उन्हें यज्ञारम्भके समय दीक्षासम्पन्न होना पड़ता है। खासकर श्रौतयागमें दीक्षित होकर ही यजमान यज्ञ करने का अधिकारी बनता है—**'दीक्षितोऽयं यजमानः।'**

यज्ञार्थ दीक्षित होनेसे यजमान क्षत्रिय हो अथवा वैश्य हो, वह यज्ञ में प्रारम्भसे अन्त तक ब्राह्मणत्व को प्राप्त करता है—

'स ह दीक्षमाण एव ब्राह्मणतामभ्युपैति।'

(ऐतरेयब्रा० ७।२३)

अतः दीक्षासम्पन्न क्षत्रिय अथवा वैश्यको यज्ञके समय 'ब्राह्मण' ही कहना चाहिये। जो यज्ञसे उत्पन्न होता है, वह ब्राह्मण ही उत्पन्न होता है—

'तस्मादपि राजन्यं वा वैश्यं वा ब्राह्मण इत्येव ब्रूयाद् ब्राह्मणो हि जायते यो यज्ञाज्जायते।'

(शतपथब्रा० ३।२।१।४०)

'य उ वै कश्च यजते ब्राह्मणीभूयेवैव यजते।'

(शतपथब्रा० १३।४।१।३)

'जो कोई यज्ञ करता है, वह ब्राह्मण होकर (दीक्षित होकर) ही यज्ञ करता है।'

'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' (शु० य० ३१।११)
'मुखादग्निरजायत' (शु० य० ३१।१२)

—के अनुसार ब्राह्मण और अग्नि की उत्पत्ति विराट् पुरुषके मुखसे हुई है। अतः ब्राह्मण और अग्नि दोनों सहोदर भाई हैं। इसीलिये वेदमें ब्राह्मणको 'आग्नेय' और 'अग्नि' कहा है—

५

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'आग्नेयो वै ब्राह्मणः ।' (तैत्तिरीयब्रा० २।७।३१)

'ब्रह्म ह्यग्निः ।' (शतपथब्रा० १।४।२।२)

पुराणोंमें भी ब्राह्मणको 'अग्निदेव' कहा है—

'ब्राह्मणा ह्यग्निदेवास्तु' (भविष्यपु० ब्राह्मपर्व १३।३६)

'अग्निर्ब्रह्म' (महाभारत, शान्तिपर्व ३४२।१२)

ब्राह्मण साक्षात् अग्निके स्वरूप हैं, इसीलिये अग्निहोत्रीके लिये लिखा है—हवनके समय जब अग्निहोत्रशालाकी अग्नि शान्त हो जाय तब वह ब्राह्मणके हाथमें आहुति (हवनीय द्रव्य) देकर काम चलावे ।

भगवान् मनुने कहा है—

अग्न्यभावे तु विप्रस्य पाणावेवोपपादयेत् ।
यो ह्यग्निः स द्विजो विप्रैर्मन्त्रदर्शिभिरुच्यते ॥
(३।२१२)

'अग्निके अभावमें ब्राह्मणके हाथमें ही हवनीय पदार्थ (आहुति) देना चाहिये; क्योंकि जो अग्नि है, वही ब्राह्मण है—ऐसा वेदज्ञाता ब्राह्मणोंने कहा है ।'

'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' (शु० य० ३१।११) के अनुसार ब्राह्मणकी उत्पत्ति *विराट् पुरुषके मुखसे हुई है, इसीलिये ब्राह्मण ×मुखसे ही अपना बल (विद्याबल) दिखाता है—

---

* आदौ ब्रह्ममुखाद् विप्रः समुद्भूतः पुरानघः ।
वेदास्तत्रैव सञ्जाताः सृष्टिसंस्थितिहेतवः ॥
तस्माद् विप्रमुखे वेदाश्चार्पिताः पुरुषेण हि ।
पूजार्थं सर्वलोकानां सर्वयज्ञार्थतो ध्रुवम् ॥
(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।११३–११४)

× 'वाक्शस्त्रं वै ब्राह्मणस्य तेन हन्यादरीन् द्विजः ।'
(मनु० ११।३३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'तस्माद् ब्राह्मणो मुखेन वीर्यं करोति मुखतो हि सृष्टः ।'

(ताण्ड्यमहाब्रा० ६।१।६)

वस्तुतः ब्राह्मणोंका मुख्य बल विद्याबल है, जिसका प्रदर्शन ब्राह्मणोंके मुखसे ही होता है। मनुस्मृति (८।२०) में लिखा है कि ब्राह्मण ही धर्मोपदेशक हो सकता है, शूद्रादि नहीं हो सकते। इसीलिये ब्राह्मणके लिये लिखा है कि उसे विद्याबल प्राप्त करना चाहिये, जिससे वह विद्याबलके द्वारा धर्मोपदेश करके समूचे संसारका कल्याण कर सके। ब्राह्मणको शास्त्रोंका, विशेषतः वेदोंका परिज्ञान होना आवश्यक है—

'तदध्येव ब्राह्मणेनैष्टव्यं यद् ब्रह्मवर्चसी स्यादिति ।'

(शतपथब्रा० १।९।३।१६)

'ब्राह्मणको देवमय वेदका इष्ट होना चाहिये, जिससे वह ब्रह्मवर्चसी हो जाय।'

'यो वै ब्राह्मणानामनूचानतमः स एषां वीर्यवत्तमः ।'

(शतपथब्रा० ४।६।७।५)

'जो ब्राह्मणोंमें परम विद्वान् है, वही अत्यन्त बलवान् कहा जाता है।'

अतः ब्राह्मणको विद्याबल अवश्य प्राप्त करना चाहिये। विद्याबलके द्वारा ही ब्राह्मण जगत्का कल्याण कर सकता है। विद्याबलसे सम्पन्न ब्राह्मणसे ही शिक्षा प्राप्त करनेके लिये भगवान् मनुकी आज्ञा है—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

ब्राह्मणोंको विद्याबल प्राप्तकर यज्ञ-सम्पन्न होना आवश्यक है, क्योंकि ब्राह्मणका मुख्य शस्त्र 'यज्ञ' ही कहा गया है—

'एतानि वै ब्रह्मण आयुधानि यद् यज्ञायुधानि ।'

(ऐतरेयब्रा० ७।१९)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

शतपथ ब्राह्मण (१।५।१।११) में लिखा है कि ब्राह्मण ही यज्ञके रक्षक और यज्ञके विधि-विधानके ज्ञाता होते हैं। इसलिये यज्ञोंमें वेदसम्पन्न ब्राह्मणोंकी प्रधानता और मान्यता होती है। ब्राह्मणोंकी प्रधानता और मान्यतासे ही यज्ञ सफल होते हैं।

प्राचीन समयमें सभी लोगोंकी यज्ञोंमें और ब्राह्मणोंमें बड़ी आस्था थी। यज्ञप्रेमी व्यक्ति यज्ञोंमें वेदशास्त्रसम्पन्न ब्राह्मणोंका द्रव्यादिके द्वारा उचित सत्कार किया करते थे। उस समय सभी प्राणी सर्वप्रकारसे सुखी और सन्तुष्ट रहा करते थे, किन्तु जबसे मनुष्योंमें यज्ञोंके प्रति अनास्था और ब्राह्मणोंमें अश्रद्धाकी प्रवृत्ति बढ़ी, तभीसे सभी प्राणी सब प्रकारसे दुःखित और पीड़ित रहने लगे। यदि पुनः सभी लोग यज्ञोंमें आस्था रखते हुए यज्ञोंके अनुष्ठापक और ब्राह्मणोंमें श्रद्धा रखते हुए ब्राह्मणोंके पूजक बन जायँ, तो फिर यह देश सभी प्रकारसे सुख-समृद्धिको प्राप्त हो सकता है।

शास्त्रोंमें जिस प्रकार यज्ञोंका महत्त्व है उसी प्रकार ब्राह्मणोंका भी महत्त्व है। ब्राह्मणोंमें समस्त देवता और समस्त यज्ञ निवास करते हैं। अतः देशको सुख-समृद्धिशाली बनानेके लिये यज्ञोंका अनुष्ठान और ब्राह्मणोंका पूजन परमावश्यक है।

यज्ञ और अग्नि

'देवतोद्देशेन अग्नौ हविर्द्रव्यत्यागो यागः' के अनुसार देवताके उद्देश्यसे अग्निमें हविर्द्रव्यका जो त्याग किया जाता है, उसे 'यज्ञ' कहते हैं।

गीता (३।११) में भगवान्ने **'देवान्भावयतानेन'** के द्वारा मनुष्य और देवताके लिये आदान-प्रदानात्मकरूप परस्पर-भावन पर विशेष जोर देते हुए कहा है—जो मनुष्य यज्ञके द्वारा देवताओंको

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सन्तुष्ट करते हैं, उनकी देवगण उन्नति करते हैं। अतः यज्ञके द्वारा मनुष्यों और देवताओंकी जो आदान-प्रदानात्मकरूप परस्पर-भावना उद्भूत होती है, वह बड़ी ही सुदृढ़ और कल्याणकारिणी होती है।

जिस प्रकार श्राद्धमें ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे पितर तृप्त और सन्तुष्ट होते हैं, उसी प्रकार यज्ञकी अग्निमें हवनीय द्रव्यद्वारा हवन करनेसे देवता तृप्त और सन्तुष्ट होते हैं।

किसी मनुष्यको भोजन कराया जाय तो वह मनुष्यके समक्ष प्रत्यक्षरूपमें अपने मुखसे ही करता है, किन्तु यह बात देवताओंके लिये लागू नहीं है। देवगण अदृश्य होनेके कारण मनुष्यके द्वारा प्रदत्त हविर्द्रव्यको प्रत्यक्षरूपमें नहीं खाते, किन्तु वे अप्रत्यक्षरूपमें अग्निदेवके द्वारा ही खाते हैं। प्रदत्त हविर्द्रव्यको अग्निके द्वारा भोजन करनेके कारण अग्निको "देवताओंका मुख" कहा गया है—

अग्निर्वै देवानां मुखम्। (गोपथब्रा० उत्त० १।२३।१)
अग्निर्हि देवानां मुखम्। (शतपथब्रा० ३।७।४।१०)
अग्निर्वै देवतानां मुखम्। (शतपथब्रा० ३।९।१।६)
अग्निर्मुखं प्रथमो देवतानाम्। (ऐतरेयब्रा० १।१।२)
अग्निर्मुखं प्रथमो देवतानाम्। (काठकसंहिता ४।१।१४)
मुखं देवानामग्निः। (कपिष्ठल कठसंहिता ३१।२०)
देवानां मुखमग्निः। (ब्रह्मपुराण ८।१२६)
अग्निमुखा वै देवाः। (आश्वलायनगृह्यसूत्र ३।९।१।६)
अग्निमुखा वै देवाः। (ताण्ड्यमहाब्राह्मण २५।१५।४)
अग्निमुखा एव देवताः। (तैत्तिरीयब्राह्मण ३।७।१।८)

अग्निके द्वारा भोजन करनेवाले देवताओंके सम्बन्धमें कहा है कि—

'देवा अग्निमुखा अन्नमदन्ति, यस्यै कस्यै च देवतायै च जुह्वति, अग्नावेव जुह्वति, अग्निमुखा हि तद्देवा अन्नमकुर्वत।'

(शतपथब्रा० ७।२।२।४)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'स यदग्नौ जुहोति तद्देवेषु जुहोति ।'

(शतपथब्रा० २।३।१।१९)

'यदन्नं होमान् जुहोति, देवानेव तत् प्रीणाति ।'

(शतपथब्रा० १३।२।१।१)

'अग्नौ हि सर्वाभ्यो देवताभ्यो जुह्वति ।'

(शतपथब्रा० ३।१।३।१)

*ऋग्वेद और +अथर्ववेदमें लिखा है कि यज्ञकी अग्निमें डाला हुआ पदार्थ देवताओंको प्राप्त होता है।

उपर्युक्त प्रमाणोंके द्वारा स्पष्ट है कि देवताओंके उद्देश्यसे अग्निमें जो हवन किया जाता है, वह देवताओंके मुखमें ही जाता है और उससे देवता तृप्त एवं प्रसन्न होते हैं।

देवताओंके पास यज्ञका हविर्द्रव्य पहुँचानेका काम अग्निका है, इसीलिये अग्निको 'देवदूत' और 'होता' कहा गया है—

अग्निर्हि देवानां होता दूतश्च । (शतपथब्रा० १।४।५।४)
अग्निरेव देवानां दूतः । (शतपथब्रा० १।४।१।३४)
अग्निर्वै देवानां होता । (ऐतरेयब्रा० १२।३)
अग्निर्वै देवानां होता । (तैत्तिरीयसं० २।५।९)
अग्निर्होता । (शतपथब्रा० १।५।२।१)
अग्निर्वै होता । (शतपथब्रा० ६।४।३।७)

[1]अग्निर्हि देवानां होता तस्मादाहाग्निर्देवो दैव्यो होता ।

(शतपथब्रा० १।५।१।५)

---

*ऋग्वेद १।१।४, ऋ० ७।११।५

×अथर्ववेद ५।१२।२

१. अग्निही देवताओंको बुलानेवाला है, इसीलिये अग्निको देवताओंका हितैषी कहा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे ।
देवाँ आसादयादिह ॥ (शुक्ल यजुर्वेद २२।१७)
[1]त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः ।
देवेभिर्मानुषे जने ॥ (सामवेद १।१।२)

अग्निको देवताओंके पास यज्ञिय हविर्द्रव्य पहुँचानेकी सर्वदा चिन्ता बनी रहती है, किन्तु जब उसे देवताओंके लिये हवनीय द्रव्य नहीं मिलता, तो वह कुपित होकर प्रकृतिके विरुद्ध कार्य करने लगता है। जिसका कुपरिणाम यह होता है कि जगह-जगह भीषण अग्नि-काण्ड होने लगते हैं, जिससे देश और समाजको बहुत भयङ्कर क्षति उठानी पड़ती है। अतः अग्निदेवकी प्रसन्नताके लिये यज्ञ करना आवश्यक है।

यज्ञमें देवताओंके उद्देश्यसे अग्निमें जो हवनीय पदार्थ डाला जाता है उसे उन्हें समर्पण करनेके लिये अग्निदेव यज्ञमण्डपमें कुछ देवताओंको बुला लेते हैं और कुछके पास वे स्वयं जाते हैं। यज्ञ-मण्डपमें अग्निदेव सर्वप्रथम अपने मित्र वायुदेवको बुलाते हैं। वायु-देवके उपस्थित होनेपर उनकी विद्युत्, पर्जन्य आदि विविध दिव्य-शक्तियाँ भी उपस्थित हो जाती हैं। अग्निदेवकी आज्ञासे वायुदेव और वायुदेवकी दिव्य-शक्तियाँ अग्निदेवके द्वारा जलाये हुए हविर्द्रव्य को भस्मको तथा भस्मके सूक्ष्म अणुओंको समस्त ब्रह्माण्डमें फैला देती हैं, जिससे समस्त संसारका कल्याण होता है।

जिस प्रकार समस्त आश्रमोंका आधार 'गृहस्थ आश्रम' है, उसी प्रकार समस्त यज्ञोंका आधार 'अग्नि' है। अग्नि केवल यज्ञोंका ही आधार नहीं है, किन्तु वह समस्त धार्मिक अनुष्ठानोंका आधार है।

---

१. हे अग्ने ! तुम मेरे यज्ञोंके सम्पादन करनेवाले हो। तुम मानव-समाज-में उत्तम गुणोंके द्वारा सबका हित करनेवाले हो।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अग्निके बिना कोई भी धार्मिक कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। अग्निके आधारसे ही गर्भाधानादि षोड़श संस्कार, शतचण्डी, गायत्रीपुरश्चरण, विष्णुयज्ञ, रुद्रयज्ञ आदि एवं वापी, कूप, तड़ाग, देवमन्दिर आदिकी प्रतिष्ठा आदि धार्मिक कृत्य सुसम्पन्न होते हैं। अग्निके द्वारा केवल धार्मिक अनुष्ठान ही सुसम्पन्न नहीं होते, किन्तु सांसारिक सभी प्रकारके कार्य सुसम्पन्न होते हैं। जैसे—अग्निके द्वारा भाप तैयार करना, सुवर्णादि धातुओंकी शुद्धि करना, जंगलकी जड़ी-बूटियोंसे काढ़ा एवं अर्क तैयार करना, रेलगाड़ी चलाना, बड़ी-बड़ी मशीन और इंजन चलाना आदि। इतना ही नहीं, अग्निके द्वारा ही मनुष्यके भक्ष्य-पदार्थं (भोजन) का भी निर्माण होता है। अतः निश्चित है कि अग्नि जड़, चेतन सभीका आधार है। अग्निके बिना संसारके सभी कार्य विफल हो जाते हैं। अतः धार्मिक और लौकिक सभी दृष्टियोंसे अग्निका विशेष महत्त्व है।

मनुष्य–जीवनके लिये अग्नि बहुत ही उपकारक और महत्त्वपूर्ण वस्तु है। **'अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः'** (गीता १५।१४) के अनुसार वैश्वानर भगवान् जाठराग्निके रूपमें प्राणिमात्रके शरीरमें निवास करते हैं। वैश्वानर भगवान् की तृप्ति और प्रसन्नताके लिये प्रत्येक प्राणी अपने मुखरूपी कुण्डमें भोजनरूपी आहुति प्रतिदिन डालता है। प्राणिमात्रका यह भोजनरूपी यज्ञ प्रतिदिन चलता रहता है। इस यज्ञके बिना प्राणी कथमपि जीवित नहीं रह सकता।

प्राणिमात्रमें रहनेवाला वैश्वानर अग्नि ही प्राणिमात्रका संचालन और संरक्षण करता है और वही प्राणिमात्रको चेतनता, तेजस्विता, स्वस्थता और जीवनशक्ति प्रदान करता है। इसलिये मनुष्यको वैश्वानरस्वरूप अग्निदेवकी उपासना जीवनपर्यंन्त अवश्य ही करनी चाहिये।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मनुष्यका जीवन ही अग्निमय है। जीव जब अपनी माताके उदरमें नव मास तक रहता है, तब उसका सर्वप्रथम 'जाठराग्नि' से सम्बन्ध स्थापित होता है। पश्चात् जब वह माताके उदरसे बाहर आता है, तब उसका सम्बन्ध जीवनपर्यन्तके लिये 'लौकिक अग्नि' से स्थिर हो जाता है और जब वह मरणावस्थाको प्राप्त होता है तब उसका सम्बन्ध *'क्रव्याद अग्नि' (चिताग्नि) से हो जाता है, जिसके द्वारा उसका शरीर जलकर भस्म हो जाता है—**'भस्मान्तं शरीरम्'** (शु० य० ४०।१५)।

विशेष आश्चर्यकी बात तो यह है कि जिस अग्निका प्राकृतिक धर्म जलाना है, वह मनुष्यके उदरमें सर्वदा रहते हुए भी उसे नहीं जलाता। इसका कारण यह है कि मनुष्य अपने उदरमें रहनेवाले 'जाठराग्नि' के लिये भोजनरूपी आहुति प्रतिदिन उचित मात्रामें डालता रहता है, जिससे उसकी 'जाठराग्नि' सर्वदा शान्त रहती है और मनुष्यको किसी प्रकार कष्ट नहीं देती। यदि किसी दिन मनुष्य अपने उदरमें भोजनरूपी आहुति डालनेमें गड़बड़ी कर देता है, तो उसकी 'जाठराग्नि' प्रबलरूप धारण कर मनुष्यको बेचैन कर डालती है, जिससे मनुष्य बार-बार जल पीकर अथवा अन्य कोई औषध-विशेष खाकर अग्निको शान्त करता है। अतः उदरस्थित अग्निको शान्त रखनेके लिये भोजनरूपी आहुति पर विशेष ध्यान रखना चाहिये। अन्यथा मनुष्य मन्दाग्नि अथवा अन्य प्रकारके उदर रोगोंसे पीड़ित होकर शीघ्र ही मृत्युको प्राप्त हो जायगा।

हमारे हिन्दू-धर्मशास्त्रोंमें द्विजके लिये जीवनपर्यन्त अग्निकी उपासना करनेके लिये कहा है। द्विज यज्ञोपवीत-संस्कारके बाद जब ब्रह्मचर्याश्रममें प्रवेश करता है, तभीसे उसे जीवनपर्यन्तके लिये अग्निकी उपासनाका व्रत ग्रहण करना पड़ता है और वह जीवन-

*'क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि०' (शु० य० ३५।१९)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पर्यन्त पञ्चमहायज्ञादिके द्वारा अग्निकी उपासना करता रहता है।

शास्त्रोंमें द्विजातिके लिये अग्निको प्रत्यक्ष 'देवता' और 'गुरु' कहा है—

अग्निर्देवो द्विजातीनाम्। (लौगाक्षिस्मृति)
अग्निर्देवो द्विजातीनाम्। (चाणक्यनीति ४।१९)
गुरुरग्निर्द्विजातीनाम्। (चाणक्यनीति ५।१)
गुरुरग्निर्द्विजातीनाम्। (पद्मपुराण, स्वर्ग० ५२।५१)
गुरुरग्निर्द्विजातीनाम्। (व्याघ्रपादस्मृति २०८)

जो अग्नि द्विजातिके लिये प्रत्यक्ष देवता और गुरु है, उसकी उपासना द्विजातिको जीवनपर्यन्त करनी चाहिये।

[1]शतपथब्राह्मण (१।४।२।२) में ब्राह्मणको अग्नि, [2]तैत्तिरीय ब्राह्मण (२।७।३१) में ब्राह्मणको आग्नेय, [3]भविष्यपुराण (ब्राह्मपर्व १३।३६) और [4]महाभारत (शान्तिपर्व ३४२।१२) में ब्राह्मणको अग्निदेव कहा है।

ब्राह्मणके लिये कहा गया है कि उसे अग्निके गुणोंसे विभूषित होना चाहिये। अग्निके गुणोंसे विभूषित होनेके लिये ब्राह्मणको अग्निकी उपासना आवश्यक है। अग्निकी उपासनासे ब्राह्मण अग्निके गुणोंसे विभूषित हो जाता है। जो ब्राह्मण अग्निके गुणोंसे विभूषित हो जाता है, वही यथार्थरूपमें 'ब्राह्मण' कहलानेका अधिकारी है।

मनुष्यकी उत्पत्ति अग्निसे कही गई है। अतः प्रत्येक मनुष्यका सम्बन्ध अग्निसे जीवनपर्यन्त बना रहता है। मनुष्यकी जब मृत्यु होती है, तो उसको अग्निसे जला दिया जाता है। मनुष्यका अग्निके साथ विशेष सम्बन्ध होनेका प्रधान कारण यह है कि उसकी शिखा

---

१. **ब्रह्म ह्यग्निः।** २. **आग्नेयो वै ब्राह्मणः।**

३. **ब्राह्मणा ह्यग्निदेवास्तु।** ४. **अग्निर्ब्रह्म।**

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(चोटी) के मूल भागमें अग्निका निवास होता है। अतः शिखावाले व्यक्तिको 'आग्नेय' कहा जाता है। शिखाको अग्निका विशेष चिह्न कहा गया है—**'अग्निचिह्नं शिखाकर्म।'**

संन्यासाश्रममें प्रविष्ट होनेके बाद संन्यासीको अग्निचिह्नस्वरूप शिखाका परित्याग करना पड़ता है। शिखाके परित्याग करनेसे संन्यासीको अग्निका भी परित्याग करना पड़ता है। अग्निके परित्याग करनेके कारण संन्यासी 'आग्नेय' नहीं रह जाता। इसीलिये संन्यासीकी जब मृत्यु होती है, तो उसको अग्निसे जलाया नहीं जाता, किन्तु उसका गंगा आदि नदीमें प्रवाह किया जाता है अथवा भूमिमें गाड़ दिया जाता है।

हमारे शास्त्रोंमें प्रत्येक यज्ञ, प्रत्येक संस्कार और प्रत्येक कर्मकी अग्निके अलग-अलग नाम निर्दिष्ट हैं। अतः जिस कर्मको करना हो, उसी कर्मकी निर्दिष्ट अग्निका उपयोग करना चाहिये। जो लोग शास्त्रोंमें विश्वास न रखकर अथवा शास्त्रोंको न मानकर जिस किसी अग्निका उपयोग करते हैं, वे यज्ञादिके यथार्थ फलसे वञ्चित ही रहते हैं। अतः यज्ञादि शुभ कार्योंकी सफलतार्थ शास्त्रविहित अग्निका ही व्यवहार करना चाहिये। शास्त्रोक्त विधिके अनुकूल अग्निके व्यवहार करनेसे ही किया हुआ कर्म फलप्रद होता है।

वेदोंमें अग्निका सबसे अधिक महत्त्व पाया जाता है। वेदोंमें अग्निको [1]'सर्वदेवता' कहा गया है—**'अग्निर्वै सर्वा देवताः'** (शतपथब्रा० ५।२।४।६)। इन्द्र, मित्र, वरुण, यम, मातरिश्वा, सोम, रुद्र आदि समस्त देवता अग्निके ही स्वरूप हैं। एक ही अग्निकी उपासनासे समस्त देवताओंकी उपासना हो जाती है। अग्निकी उपासनाके बिना अन्य देवताकी उपासना सर्वथा असम्भव है। अतः वैदिक-धर्मके ज्ञाताओंने अग्निको सर्वदासे अपनाया है और वे अग्निके द्वारा ही समस्त देवताओंको सन्तुष्ट करते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेदोंमें अग्निके महत्त्वके बारेमें इस प्रकार लिखा है—

अग्निर्वै देवानामवमः।	(ऐतरेयब्रा० १।१।१)
अग्निर्वै देवानां प्रथमः।	(ऐतरेयब्रा० २४।१।१)
अग्निः सर्वा देवताः।	(तैत्तिरीयब्रा० १।४।५।२७)
अग्निः सर्वा देवताः।	(तैत्तिरीयब्रा० १।८।१०।३७)
अग्निः सर्वा देवताः।	(निरुक्त, परिशिष्ट० १४।३२)
अग्निः सर्वा देवताः।	(निरुक्त, दैवतकाण्ड १।१७)
अग्निः सर्वा देवताः।	(शतपथब्रा० ३।४।१।१९)
अग्निर्वै सर्वा देवताः।	(शतपथब्रा० १।६।३।७)
अग्निर्वै सर्वा देवताः।	(शतपथब्रा० ३।१।३।१)
अग्निर्वै सर्वा देवताः।	(ऐतरेयब्रा० ३।१।३।१)
अग्निर्वै सर्वा देवताः।	(षड्विंशब्रा० ३।७)
अग्निर्वै सर्वा देवताः।	(शतपथब्रा० ५।२।४।६)
अग्निर्वै सर्वा देवताः।	(तैत्तिरीयब्रा० १।४।५।२७)
अग्निर्वै देवताः।	(ऐतरेयब्रा० १।१।१)
अग्निर्वै देवता।	(ऐतरेयब्रा० (२०।१)
अग्निर्देवता।	(ऐतरेयब्रा० २०।१)
अग्निर्वै देवानां व्रतपतिः।	(शतपथब्रा० १।१।१।२)
अग्निर्वै देवानां सेनानी।	(ऐतरेयब्रा०)
अग्निर्वै देवानां यष्टा।	(तैत्तिरीयब्रा० ३।३।७।४३)
अग्निर्वै देवानां अन्नादः।	(तैत्तिरीयब्रा० ३।१।४।२७)
अग्निर्वै दवानां नेदिष्ठम्।	(शतपथब्रा० १।६।२।११)
अग्निर्वै देवानां गोपाः।	(ऐतरेयब्रा० ५।२)
अग्निर्वै सर्वे यज्ञाः।	(शतपथब्रा० ४।५।२।१३)
अग्निर्ह्येव यज्ञः।	(शतपथब्रा० ३।२।२।९)
अग्निरु देवानां प्राणः।	(शतपथब्रा० १०।१।४।१२)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अग्निर्हि देवानां जठरम् । (तैत्तिरीयब्रा० २।७।१२)
अग्निर्यज्ञस्य हव्यवाट् । (तैत्तिरीयब्रा० ३।६।२।३)
अग्नौ ह देवाः । (शतपथब्रा० २।३।४।१)
अग्नौ हि सर्वान् यज्ञाँस्तन्वते । (शतपथब्रा० ४।५।२।१३)
आग्नेयो वा एष यज्ञः । (शतपथब्रा० ४।५।२।१५)
अग्निर्हि रक्षसामपहन्ता । (शतपथब्रा० १।२।१।६)
अग्निरु सर्वेषां पाप्मनामपहन्ता । (शतपथब्रा० ७।३।२।१६)
सर्वदैवत्योऽग्निः । (शतपथब्रा० ६।१।२।२८)

महाभारतमें भी अग्निका महत्त्व यों लिखा है—

अग्निर्हि देवताः सर्वाः । (महाभारत, अनुशासन० ८५।५६)
अग्निर्विष्णुः । (महाभारत, शान्तिपर्व ३४२।१५)
अग्निर्ब्रह्म । (महाभारत, शान्तिपर्व ३४२।१२)
अग्निर्हि यज्ञानां होता । (महाभारत, शान्तिपर्व ३४२।१२)

अग्निको यज्ञका देवता कहा गया है। यज्ञादिमें '**अग्निमीडे पुरोहितम्**' (ऋग्वेद १।१।१) इस मन्त्रके द्वारा जिस अग्निदेवताकी स्तुति की जाती है और '**अग्न आयाहि वीतये**' (ऋग्वेद ६।१६।१०) इस मन्त्रके द्वारा जिस अग्नि-देवताको यज्ञार्थ आवाहित किया जाता है, वह अग्नि 'अथर्वा' ऋषिके द्वारा प्राणापानरूपी दो अरणियोंके घर्षण (मन्थन) करने पर प्रकट होनेवाली परम पवित्र अग्नि है, जिसको महर्षि अथर्वाके पुत्र 'दध्यङ' ऋषि ने प्रज्वलित किया था।

वेदमें कहा है—

'अथर्वा त्वा प्रथमो निरमन्थदग्ने ।'
(कृष्णयजुर्वेद ४।१।३)
'तमुत्वा दध्यङ् ऋषिः पुत्र ईधे अथर्वणः ।'
(कृष्णयजुर्वेद ४।१।३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत ।'
(शुक्लयजुर्वेद १५।२२)

वेदोंमें जिस अग्निकी विशेष प्रशंसा और महत्ताका उल्लेख है, वह अथर्वा ऋषिके द्वारा प्रकट की गई अग्निकी है, जिसे 'अधिदैवाग्नि' कहा गया है। उस परम पवित्र अधिदैवाग्निकी स्तुति महर्षि भरद्वाजने इस प्रकार की है—

अपत्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्ने दुराध्यम् ।
दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥
(ऋग्वेद ६।५१।१३)

'हे सत्पते ! सज्जनोंके रक्षक अग्निदेव ! तुम पापी तथा चोर–तस्कर आदि शत्रुओंको हमसे दूर करो अथवा उन्हें सन्मार्ग पर आरूढ़ करो, जिससे वे हमसे सर्वदा दूर रहें ।'

अथर्वा ऋषिके द्वारा प्रकटित अधिदैवाग्निके अन्दर ही 'जातवेदा' नामक अग्नि रहता है, जो कि देवताओंके निमित्त समर्पित किये हुए हविर्द्रव्यको ग्रहण कर देवताओंके पास पहुँचाता है। उस 'जातवेदा' अग्निके सम्बन्धमें वेद कहता है—

क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूरं
यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः ।
इहैवायमितरो जातवेदा
देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ॥
(शुक्लयजुर्वेद ३५।१९)

'मैं क्रव्याद (शवको भक्षण करनेवाले) अग्निको नहीं चाहता, किन्तु क्रव्याद अग्निके भीतर रहनेवाले 'जातवेदा' अग्निको चाहता हूँ, जो कि देवताओंके निमित्त हविर्द्रव्य ग्रहण करता है, मैं उस अधिष्ठातृ-देव को चाहता हूँ ।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्राचीनकालमें प्रत्येक गृहस्थ अग्नितत्त्वसे पूर्ण परिचित रहा करते थे। वे लोग अग्निके यथार्थ महत्त्व और रहस्यको भलीभाँति जानते थे। इसीलिये वे अपने-अपने घरमें अखण्ड अग्नि अथवा अखण्ड ज्योति (अखण्ड दीपक) रखनेकी सर्वदा व्यवस्था रखते थे। इस तहर वे सारी रात्रिमें तेलका दीपक जलाकर अपने घरोंको प्रकाशमय रखते थे। उस समय प्रत्येक गृहस्थ धन-धान्यसे सर्वदा समृद्ध रहता था। किन्तु जबसे हमने अपने घरोंमें अखण्ड अग्नि अथवा अखण्ड ज्योतिका रखना बन्द कर दिया और रात्रिमें दीपक जलाना बन्द कर दिया, तभीसे हमारे घर अन्धकारसे परिपूर्ण हो गये और हम लक्ष्मीविहीन होगये। अतः समस्त प्रकारकी सुख-सम्पत्तिकी कामनावालोंको सर्वदा अपने घरोंमें अखण्ड अग्नि अथवा अखण्ड ज्योतिकी व्यवस्था करनी चाहिये। अखण्ड दीपकका सम्बन्ध मनुष्यके जीवन और मरणसे भी है।

गृहस्थोंके यहाँ जब 'बालक' पैदा होता है, तो वे 'प्रसूतिगृह' के द्वार पर दश दिन तक 'अखण्ड दीपक' और 'अखण्ड अग्नि' रखते हैं। इससे जच्चा और बच्चा दोनोंकी सब प्रकारसे रक्षा होती है। उन्हें भूत, प्रेत एवं बालग्रह आदिकी ऊपरी बाधाओंका भय नहीं रहता। इसी प्रकार अग्निके और भी अनेक लाभ हैं। शहरों और ग्रामोंके जिन मकानोंमें अथवा जिन गलियोंमें भूत, प्रेतका भय सुना जाता था, आज वहाँ बिजलीकी रोशनी लग जानेसे भूत, प्रेत आदिका भय सर्वदाके लिये दूर हो गया और पता नहीं भूत, प्रेत आदि कहाँ चले गये। जिन मकानोंमें विजलीकी रोशनी नहीं है अथवा विजलीकी रोशनी लगनेका कोई साधन नहीं है, उन मकानोंमें संयोगवश यदि भूत, प्रेतका भय प्रतीत हो तो उन मकानोंमें विधिपूर्वक हवन करनेसे सर्वदाके लिये वहाँसे भूत, प्रेत अन्यत्र चले जाते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इसी प्रकार जब मनुष्यकी मृत्यु होती है, तब भी उसके मृत्युके स्थानमें और उसके गृहके द्वार पर दश दिन तक दीपक (अखण्ड दीपक) जलाया जाता है। इससे मृतकके शोक-मोह आदि मानसिक वेदनाओंकी निवृत्ति तथा मृतकके स्थानकी शुद्धि हो जाती है। दीपक जलाये बिना मृतकका स्थान शुद्ध नहीं होता और भूत, प्रेत आदि बाधाओंका भय सर्वदा बना रहता है।

इसी प्रकार मनुष्यके यहाँ श्राद्धमें, देवपूजनमें, दीपावली आदि त्यौहारोंमें दीपक जलाया जाता है। अतः स्पष्ट है कि प्रत्येक कार्यमें दीपक जलाना अनिवार्य है। दीपक जलानेसे ही प्रत्येक कार्यकी पूर्णता कही गई है। जिस कार्यमें दीपक नहीं जलाया जाता, वह कार्य पूर्ण नहीं होता। कहा भी है—

'विना दीपेन सकला कार्यसिद्धिर्न जायते।'

यज्ञ और अग्निका पारस्परिक सम्बन्ध बहुत प्राचीन कालसे चला आ रहा है। विराट् पुरुषने जब प्राणाग्निमें अपना हवन करके जगत्का कल्याण किया था, तभीसे यज्ञ और अग्निका अटूट सम्बन्ध चला आ रहा है। अतः यज्ञ और अग्नि दोनों ही मनुष्यके लिये शाश्वत सनातन धर्म हैं। जो यज्ञ और अग्नि मनुष्यके लिये शाश्वत सनातन धर्म हैं, उन भगवान् यज्ञनारायण और भगवान् अग्निनारायणकी प्रसन्नतार्थ यज्ञ और अग्निकी उपासना आवश्यक है। जिस घरमें यज्ञ और अग्निकी उपासना होती है, वह घर देवमन्दिरके सदृश पवित्र बन जाता है और जिस घरमें यज्ञ और अग्निकी उपासना नहीं होती, वह घर श्मशानके सदृश अपवित्र बन जाता है।

स्वाहा-स्वधा-स्वस्तिविवर्जितानि
श्मशानतुल्यानि गृहाणि तानि॥

आजके नास्तिकतापूर्ण जमानेमें वे लोग विशेष धन्यवादार्ह हैं, जो यज्ञ करते-कराते हैं और जो यज्ञमें सर्वदेवमय अग्निदेवके द्वारा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

देवताओंको हविर्द्रव्य प्रदान कर यज्ञ-परम्पराको अद्यावधि किसी-न किसी रूपमें प्रचलित एवं जीवित रखे हुए हैं।

अनादि कालसे प्रचलित यज्ञ-परम्पराको जीवित और रक्षित रखना ही मानव-धर्म है। जो मनुष्य यज्ञ-परम्पराको जारी नहीं रखते, अथवा उसकी रक्षा नहीं करते, वे मनुष्य केवल इन्द्रियोंके सुखको भोगनेवाले और पापपूर्ण आयुको गँवानेवाले होते हैं। अतः स्पष्ट है कि यज्ञ-विहीन मनुष्यका जीवन व्यर्थ ही होता है। गीता (३।१६) में भी इसकी पुष्टि की गई है—

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥

यज्ञ और अग्निके यथार्थ रहस्य एवं महत्त्वसे परिचित होनेके लिये वेदोंका अनुशीलन आवश्यक है।

अन्तमें हम अग्निमहत्त्वसूचक शुक्लयजुर्वेद (४।१६) के एक मन्त्रको उद्धृत कर अपने लेखको समाप्त करते हैं—

त्वमग्ने व्रतपा ऽअसि देव ऽआ मर्त्येष्वा।
त्वं यज्ञेष्वीड्यः॥

'हे अग्ने! तुम व्रतको पालन करनेवाले हो, अतः तुम देवताओं और मनुष्योंमें रहनेवाले हो। तुम यज्ञोंमें स्तुतिके योग्य हो।'

—पं० प्रेम दत्त शास्त्री

जहांगीराबाद २०२३६४

बुलन्दशहर (उ० प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ और विष्णु

*'यज्ञो हि भगवान् विष्णुः' (विष्णुधर्मोत्तरपु० १६२।२)
'यज्ञरूपो हि भगवान्' (देवीभागवत ६।४३।१२)
'भगवान् सर्वयज्ञभुक्' (श्रीमद्भागवत ७।१४।१७)

—के अनुसार भगवान् विष्णु यज्ञ, यज्ञस्वरूप और यज्ञभोक्ता हैं। भगवान् विष्णुसे ही समस्त यज्ञ प्रकट हुए हैं, अतः सभी यज्ञ भगवान्‌के ही स्वरूप हैं। इसलिये समस्त यज्ञोंके द्वारा भगवान् विष्णुका ही यजन-पूजन होता है।

भागवतमें लिखा है—

देशः कालः पृथग् द्रव्यं मन्त्रतन्त्रर्त्विजोऽग्नयः ।
देवता यजमानश्च क्रतुधर्मश्च यन्मयः ॥
स एष भगवान् साक्षात् विष्णुर्योगेश्वरेश्वरः ।
(१०।२३।४७-४८)

'देश, काल, पृथक्-पृथक् हवनीय द्रव्य, मन्त्र, तन्त्र, ऋत्विज, अग्नि, देवता, यजमान, यज्ञ और धर्म—ये सभी साक्षात् भगवान् विष्णुके ही स्वरूप हैं।'

पद्मपुराणमें भी कहा है—

असौ यज्ञेश्वरो यज्ञो यज्ञभुग् यज्ञकृद् विभुः ।
यज्ञभृद् यज्ञपुरुषः स एव परमेश्वरः ॥
(उत्तरखण्ड २२६।७६)

'यह भगवान् विष्णु यज्ञेश्वर, यज्ञ, यज्ञभोक्ता, यज्ञकर्ता, यज्ञस्वामी, यज्ञपोषक, यज्ञपुरुष और परमेश्वर कहे जाते हैं।'

विष्णुसहस्रनाममें लिखा है —

यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ।
यज्ञभृद् यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः ॥

*'यज्ञो वै विष्णुः' (शतपथब्रा० १।१।१।२)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञान्तकृद् यज्ञगुह्यम् .... ।

'भगवान् स्वयं यज्ञ हैं, यज्ञपति हैं, यजमान हैं, यज्ञाङ्ग हैं, यज्ञ-निर्वाहक हैं, यज्ञ-संरक्षक हैं, यज्ञ-विस्तारक हैं, यज्ञशेषी हैं, यज्ञभोक्ता हैं, यज्ञप्राप्तिके साधन हैं, यज्ञके पूर्ण करानेवाले हैं और यज्ञके पूर्ण ज्ञाता हैं।'

मार्कण्डेय पुराण (१०३।१०) के **'विष्णुस्वरूपमखिलेष्टिमयं विवस्वन्'** इस वचनानुसार वेदोक्त समस्त इष्टियाँ (दर्शपौर्णमासेष्टि आदि श्रौतयाग) भगवान् विष्णुकी ही स्वरूप हैं इसीलिये भगवान् विष्णुको समस्त यज्ञोंका स्वरूप कहा गया है—

'सर्वक्रतुमयो विष्णुः ।' (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ७१।३१४)

भगवान्ने भी अपने सम्बन्धमें यों कहा है—

'यज्ञरूपी विष्णुरहम् ।' (देवीभागवत ९।४५।७८)

'मैं ही यज्ञरूपी विष्णु हूँ ।'

'यज्ञरूपी विष्णुरहम् ।' (ब्रह्मवैवर्तपु० प्रकृतिखण्ड ४२।८९)

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ॥

(गीता ९।१६)

'मैं क्रतु (श्रौतयज्ञ) हूँ, मैं यज्ञ (स्मार्तयज्ञ) हूँ, मैं स्वधा हूँ, मैं औषध हूँ, मैं मन्त्र हूँ, मैं घृत हूँ, मैं अग्नि हूँ और मैं ही हवनरूप कर्म हूँ ।'

'अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च ।'

(गीता ९।२४)

'समस्त यज्ञोंका भोक्ता और प्रभु (स्वामी) मैं ही हूँ ।'

दक्षप्रजापतिके यज्ञमें विघ्न उपस्थित होने पर अनेक देवताओंकी प्रार्थनासे दक्षके यज्ञमें आये हुए भगवान् विष्णुकी स्तुति करते हुए ब्राह्मणोंने कहा है—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

त्वं क्रतुस्त्वं हविस्त्वं हुताशः स्वयं
त्वं हि मन्त्रः समिद्दर्भपात्राणि च।
त्वं सदस्यर्त्विजो दम्पती देवता
अग्निहोत्रं स्वधा सोम आज्यं पशुः॥
(भागवत ४।७।४५)

'भगवन्! आप ही यज्ञ, हवि, अग्नि, मन्त्र, समिधा, कुशा और यज्ञपात्र हैं तथा आप ही सदस्य, ऋत्विज, यजमान एवं उसकी धर्मपत्नी, देवता, अग्निहोत्र, स्वधा, सोमरस, घृत और पशु हैं।'

स प्रसीद त्वमस्माकमाकाङ्क्षतां
दर्शनं ते परिभ्रष्टसत्कर्मणाम्।
कीर्त्यमाने नृभिर्नाम्नि यज्ञेश ते
यज्ञविघ्नाः क्षयं यान्ति तस्मै नमः॥
(भागवत ४।७।४७)

'हे यज्ञेश्वर! जब लोग आपके पवित्र नामका संकीर्तन करते हैं, तब यज्ञके समस्त विघ्न नष्ट हो जाते हैं। हमारा यह यज्ञरूप सत्कर्म नष्ट होगया था, अतः हम आपके दर्शनोंकी इच्छा कर रहे थे। अब आप हम पर प्रसन्न हो जाइये, आपको नमस्कार है।'

विष्णुपुराण (५।२१।९७) में लिखा है—

यज्ञैस्त्वमिज्यसेऽचिन्त्य सर्वदेवमयाच्युत।
त्वमेव यज्ञो यष्टा च यज्वनां परमेश्वर॥

'हे अचिन्त्य! हे सर्वदेवमय! हे अच्युत! समस्त यज्ञोंसे आप ही का यजन किया जाता है तथा हे परमेश्वर! आप ही यज्ञ करनेवालोंके यष्टा और यज्ञस्वरूप हैं।'

वेदोंमें लिखा है कि यज्ञ ही विष्णु है और विष्णु ही यज्ञ है—

यज्ञो वै विष्णुः। (तैत्तिरीयब्रा० १।२।५।४०)
यज्ञो वै विष्णुः। (तैत्तिरीयब्रा० १।३।८।५२)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञो वै विष्णुः । (तैत्तिरीयब्रा० १।४।३)
यज्ञो वै विष्णुः । (तैत्तिरीयब्रा० १।८।२।२)
यज्ञो वै विष्णुः । (ऐतरेयब्रा० १।१५)
यज्ञो वै विष्णुः । (ऐतरेयब्रा० ३।४)
यज्ञो वै विष्णुः । (शतपथब्रा० १।१।१।२)
यज्ञो वै विष्णुः । (शतपथब्रा० १।१।२।१३)
यज्ञो वै विष्णुः । (शतपथब्रा० ५।४।५।१९)
यज्ञो वै विष्णुः । (शाङ्खायनब्रा० ४।२)
यज्ञो वै विष्णुः । (तैत्तिरीयसंहिता १।७।४)
यज्ञो वै विष्णुः । (तैत्ति० शा० २।५।७।३)
यज्ञो ह वै विष्णुः । (शतपथब्रा० १९।१।१)
विष्णुर्वै यज्ञः । (ऐतरेयब्रा० १।१५)
विष्णुर्वै यज्ञः । (कपि० शा० ३५।९)
विष्णुर्व यज्ञः । (तैत्ति० शा० ६।२।८।७)
विष्णुर्वै यज्ञः । (मै० शा० ४।६।२)
यो वै विष्णुः स यज्ञः । (शतपथब्रा० ५।२।३।६)

भागवत आदि पुराणोंमें तो सभी यज्ञोंको विष्णुपरक ही स्वीकार किया है—

वासुदेवपरा मखाः । (भागवत १।२।२८)
नारायणपरा मखाः । (भागवत २।५।१५)
नारायणपरा यज्ञाः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ८०।९२)
नारायणपरा यज्ञाः । (ब्रह्मपुराण ६०।२६)
नारायणपरो यज्ञः । (मत्स्यपुराण २४७।३६)

जो विष्णु साक्षात् यज्ञस्वरूप और यज्ञपति हैं, उन भगवान् विष्णुका महत्त्व वेदादि शास्त्रोंमें इस प्रकार लिखा है—

विष्णुमुखा वै देवाः । (नारायणोपनिषद् १०)
विष्णुः सर्वा देवताः । (ऐतरेयब्रा० १।१।१)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विष्णुर्वै देवानां परमः । (ऐतरेयब्रा० १।१।६)
विष्णुर्देवानां श्रेष्ठः । (शतपथब्रा० १४।१।१।५)
मूलं हि विष्णुर्देवानाम् । (भागवत १०।४।३६)
विष्णुरेव परं ब्रह्म । (पद्मपुराण, पातालखण्ड ६७।६०)
ईश्वरो भगवान् विष्णुः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड २२६।६६)
सर्वदेवमयो विष्णुः । (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ६४।३४)
सर्वतीर्थमयो विष्णुः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ७१।३१३)
सर्वपापहरो विष्णुः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड १२६।८२)
नास्ति विष्णुसमो देवः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड २६।८६)

अतः मनुष्यको भगवान् विष्णुके यथार्थ स्वरूप और महत्त्वको समझकर यज्ञ करना चाहिये । जो मनुष्य भगवान् विष्णुके यथार्थ स्वरूप और महत्त्वको न जानकर यज्ञ करता है, उसे पाखण्डी कहते हैं—

समस्तयज्ञभोक्तारमविदित्वाऽच्युतं हरिम् ।
उद्दिश्य देवता एव जुहोति च ददाति च ॥
स पाषण्डीति विज्ञेयः..........................।.........॥

(पद्मपुराण, उत्तरखण्ड २३५।८-६)

'समस्त यज्ञोंके भोक्ता भगवान् विष्णुको न जानकर केवल दूसरे देवताओंके उद्देश्यसे जो यज्ञ एवं दान करता है, उसे पाखण्डी कहा गया है ।'

यह भारतवर्ष सर्वदासे 'यज्ञिय देश' कहा जाता है । यहाँ प्राचीन कालसे ही भारतके प्रत्येक प्रान्त, प्रत्येक नगर, प्रत्येक ग्राम और प्रत्येक घरमें सर्वदा यज्ञ होते थे । उस समय भारतवर्षकी स्थिति इस प्रकार थी—

ग्रामे ग्रामे स्थितो देवो ग्रामे ग्रामे स्थितो मखः ।
गेहे गेहे स्थितं द्रव्यं धर्मश्चैव जने जने ॥

(भविष्यपुराण, प्रतिसर्गपर्व)

'भारतके प्रत्येक ग्राममें देव-मन्दिर था, प्रत्येक देशमें यज्ञ होता

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

था, प्रत्येक घरमें द्रव्यका अटूट भण्डार भरा रहता था और प्रत्येक मनुष्यमें धर्मका अस्तित्व होता था।'

भारतवर्षकी धार्मिकता और यज्ञ-परम्परा प्रसिद्ध है। भारतवर्षकी धार्मिकता और यज्ञ-परम्परासे सन्तुष्ट होकर देवगण सर्वदा भारतवर्षमें ही निवास करते हैं, वे दूसरे देशोमें नहीं जाते। देवताओंके भारतवर्षमें रहने के कारण भारतवर्षका अत्यन्त महत्त्व है। इसीलिये भारतवर्षको 'देवभूमि' कहा गया है।

ब्रह्मपुराण (१९।२२-२३) में लिखा है—

पूरुषैर्यज्ञपुरुषो जम्बूद्वीपे सदेज्यते।
यज्ञैर्यज्ञमयो विष्णुरन्यद्वीपेषु चान्यथा॥
अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा यतोऽन्या भोगभूमयः॥

'जम्बूद्वीपमें मनुष्योंके द्वारा यज्ञपुरुष भगवान् विष्णुका सर्वदा यज्ञ हुआ करता है। यज्ञोंके कारण यज्ञस्वरूप भगवान् विष्णु दूसरे द्वीपोंमें न जाकर सर्वदा जम्बूद्वीपमें ही निवास करते हैं। इस जम्बूद्वीपमें भी 'भारतवर्ष' विशेष श्रेष्ठ है, जो कि यज्ञोंके कारण 'कर्मभूमि' कहलाता है और दूसरे द्वीप 'भोगभूमि' कहलाते हैं।'

भागवत (१०।८४।३५) में कहा है—

कर्मणा कर्मनिर्हारः एष साधु निरूपितः।
यच्छ्रद्धया यजेद् विष्णुं सर्वयज्ञेश्वरं मखैः॥

'कर्मोंके द्वारा कर्मवासनाओं और कर्म-फलोंका आत्यन्तिक नाश करनेका सबसे श्रेष्ठ उपाय यज्ञ है। अतः यज्ञादिके द्वारा समस्त यज्ञोंके अधिपति भगवान् विष्णुका श्रद्धापूर्वक आराधन करना चाहिये।'

भगवान् विष्णु सबके आराध्य और पूज्य हैं। अतः उन्हें सन्तुष्ट करनेके लिये यज्ञ ही एकमात्र साधन है। इसलिये प्रत्येक मनुष्यको

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

परमाराध्य आदिनारायण भगवान् विष्णुका सर्वदा यजन करना चाहिये। क्योंकि वे यज्ञोंके द्वारा ही आराधनीय हैं—**'यज्ञैराराधितो विष्णुः'** (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड २०२।८)।

यज्ञ और प्रजापति

शतपथब्राह्मण (११।१।८।३) में कहा है कि प्रजापतिने अपनी प्रतिमा (चित्र) के रूपमें सर्वप्रथम यज्ञको उत्पन्न किया—

'अथैनमात्मनः प्रतिमामसृजत यद् यज्ञम्, तस्मादाहुः प्रजापतिर्यज्ञ इत्यात्मनो ह्येनं प्रतिमामसृजत।'

ऐतरेयब्राह्मण (२५।७) में कहा है—

'स प्रजापतिर्यज्ञमतनुत, तमाहरत्, तेनायजत।'

'पहले प्रजापतिने अपनी इच्छासे यज्ञका विस्तार किया। पश्चात् उन्होंने यज्ञसामग्रियोंको एकत्रित कर उनसे यज्ञ प्रारम्भ किया।'

शाङ्खायन ब्राह्मण (२८।१) में लिखा है—

'प्रजापतिर्ह यज्ञं ससृजे, तेन ह सृष्टेन देवा ईजिरे, तेन हेष्ट्वा सर्वान् कामानापुः।'

'प्रजापतिने ही यज्ञकी सृष्टि (रचना) की। प्रजापतिके द्वारा रचित यज्ञसे देवताओंने यजन किया, उस यज्ञसे यजन करके देवताओंने समस्त मनोरथोंको प्राप्त किया।'

शुक्लयजुर्वेदके **'तं यज्ञम्'** (३१।९) इस मन्त्रमें कहा गया है कि सर्वप्रथम उत्पन्न भगवत्स्वरूप उस यज्ञसे इन्द्रादि देवताओं,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सृष्टिसाधन योग्य प्रजापति आदि साध्यों और मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंने यज्ञ (मानसयज्ञ) किया।[1]

गीता (३।१०) में भी कहा है—

> **सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।**
> **अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥**

'प्रजापतिने यज्ञके साथ प्रजा (मानव-जाति) की रचना कर कहा——तुमलोग मेरे द्वारा रचित यज्ञसे वृद्धि को प्राप्त हो, यह यज्ञ तुम लोगों की सभी प्रकारकी कामनाओंको पूर्ण करनेवाला होगा।'

> **यज्ञनिष्पत्तये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकार वै।**
> **चातुर्वर्ण्यं महाभाग यज्ञसाधनमुत्तमम्॥**
>
> (विष्णुपुराण १।६।७)

'हे महाभाग ! ब्रह्माजीने यज्ञानुष्ठानके लिये ही यज्ञके उत्तम साधनरूप इस सम्पूर्ण चातुर्वर्ण्य की रचना की है।'

मानव-जातिकी रचना करनेवाले प्रजापति (ब्रह्मा) ने विराट्के शरीरमें आत्म-रूपसे प्रविष्ट होकर प्रजाकी रचना की। अतः प्रजापतिको 'विराट्' अथवा 'विराट्-पुरुष' कहा जाता है। विराट्-पुरुषका विस्तृत वर्णन शुक्लयजुर्वेदके ३१वें अध्यायके '**सहस्रशीर्षा पुरुषः**' इत्यादि १६ मन्त्रोंमें किया गया है। शुक्ल यजुर्वेदके ३१वें अध्यायके १६ मन्त्रोंमें विराट्-पुरुषके अङ्गोंकी कल्पना, विराट्के विभुत्वका प्रतिपादन, विराट्के सृष्टिरूप यज्ञका वर्णन और विराट्—स्वरूप प्रजापतिके पूजनादिका वर्णन है। शुक्लयजुर्वेके ३१ वें अध्यायके प्रारम्भिक १६ मन्त्रोंमें विराट्-पुरुषका वर्णन होनेके कारण इसको 'पुरुषसूक्त' कहते हैं।

---

[1] यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः। (शु० यजु० ३१।१६)
यज्ञेन वै तद्देवा यज्ञमयजन्त। (ऐतरेयब्रा० १।१६)

पं० प्रेम दत्त शा... जहांगीराबाद २.२...

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रजापति (ब्रह्मा) के द्वारा यज्ञके साथ मनुष्यकी रचना होनेके कारण मनुष्य-जाति प्रजापतिकी सन्तति कही जाती है। अतः मनुष्य-जातिके लिये 'प्रजापति' परम पूज्य और परम आराध्य देवता हैं।

गीता (३।१५) के अनुसार सर्वव्यापी परब्रह्म परमात्मा सर्वदा यज्ञमें ही प्रतिष्ठित रहते हैं। अतः यज्ञमें प्रतिष्ठित रहनेवाले परब्रह्मकी प्रसन्नतार्थ मनुष्यको प्रजापतिके द्वारा रचित यज्ञका सर्वदा अनुष्ठान करना चाहिये। जो मनुष्य प्रजापतिके द्वारा निर्मित यज्ञका अनुष्ठान नहीं करता, वह व्यर्थ ही संसारमें जीवित रहता है।

गीता (३।१६) में भी कहा है—

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥

'हे पार्थ ! जो पुरुष इस लोकमें इस प्रकार चलाये हुए सृष्टि-चक्रके अनुसार आचरण नहीं करता है अर्थात् शास्त्रानुसार कर्म नहीं करता है, वह इन्द्रियोंके सुखको भोगनेवाला और पापपूर्ण आयुके द्वारा अपने जीवनको व्यर्थ ही गँवाता है अर्थात् यज्ञ-विहीन मनुष्यका जीवन व्यर्थ ही है।'

वेदोंमें प्रजापतिके महत्त्वका वर्णन करते हुए कहा है कि—यज्ञ ही प्रजापति है और प्रजापति ही यज्ञ है—

१—**यज्ञः प्रजापतिः।** (शतपथब्रा० ११।६।३।९)
२—**यज्ञो वै प्रजापतिः।** (तैत्तिरीयब्रा० १।३।१०)
३—**यज्ञो वै प्रजापतिः।** (तैत्तिरीयब्रा० १।३०।१०।६५)
४—**यज्ञो वै प्रजापतिः।** (तैत्तिरीयब्रा० ३।३।७।४०)
५—**यज्ञो वै प्रजापतिः।** (शाङ्खायनब्रा० १०।१)
६—**प्रजापतिर्यज्ञः।** (शतपथब्रा० १।१।१।१)
७—**प्रजापतिर्यज्ञः** (शतपथब्रा० ५।४।५।१९)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८—प्रजापतिर्यज्ञः । (शतपथब्रा० ११।१।८।३)
९—प्रजापतिर्वै यज्ञः । (गोपथब्रा० पूर्व० २।१८)
१०—प्रजापतिर्वै यज्ञः । (ऐतरेयब्रा० १९।५)
११—प्रजापतिर्वै यज्ञः । (शाङ्खायनब्रा० १३।१)
१२—एष वै प्रत्यक्षं यज्ञो यत्प्रजापतिः । (शतपथब्रा० ४।३।४।३)

प्रजापतिकी अनन्त महिमा है। प्रजापतिका सिर द्यौ है, नेत्र सूर्य हैं और पैर पृथिवी हैं। समष्टि और व्यष्टि-रूपसे समस्त शक्तियोंमें प्रजापतिकी ही दिव्य शक्ति और महिमा व्याप्त है।

प्रजापतिको समष्टि-जगत्के अधिपतिरूपमें 'परमात्मा' कहा जाता है और उन परमात्माको सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, वरुण और इन्द्र आदि नामोंसे व्यवहृत किया गया है—**'इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निम्'** (ऋग्वेद १।१६४।४६)।

'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' (ऋ० १।१६४।४६) के अनुसार सविताको (ऋ० ४।५३।२), सोमको (ऋ० ९।५।९), वायुको (अथर्व० २।३४।४), सूर्यको (अथर्व० ४।१५।११), विष्णुको (अथर्व० १७।१।१८) और प्राणको (अथर्व० ११।६।१२) 'प्रजापति' कहा है।

'महाभाग्याद् देवताया एक आत्मा बहुधा स्तूयते। एकस्यात्मनोऽन्ये देवाः प्रत्यङ्गानि भवन्ति।'

(निरुक्त, दैवतकाण्ड ७।४)

'प्रजापतिकी विशिष्ट महिमा होनेके कारण उन एक ही आत्माकी अनेक रूपोंमें स्तुति की गई है, जिससे स्पष्ट है कि—एक ही प्रजापति अनेक हैं और दूसरे समस्त देवता उन्हीं एक आत्माके भिन्न-भिन्न अङ्ग हैं।'

विराट्-स्वरूप प्रजापतिके सूर्य आदि समस्त देवगण शरीर ही माने जाते हैं। अतः सूर्य आदि देवगण सर्वदा प्रजापतिकी महिमाका

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गुणगान करते रहते हैं। प्रजापतिको यज्ञिय-देवता कहा गया है। जिस प्रकार प्रजापति यज्ञिय-देवता हैं, उसी प्रकार सूर्य आदि देवता भी यज्ञिय देवता हैं। जिस प्रकार हमलोग अपने अङ्गोंका संचालन और संरक्षण करते हैं, उसी प्रकार प्रजापति भी अपने अङ्ग-स्वरूप देवताओंका संचालन और संरक्षण करते हैं।

शुक्लयजुर्वेदके 'अजो हि०' (१३।५१) इस मन्त्रमें कहा गया है कि प्रजापतिने प्रजाकी सृष्टि-कामनासे यज्ञ प्रारम्भ किया और उस यज्ञकी अग्निमें अपनी वपा (हृदयकी चर्बी) निकालकर उसका हवन किया। अतः जब कि प्रजापतिने सृष्टि-समृद्धिके लिये अपनी वपाद्वारा यज्ञ किया है, तो उनकी सन्तुष्टिके लिये हमें भी हवनीय द्रव्यद्वारा अवश्य ही यज्ञ करना चाहिये।

यज्ञ और गौ

वेदादि शास्त्रोंमें गौ और गौके दुग्ध, दधि घृत, गोमूत्र और गोबरका बहुत ही महत्त्व लिखा है। इनका उपयोग प्रत्येक श्रौत-स्मार्त यज्ञादि कर्ममें होता है। गौके गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत आदिसे ही पञ्चामृत और पञ्चगव्य बनता है। यज्ञमें यजमानको अपनी देह-शुद्धिके लिये पञ्चगव्यका प्राशन करना पड़ता है। यज्ञभूमि और यज्ञमण्डप आदिको पवित्र करनेके लिये गोमूत्रसे प्रोक्षण और गोबरसे लेपन किया जाता है। यज्ञकी अग्नि गोबरके कण्डोंसे ही प्रज्वलित की जाती है। यज्ञोंमें गोघृतकी ही प्रधानता होती है। देवगण गोघृतको ही ग्रहण करते हैं। इसीलिये हवनमें गोघृतका ही उपयोग विशेषरूपसे किया जाता है। अतः सिद्ध है कि गौके दुग्ध, दधि, घृत आदि पदार्थ यज्ञके प्रधान अङ्ग हैं, इनके बिना कोई भी यज्ञ और कोई भी धार्मिक अनुष्ठान सुसम्पन्न नहीं हो सकता।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ऋते दधि घृतेनेह न यज्ञः सम्प्रवर्तते।
तेन यज्ञस्य यज्ञत्वमतो मूलं च कथ्यते॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ८३।२)

'गौके दधि और घृतके बिना यज्ञ नहीं हो सकता, अतः गौसे ही यज्ञका यज्ञत्व (सत्ता) है। इसलिये गौको यज्ञका मूल कहा गया है।'

यज्ञाङ्गं कथिता गावो यज्ञ एव च वासव।
एताभिश्च विना यज्ञो न वर्तेत कथञ्चन॥
धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा।
एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि वीजानि विविधानि वै।
ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ८३।१७–१९)

'गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञ ही कहा है। इनके बिना यज्ञ कथमपि नहीं हो सकता। ये अपने दुग्ध और घृतसे प्रजाका पालन-पोषण करती हैं तथा इनके पुत्र (बैल) खेतीके काममें आते हैं और विविध प्रकारके अन्न तथा बीज उत्पन्न करते हैं, जिनसे यज्ञ सुसम्पन्न होते हैं और सर्वदा हव्य-कव्यका भी कार्य चलता है।'

और भी कहा है—

अन्नं हि परमं गावो देवानां परमं हविः।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७८।७)

'गौएँ ही परम अन्न हैं और वे देवताओंकी परम पवित्र हवि हैं। स्वाहाकार और वषट्कार गौओंमें ही नित्यरूपसे स्थित रहते हैं।'

'गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।'

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७८।८)

'गौएँ ही यज्ञका फल देनेवाली हैं और गौओंमें समस्त यज्ञ प्रतिष्ठित रहते हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'यज्ञैरवाप्यते सोमः स च गोषु प्रतिष्ठितः।'

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७७।१४)

'यज्ञ करनेसे सोमकी प्राप्ति होती है और वह यज्ञ गौओंमें प्रतिष्ठित रहता है।'

'गोभ्यो हविः प्रजायेत यज्ञसिद्धिस्ततोऽनिशम्।'

'गौओंसे दुग्ध, घृतादि हविष्य-पदार्थोंकी उत्पत्ति होती है, जिनसे निरन्तर यज्ञकी सिद्धि होती है।'

'गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम्।'

(महाभारत, अनुशासनपर्व ५१।५९)

'गौएँ ही यज्ञका सञ्चालन करनेवाली हैं और गौएँ ही यज्ञकी मुख-रूपा हैं।'

'गावो वितन्वते यज्ञं गावः सर्वाघसूदनाः।'

(विष्णुसंहिता २३।५८)

गौएँ घृत आदिके द्वारा यज्ञका विस्तार करती हैं और वे समस्त प्रकारके पापोंका नाश करनेवाली हैं।'

शुक्लयजुर्वेदके **'सा विश्वायुः'** (१।४) इस मन्त्रमें स्पष्ट कहा गया है कि यज्ञकी मुख्य क्रियाएँ गोमाता पर ही निर्भर हैं।

यज्ञके आदि और अन्तमें गोदान किया जाता है। यह गोदान केवल यज्ञमें ही नहीं, किन्तु प्रत्येक धार्मिक कृत्यमें आवश्यक है। जिस कर्ममें गोदान नहीं किया जाता, वह कर्म अपूर्ण माना जाता है। अतः धार्मिक दृष्टिसे गोदानका बहुत ही महत्त्व है।

गोदानके समय जो गोमाताकी स्तुति की जाती है, उसमें भी गौको 'यज्ञका साधन' कहा गया है—

यज्ञसाधनभूताया विश्वस्याघप्रणाशिनी।
विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा॥

'समस्त यज्ञ गौकी सहायतासे परिपूर्ण होते हैं और गौ समस्त

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

संसारके पापसमूहको नाश करनेवाली है। अतः इस गौ से विश्वरूप भगवान् प्रसन्नताको प्राप्त हों।'

ब्रह्मा, विष्णु, महेशने भी गोमाताकी स्तुति करते हुए गोमाताको 'यज्ञका प्रधान कारण' बतलाया है—

त्वं माता सर्वदेवानां त्वं च यज्ञस्य कारणम्।
त्वं तीर्थं सर्वतीर्थानां नमस्तेऽस्तु सदानघे॥

(स्कन्द० ब्रह्म० धर्मारण्य० १०।१८)

'हे पापरहित गौ ! तुम समस्त देवताओंकी माता, यज्ञकी कारण-रूपा और समस्त तीर्थोंकी तीर्थरूपा हो। अतः हम तुम्हें नमस्कार करते हैं।'

जिस प्रकार देवकार्यमें गोदुग्ध और गोघृत आदिकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पितृकार्यमें भी गोदुग्ध एवं गोघृतकी आवश्यकता होती है। गौके अतिरिक्त अन्य किसीभी जीवके दुग्ध, घृत आदिको पितृगण प्रसन्नतासे ग्रहण नहीं करते। अतः समस्त देवकार्य और पितृकार्यमें गौको प्रधान साधन बतलाया है। संक्षेपतः हमारे समस्त धार्मिक अनुष्ठान गौके आधारपर ही निर्भर हैं।

गौ यज्ञस्वरूपा, यज्ञसाधिका और सर्वदेवस्वरूपा है। अतः यज्ञोंमें गोदर्शन, गोपूजन और गोदानका विशेष महत्त्व कहा गया है। पूर्व-कालमें होनेवाले यज्ञोंमें ब्राह्मणोंको दक्षिणाके रूपमें गायोंको ही दिया जाता था। इसलिये यज्ञोंमें गौकी विशेष आवश्यकता होती है। गौके बिना कोई भी यज्ञ सफल नहीं हो सकता। अतः स्पष्ट है कि यज्ञादि समस्त धार्मिक कृत्योंकी सुसम्पन्नता गोमाता पर ही निर्भर है। इसलिये यज्ञकी सुसम्पन्नतार्थ गोरक्षण परमावश्यक है। गोरक्षणको ही यज्ञरक्षण कहा गया है। गोरक्षणसे ही धर्म, अर्थ काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थोंकी प्राप्ति होती है।

गौ और यज्ञका परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। गौके बिना यज्ञ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सुसम्पन्न नहीं हो सकता और यज्ञके बिना गौकी रक्षा नहीं हो सकती। अतः गौकी रक्षार्थ यज्ञ करना आवश्यक है।

वेदादि शास्त्रोमें ×'गोयज्ञ' लिखे हैं, जिनके करनेसे गोरक्षा होती है। वैदिककालमें बड़े-बड़े 'गोयज्ञ' हुआ करते थे। भगवान् श्रीकृष्णने भी गोवर्धन-पूजनके समयमें 'गो-यज्ञ' कराया था। गो-यज्ञमें वेदोक्त गो-सूक्तोंसे गो-रक्षार्थ हवन, गोपूजन, वृषभ-पूजन आदि कार्य किये जाते हैं, जिनसे गोसंरक्षण, गोसंवर्धन, गोवंशरक्षण, गोवंशवर्धन, गोमहत्त्व-प्रख्यापन और गो-सङ्गतिकरण आदिमें विशेष लाभ होता है। आज वर्तमान समयकी विकट परिस्थिति देखते हुए गो-प्रधान भारतभूमिमें सर्वत्र गो-यज्ञकी अथवा गोरक्षा-महायज्ञकी विशेष आवश्यकता है। गोपालनन्दन भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रसे प्रार्थना है कि वे भारतवासी धर्मप्रेमी हिन्दुओंके हृदयोंमें गोरक्षार्थ 'गो-यज्ञ' करनेकी प्रेरणा करें, जिससे भारतवर्षके कोने-कोनेमें उत्साहके साथ अगणित गो-यज्ञ हों और उन गो-यज्ञोंके फलस्वरूप प्रत्येक हिन्दू भाईके मुखसे 'गो-माताकी जय हो' यह पवित्र ध्वनि सर्वदा निःसृत होती रहे, जिससे मानवमात्रका कल्याण हो।

देवी गौर्धेनुका देवाश्चादिदेवी त्रिशक्तिका।
प्रसादाद् यस्य यज्ञानां प्रभवो हि विनिश्चितः॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ५०।१३५)

'गौ देवी है, देवता है और त्रिशक्तिस्वरूप आदिदेवी है, अतः गौकी कृपासे ही समस्त यज्ञोंकी उत्पत्ति होती है, यह निश्चित है।'

———

× देखिए—गोभिलगृह्यसूत्र (३।६।११)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेदोंमें यज्ञका महत्त्व

वेद चार हैं। चारों वेदोंकी ११३१ शाखाएँ हैं, उनमें कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड—ये तीन भाग विभक्त हैं। इनके समस्त मन्त्रोंकी संख्या एक लक्ष है—

'लक्षं तु वेदाश्चत्वारः लक्षं भारतमेव च।'

(चरणव्यूह ५।१)

वेदोंके एक लक्ष मन्त्रोंमें कर्मकाण्डके ८० हजार, उपासनाकाण्डके १६ हजार और ज्ञानकाण्डके ४ हजार मन्त्र हैं। इनमें सबसे अधिक मन्त्र कर्मकाण्डमें हैं। अतः स्पष्ट है कि वेदोंमें कर्मकाण्डके जितने मन्त्र हैं, उतने अन्य किसी विषयके नहीं। इस दृष्टिसे यदि कहा जाय कि वेदोंमें कर्मकाण्ड-भागकी ही प्रधानता है और कर्मकाण्ड-भाग ही वेदोंका मुख्य विषय है, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। यदि वेदोंसे कर्मकाण्ड—भागको निकाल दिया जाय, तो वेद निर्जीव ही हो जायँगे। अतः कर्मकाण्ड-भाग अर्थात् यज्ञ-भागसे ही वेद सजीव और महत्त्वपूर्ण हैं। इस कर्मकाण्ड—भागमें विशेषकर यज्ञोंका ही प्राधान्य है। अतः वेदोंका मुख्य विषय 'यज्ञ' ही है। यज्ञोंसे ही वेद प्रतिष्ठित और मान्य हैं। इसलिये यज्ञोंकी रक्षार्थ सभीको, विशेषतः वैदिक-धर्मके अनुयायियोंको पूर्ण सचेष्ट रहना चाहिये।

यज्ञ वैदिक-संस्कृतिका प्रधान अङ्ग है। यज्ञके द्वारा ही समस्त संसारका कल्याण होता है। यज्ञमें लोक-कल्याण-भावना विशेष रूपमें निहित रहती है।

ऐतरेयब्राह्मण (१।२।३) में लिखा है—

'यज्ञोऽपि तस्यै जनतायै कल्पते।'

'यज्ञ जनताके कल्याणके लिये किया जाता है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञमें लोक-कल्याणकी भावना मुख्य है, अतः लोक-कल्याणकी दृष्टिसे सभी युगोंमें यज्ञकी नितान्त आवश्यकता है।

हमारे धर्माचार्योंने मनुष्यके लिये जितने भी धर्म कहे हैं, वे सभी यज्ञ-लक्षणसे संयुक्त (यज्ञमय) हैं। प्राचीन ऋषि-महर्षियोंने शास्त्रोंके अनुसार ही अपना जीवन यज्ञमय बनाया था। वे यज्ञ-द्वारा अपना और जगत्‌का कल्याण किया करते थे। वस्तुतः यज्ञमें अपूर्व शक्ति है। यज्ञसे जो जिस वस्तुकी प्राप्तिकी इच्छा करता है, वह उसे वही वस्तु देता है—**'यो यदिच्छति तस्य तत्।'** (कठोपनिषद् १।२।१६)।

अतः स्पष्ट है कि संसारमें ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो यज्ञके द्वारा प्राप्त न हो सके। यज्ञसे केवल ऐहलौकिक धन-धान्य, सन्तति आदि वस्तुओंकी ही नहीं, किन्तु पारलौकिक 'मोक्ष' आदि पदार्थोंकी भी प्राप्ति होती है। जिन यज्ञोंद्वारा लोक-लोकान्तरके महत्त्वपूर्ण अद्भुत मोक्षादि पदार्थोंकी प्राप्ति होती है, उनका सर्वत्र प्रचार होना चाहिये, जिससे हमारा भारतवर्ष पुनः 'यज्ञिय-देश' कहला सके।

समयकी अद्भुत गति है। जो भारतवर्ष पहले **'यज्ञिय-देश'** कहलाता था, आज वही 'अयज्ञिय-देश' कहलाता है। जिस भारतवर्षमें यज्ञोंके प्रति श्रद्धा-भक्ति थी, आज उसी भारतमें यज्ञोंके प्रति अश्रद्धाका साम्राज्य छा गया है। यज्ञोंके नामसे लोग चिढ़ने लगे हैं। सब लोग यज्ञोंको ढोंग और व्यर्थ बतलाकर यज्ञोंका विरोध करने लग गये हैं। उसीका भयङ्कर परिणाम है कि आज गीता (३।१४) के **'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः'** का यथार्थ फल प्राप्त नहीं हो रहा है। कहीं अतिवृष्टि, कहीं अनावृष्टि हो रही है, जिससे उचित मात्रामें अन्न पैदा नहीं हो रहा है। अन्नकी कमीसे आज सारा देश पीड़ित और त्रस्त है। किसीको भी सुख-शान्ति नहीं। अतः सुख-शान्तिके स्थापनार्थ सबको श्रद्धा-भक्तिपूर्वक वेदोक्त यज्ञोंको अप-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नाना चाहिये। वेदोक्त यज्ञोंको अपनानेसे ही मानव-जीवन सुखमय बन सकता है, अन्यथा कठिन है।

ऋग्वेद (८।८६।३) में कहा है कि जो मनुष्य यज्ञोंको नहीं मानता और जो यज्ञमें देवताओंके निमित्त अन्नको (हविर्द्रव्यको) स्वाहा, स्वधा, वषट्काररूपमें समर्पित नहीं करता, वह मनुष्य परलोकके समस्त सुखोंसे वञ्चित रहता है और उसे काक, गीध, कुत्ता आदिकी निकृष्ट योनि प्राप्त होती है। जो पुण्यात्मा यज्ञके प्रति श्रद्धा, विश्वास रखकर यज्ञ करता है, वह यज्ञके पुण्य-प्रतापसे 'देवता' बन जाता है।

प्राचीन कालमें सुधन्वाके तीनों पुत्र यज्ञद्वारा मनुष्यसे 'देवता' बन गये (ऋग्वेद ५।३५।८) और मरुद्गण (जो पहले मनुष्य थे) भी यज्ञरूपी पुण्यके द्वारा 'देवता' बन गये (ऋग्वेद १०।७७।२)।

शुक्लयजुर्वेद (३१।९) में आता है कि सर्वप्रथम उत्पन्न भगवत्स्वरूप उस यज्ञसे इन्द्रादि देवताओं, सृष्टि-साधन योग्य प्रजापति आदि साध्यों और मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंने [1]यज्ञ भगवान्‌का यजन किया—

तं यज्ञं वर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवा ऽअयजन्त साध्या ऽऋषयश्च ये॥

शतपथब्राह्मण (११।१।८।३) में भी लिखा है कि प्रजापतिने अपनी प्रतिमा (चित्र) के रूपमें सर्वप्रथम यज्ञको उत्पन्न किया। अतः यज्ञ साक्षात् भगवान्‌का स्वरूप है—

'अथैनमात्मनः प्रतिमामसृजत यद् यज्ञम्, तस्मादाहुः प्रजापतिर्यज्ञ इत्यात्मनो ह्येनं प्रतिमामसृजत।'

---

१. यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः। (शु० य० ३१।१६)
यज्ञेन वै तद्देवा यज्ञमयजन्त। (ऐतरेयब्रा० १।१६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञके सम्बन्धमें कहा गया है कि [1]यज्ञ ही समस्त भुवनोंका केन्द्र है और वही [2]पृथ्वीको धारण किये हुए है। यज्ञ ही साक्षात् भगवान्का स्वरूप है, जो [3]विष्णु, राम, कृष्ण, यज्ञपुरुष, प्रजापति, सविता, अग्नि, इन्द्र, सूर्य आदि नामोंसे उच्चरित होते हैं —

१ **यज्ञो वै विष्णुः।**	(शतपथब्रा० १।१।२।१३)
२ **यज्ञो वै विष्णुः।**	(तैत्तिरीयसं० १।७।४)
३ **यज्ञो वै विष्णुः।**	(कृष्णयजुर्वेदसं० ३।५।२)
४ **विष्णुर्वै यज्ञः।**	(ऐतरेयब्रा० १।१५)
५ **पुरुषो वै यज्ञः।**	(शतपथब्रा० १।३।२।१)
६ **यज्ञः प्रजापतिः।**	(शतपथब्रा० ११।६।३।९)
७ **यज्ञ एव सविता।**	(गोपथब्रा० पू० १।३३)
८ **अग्निर्वै यज्ञः।**	(ताण्ड्यब्रा० १२।५।२)
९ **इन्द्रो वै यज्ञः।**	(मै० शा० ४।३।७)
१० **यज्ञो वै स्वरहर्देवाः सूर्यः।**	(शतपथब्रा० १।१।२।२१)
११ **भगवान् यज्ञपूरुषः।**	(भागवत ४।१४।१८)
१२ **भगवान् सर्वयज्ञभुक्।**	(भागवत ७।१४।१७)
१३ **साक्षात्स यज्ञपुरुषः।**	(भागवत २।७।११)
१४ **यज्ञः सर्वगतो हरिः।**	(भागवत ८।१।१८)
१५ **यज्ञोऽहं भगवत्तमः।**	(भागवत ११।१९।३९)
१६ **यज्ञो हि भगवान् विष्णुः।**	(विष्णुधर्मोत्तर पु० १६२।२)
१७ **यज्ञरूपो हि भगवान्।**	(ब्रह्मवैवर्त पु०, प्रकृतिखण्ड ४०।११)

---

१ अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।	(ऋग्वेद १।१६४।३५)
अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।	(शु० यजुर्वेद २३।११)
यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः।	(अथर्ववेद ९।१०।१४)
२ यज्ञाः पृथिवीं धारयन्ति।	(अथर्ववेद)
३ एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति।	(ऋग्वेद १।१६४।४६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१८ यज्ञरूपी विष्णुरहम् । (ब्रह्मवैवर्त पु० प्रकृतिखण्ड ४२।७९)
१९ वासुदेवपरा मखाः । (भागवत १।२।२८)
२० नारायणपरा मखाः । (भागवत २।५।१५)
२१ नारायणपरा यज्ञाः । (ब्रह्मपुराण ६०।२६)
२२ नारायणपरा यज्ञाः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ८०।९२)
२३ नारायणपरो यज्ञः । (मत्स्यपुराण २४७।३६)
२४ प्रभो यज्ञपुमांस्त्वमेव । (पद्मपुराण,सृष्टिखण्ड ३।४६)
२५ अहं क्रतुरहं यज्ञः । (गीता ९।१६)
२६ अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्तारं प्रभुरेव च । (गीता ९।२४)
२७ तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् । (गीता ३।१५)
२८ ....क्रतुधर्मश्च यन्मयः ।
स एष भगवान् साक्षाद् विष्णुर्योगेश्वरेश्वरः ॥
(भागवत १०।२३।४७–४८)
२९ वेदयज्ञमयं रूपमाश्रित्य जगतः स्थितौ ।
स्थितः स्थिरात्मा सर्वात्मा परमात्मा प्रजापतिः ॥
(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ३।३०)

जो यज्ञ समस्त भुवनोंका केन्द्र है, जो यज्ञ समस्त पृथ्वीको धारण किये हुए है, जो यज्ञ साक्षात् भगवान्का स्वरूप है, उस यज्ञका महत्त्व चारों वेदोंमें बड़े विस्तारसे मिलता है।

वेदोंमें यज्ञको अत्यन्त महत्त्व दिया है। शुक्लयजुर्वेदके इकतीसवें अध्यायके मन्त्र ६, ७, ८, ११, १२ और १३वें मन्त्रमें कहा है कि यज्ञपुरुष परमेश्वरने यज्ञके द्वारा ही समस्त सृष्टिको, वेदोंको, चन्द्रमा, सूर्य, वायु, पञ्चप्राण, अन्तरिक्ष, द्युलोक, पृथ्वीलोक और दश दिशाओंको उत्पन्न करके सभीको स्वयं धारण कर रखा है।

तस्माद्यज्ञात सर्वहुत ऽऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥
(शु० य० ३१।७)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यह मन्त्र चारों वेदोंमें प्राप्त है। इस मन्त्रमें कहा गया है कि[1] यज्ञ (यज्ञपुरुष भगवान्) से ही समस्त वेदोंकी उत्पत्ति हुई है। यज्ञसे उत्पन्न होनेवाले वेदोंमें जो कुछ भी लिखा है, वह सब यज्ञ-परक ही है।

ऐतरेयब्राह्मण (५।५।८) में कहा गया है कि यज्ञपुरुष भगवान्ने[2] यज्ञ-कार्यके सम्पादनार्थ ही चारों वेदोंका निर्माण किया।

अब हम यज्ञ महत्त्वसूचक चारों वेदोंके कतिपय मन्त्रोंका उल्लेख करते हैं, जिनसे यज्ञोंका महत्त्व स्पष्ट है।

स घा यस्ते ददाशति समिधा जातवेदसे।
सो अग्ने धत्ते सुवीर्यं स पुष्यति॥ (ऋग्वेद ३।१०।३)

'हे यज्ञाग्नि ! जो मनुष्य तुम्हारे लिये समिधा प्रदान करता है, वह निश्चित ही उत्तम वीर्यको धारण करता है और वह सब प्रकारसे पुष्ट होता है।'

अग्निस्तुविश्रवस्तमं तुविब्रह्माणमुत्तमम्।
अतूर्तं श्रावयत्पतिं पुत्रं ददाति दाशुषे॥
(ऋग्वेद ५।२५।५)

'यज्ञकी अग्नि हविर्द्रव्य प्रदान करनेवालेको अत्यन्त यशस्वी, ज्ञानी, विजयी और श्रेष्ठ वाग्मी (वक्ता) बनाती है और उसे सर्वगुणसम्पन्न पुत्र प्रदान करती है।'

यस्ते यज्ञेन समिधा य उक्थैरर्केभिः सूनो सहसो ददाशत्।
स मर्त्येष्वमृत प्रचेता राया द्युम्नेन श्रवसा वि भाति॥
(ऋग्वेद ६।५।५)

---

१ पुरुषसूक्त (शु० य० अध्याय ३१) में ईश्वरका एक नाम 'यज्ञ' भी कहा गया है। अतः स्पष्ट है कि यज्ञ भी 'ईश्वर' का ही नाम है।

२ 'ऋचो यजूंषि सामानि निर्ममे यज्ञसिद्धये।' (ब्रह्मपुराण १।४६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'हे भगवन् ! जो मनुष्य यज्ञ में उत्तम समिधा आदि सामग्रीसे और यज्ञ-स्तुतिपरक वैदिक मन्त्रोंसे तुम्हारी उपासना करता है, वह धन, ऐश्वर्य, तेज और यश से परिपूर्ण होकर ज्ञानवान् हो जाता है और अन्तमें अमरताको प्राप्त करता है।'

सुवीरं रयिमा भर जातवेदो विचर्षणे।
जहि रक्षांसि सुक्रतो॥

(ऋग्वेद ६।१६।२९)

'हे यज्ञाग्नि ! तुम धर्मात्मा यजमानके लिये उत्तम वीरों (पुत्रों) को उत्पन्न करो और धन प्रदान करो और धर्मात्माओंको दुःख पहुँचानेवाले राक्षसोंका नाश करो।'

अयं यज्ञो देवया अयं मियेध इमा ब्रह्माण्ययमिन्द्र सोमः।

(ऋग्वेद १।१७७।४)

'यह यज्ञ मनुष्यको परमात्माके पास पहुँचानेवाला है। यह यज्ञ स्वयं पवित्र है और दूसरोंको पवित्र करनेवाला है।'

तमीडत प्रथमं यज्ञसाधम्। (ऋग्वेद १।९६।३)

'यज्ञद्वारा ही प्रभुकी प्राप्ति होती है।'

स यज्ञेन वनवद् देव मर्त्तान्। (ऋग्वेद ५।३।५)

'वह परमात्मा यज्ञके द्वारा मनुष्योंको सर्वदाके लिये भक्तियुक्त बना देता है।'

यज्ञ इन्द्रमवर्धयत्। (ऋग्वेद ८।१४।५)

'यज्ञके द्वारा इन्द्र समृद्धिको प्राप्त होता है।'

यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु। (ऋग्वेद १०।१२१।१०)

'हवनसे अभिलषित कामनाएँ पूर्ण होती हैं।'

त्रिंशद्धाम विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते।
प्रति वस्तोरह द्युभिः॥

(शु० यजुर्वेद ३।८)

'प्रतिदिन किया जानेवाला यज्ञ सर्वदा अपनी प्रदीप्त ज्वालाके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सहित यज्ञकर्ताके शरीरमें निवास करता है। अतः यज्ञकर्ता यज्ञके प्रभावसे समस्त प्रकारके अन्धकार और अज्ञानसे मुक्त होकर प्रभुके सामीप्यको प्राप्त करता है।'

त्वामग्ने यजमाना ऽअनु द्यून्
विश्वा वसु दधिरे वार्याणि।
त्वया सह द्रविणमिच्छमाना
व्रजं गोमन्तमुशिजो विवव्रुः॥

(शु० य० १२।२८)

'हे अग्निदेव! जो व्यक्ति सर्वदा यज्ञ करते रहते हैं, वे श्रेष्ठ सम्पत्तिके अधिपति होते हैं और उन्हें यज्ञके प्रभावसे सर्वदा श्रेष्ठ पुरुषोंका सत्सङ्ग एवं धनकी प्राप्ति होती है।'

यज्ञं वष्टु धिया वसुः। (शु० य० २०।८४)

'यज्ञसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है।'

यज्ञो भुवनस्य नाभिः' × (शु० य० २३।६२)

'यज्ञ ही समस्त ब्रह्माण्डको बाँधनेवाला नाभिस्थान है।'

यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽअस्तु। (शु० य० १०। २०)

'जो जिस कामनाको लेकर हवन करता है, उसकी वह कामना पूर्ण होती है।'

शुक्लयजुर्वेदके अठारहवें अध्यायमें १ से २९ मन्त्रतक यज्ञकी ही महिमाका विस्तृत रूपसे उल्लेख किया गया है।

यज्ञं वष्टु धिया वसुः। (सामवेद, पूर्वा० २।८।५)

'यज्ञसे अनेक प्रकारके ऐश्वर्योंकी प्राप्ति होती है।'

यज्ञ इन्द्रमवर्धयत्। (सामवेद, पूर्वा० २।१।७)

'यज्ञके द्वारा ही इन्द्रदेव समृद्धिशाली हुए।'

ज्योतिर्यज्ञस्य पवते। (सामवेद, उत्तरा० ७।१।१)

× नाभिमें ही भगवान् रहते हैं, अतः 'यज्ञो वै विष्णुः' (शतपथब्रा० १।१।२।१३) कहा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'यज्ञकी ज्योति मनुष्यको पवित्र करती है।'

जानीत स्मैनं परमे व्योमन्
देवाः सधस्था विद लोकमत्र।
अन्वागन्ता यजमानः स्वस्तीष्टापूर्तं
स्म कृणुताविरस्मै॥

(अथर्ववेद ६।१२३।३)

'यज्ञ करनेवाला मनुष्य परम धाममें प्रतिष्ठित होता है, यह ध्रुव है। अतः परम धाममें जानेवाले यज्ञकर्ताका इष्टापूर्तिके द्वारा स्वागत करना चाहिये।'

यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः। (अथर्ववेद ९।१०।१४)

'यज्ञ समस्त भुवनोंका केन्द्रस्थान है।'

यैरीजानाः स्वर्गं यान्ति लोकम्।' (अथर्ववेद १८।४।२)

'यज्ञ करनेवालोंको स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है।'

यज्ञ इन्द्रमवर्धयत्। (अथर्ववेद २०।२७।५)

'यज्ञसे इन्द्रदेवने उन्नति की।'

यज्ञाः पृथिवीं धारयन्ति। (अथर्ववेद)

'यज्ञ ही पृथिवीको धारण किये हुए हैं।'

यज्ञो हि देवानां महः। (शतपथब्रा० १।५।१।११)

'यज्ञ ही देवताओंकी विभूति है।'

यज्ञो वसुः। (शतपथब्रा० १।७।१।९)

'यज्ञ ही ऐश्वर्य है अर्थात् ऐश्वर्यको देनेवाला है।'

यज्ञाद्वै प्रजाः प्रजायन्ते। (शतपथब्रा० १।६।२।५)

'यज्ञसे ही सन्ततिकी उत्पत्ति होती है।'

मनुष्या एव हि यज्ञेनाप्नुवन्ति चन्द्रलोकं पितृमार्गानुसारिणः मनुष्या वा आपश्चन्द्राः। (शतपथब्रा० ७।३।१।२०)

'यज्ञ करनेसे मनुष्य चन्द्रलोकमें जाते हैं।'

यज्ञो वै देवानामात्मा। (शतपथब्रा० ६।३।२।७)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'यज्ञ ही देवताओंका आत्मा (जीवन) है।'

यज्ञ उ देवानामात्मा। (शतपथब्रा० ८।६।१।१०)

'यज्ञ ही देवताओंका आत्मा है।'

सर्वेषां देवानामात्मा यद् यज्ञः। (शतपथब्रा० १३।३।२।१)

'यज्ञ समस्त देवताओंकी आत्मा है।'

यज्ञो हि सर्वाणि भूतानि भुनक्ति। (शतपथब्रा० ६।४।१।२०)

'यज्ञ ही समस्त प्राणियोंका रक्षण (पालन) करता है।'

सर्वेषां वा एष भूतानां सर्वेषां देवानामात्मा यद् यज्ञस्तस्य समृद्धिमनु यजमानः प्रजया पशुभिर्ऋद्ध्यते॥

(शतपथब्रा० १४।३।२।१)

'यज्ञ समस्त प्राणियों और समस्त देवताओंका आत्मा (जीवन) है, अतः यज्ञ करते रहनेसे यजमान सन्तति और पशु आदिसे परिपूर्ण हो जाता है।'

यज्ञो वै भुवनम्। यज्ञ एव यजमानं प्रजया पशुभिः प्रथयति॥

(तैत्तिरीयब्रा० ३।३।७)

'यज्ञ ही भुवन (लोक) है। यज्ञ ही यजमानको सन्तति और पशुसे समृद्ध करता है।'

यज्ञो वै भुवनेषु ज्येष्ठः। (शाङ्खायनब्रा० २५।११)

'यज्ञ ही समस्त भुवनोंमें श्रेष्ठ है।'

ऐतरेयब्राह्मण (१।२।१०) में लिखा है— यज्ञ करनेवालेको स्वर्गकी प्राप्ति होती है।

ॐ **अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेन इध्यस्व वर्धस्व च इद्धय वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन अन्नाद्येन समेधय स्वाहा॥**

(आश्वलायनगृह्यसूत्र १।८।१३)

'हे यज्ञाग्ने! तुम प्रज्वलित होकर हमको प्रज्वलित करो। तुम बढ़ो और हमको भी बढ़ाओ। प्रजया अर्थात् सन्तानसे, पशुओंसे, आत्मज्ञानसे तथा अन्नसे, यज्ञसे इन चारों पदार्थोंकी प्राप्ति होती है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञेन हि देवा दिवङ्गता यज्ञेनासुरानपानुदन्तः यज्ञेन द्विषन्तो मित्रा भवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्यज्ञं परमं वदन्ति ॥

(नारायणोपनिषद्)

'यज्ञसे ही देवताओंने स्वर्गको प्राप्त किया और असुरोंको परास्त किया। यज्ञसे शत्रु भी मित्र बन जाते हैं। यज्ञमें सब प्रकारके गुण हैं। अतः श्रेष्ठजन यज्ञको श्रेष्ठ कर्म कहते हैं।'

'देवा वै यज्ञेन श्रमेण तपसाहुतिभिः स्वर्गं लोकमायन्।'

(ऐतरेयब्रा० ३।४२)

'विद्वानोंने[1] यज्ञ, परिश्रम, तप और नित्य हवनसे स्वर्गलोककी प्राप्ति की।'

एह्येहीति तमाहुतयः सुवर्च्चसः
सूर्यस्य रश्मिभिर्यजमानं वहन्ति।
प्रियां वाचमभिवदन्त्योऽर्चयन्त्य
एष वः पुण्यः सुकृतो ब्रह्मलोकः ॥

(मुण्डकोपनिषद्)

'ज्योतिष्मती आहुति यज्ञके यजमानको 'आओ, आओ' यों पुकारती हुई सूर्यकी रश्मि-द्वारा पुण्यमय ब्रह्मलोकमें ले जाकर उसकी प्रिय-वाणी और पूजाद्वारा सेवा करती है।'

इस प्रकार यज्ञोंकी महिमा वेदों, उपनिषदों और ब्राह्मणग्रन्थोंमें विशेषरूपसे वर्णित है।

प्राचीन समयमें भारतवर्षमें यज्ञोंकी विशेष प्रधानता और मान्यता थी। उस समय समस्त भारतमें यज्ञोंका इतना अधिक प्रचार था कि यह देश 'यज्ञिय-देश' कहलाता था। उस समय सभी लोग यज्ञको अपना परम धर्म समझकर यज्ञ किया करते थे। यज्ञोंमें

---

१ 'विद्वाँसो हि देवाः' (शतपथब्रा० ३।७।३।१०) 'विद्वान् ही देवता कहे जाते हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सभीका अटूट विश्वास था। यज्ञोंकी महत्ता सर्वमान्य थी। यज्ञोंमें शास्त्रीय विधिके पालनका पूर्ण ध्यान रखा जाता था। यज्ञोंमें वैदिक-धर्मके अनुयायी सन्त, महात्मा और विद्वान् विशेष-रूपसे आमन्त्रित किये जाते थे, जिनके द्वारा यज्ञोंके महत्त्वका विशेष प्रख्यापन और प्रसार-प्रचार होता था। आज भी भारतवर्षमें जो कुछ यज्ञोंकी परम्परा चल रही है अथवा जो कुछ यज्ञोंका सम्मान और अस्तित्व है, वह सन्त-महात्माओंकी ही देन है।

इधर कुछ वर्षोंसे यज्ञोंकी परम्परा उच्छिन्नप्राय हो चली थी, तो सौभाग्यवश त्यागतपोमूर्ति श्री १००८ स्वामी करपात्रीजी महाराज जैसी दिव्य विभूति यज्ञ-रक्षार्थ पुनः प्रादुर्भूत हो गयी, जिन्होंने देहली, कानपुर, काशी और बम्बई जैसे नगरोंमें अनेक बार विशाल वैदिक शाखासम्मेलन और कोटिहोमात्मक शतमुख महायज्ञ कराकर "वैदिक-धर्म' को विशेष जागृत किया, जिससे आज समस्त भारतके कोने-कोनेमें यज्ञोंका प्रसार-प्रचार हो गया।

अन्तमें यज्ञ भगवान्से प्रार्थना है कि हमारा पवित्र भारतवर्ष पुनः यज्ञोंके बाहुल्यसे 'यज्ञिय-देश' कहला सके और यज्ञिय देश (भारत-वर्ष) में रहनेवाले सभी प्राणी सर्वदा सर्वप्रकारसे सुखी और समृद्ध हो जायँ।

———

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञसे कामना-सिद्धि

वेद हिन्दू-धर्मका प्रधान धर्मग्रन्थ है। इस धर्मग्रन्थमें हिन्दूधर्मके विषयमें ऐसी कोई बात नहीं है, जो इसमें न हो। **'यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्'** यह वाक्य वेदोंके लिये सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होता है।

वेदोंमें समस्त विषयोंका खजाना भरा पड़ा है। वेदोंमें से जो चाहे वह सुन्दर-सुन्दर रत्नोंको ढूँढ़कर अपनी मनोकामना पूर्ण कर सकता है। वेदोंका प्रधान अङ्ग यज्ञ है। वेदोंमें यज्ञको साक्षात् विष्णु-स्वरूप बतलाते हुए स्पष्ट कहा गया है कि यज्ञकी उपासनाद्वारा मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है।

प्राचीन कालके ऋषि-महर्षियोंने, राजर्षियोंने और राजा-महाराजाओंने यज्ञकी उपासनाद्वारा ही अपनेमें अतुल-शक्ति प्राप्तकर अपने-अपने इष्टकी सिद्धि प्राप्त की थी। देवताओंने यज्ञके द्वारा 'देवत्व' पदकी और इन्द्रने सौ यज्ञ करके 'देवराज' पदकी प्राप्ति की थी। महाराजा जनकने यज्ञके द्वारा अवर्षणको दूर किया था और महाराजा दशरथने यज्ञके द्वारा पुत्रकी प्राप्ति की थी। महाराजा दिलीप-की यज्ञकथा प्रसिद्ध ही है कि उनके केवल ९९ यज्ञोंसे सन्तुष्ट होकर इन्द्रने १०० यज्ञ करनेका समस्त फल उन्हें दे दिया था। आज भी श्रद्धाभक्तिपूर्वक किये जानेवाले यज्ञोंका वही महत्त्व है, जो पुरातन कालमें था।

यज्ञपद्धतियोंमें अनेक प्रामाणिक विधान निहित हैं, जिनके द्वारा आज भी प्राणी पुत्र-प्राप्ति, धन-प्राप्ति, वृष्टि-प्राप्ति, मुकदमेमें विजय प्राप्ति एवं समस्त प्रकारके रोगादिसे निवृत्ति आदि अनेक कामनाओंकी सरलतासे प्राप्ति कर सकता है।

उपर्युक्त कामनाओंकी प्राप्तिके लिये मनुष्यको वैदिक-वंशपरम्परागत प्रतिष्ठित वेदज्ञसे ही यज्ञादि अनुष्ठान कराना चाहिये।

———

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

निष्काम यज्ञ

गीतामें सात्त्विक, राजसिक और तामसिक भेदसे तीन प्रकारके यज्ञ कहे गये हैं। जो यज्ञ निष्काम–भावसे किया जाता है, उसे 'सात्त्विक यज्ञ' कहते हैं (गी० १७।११)। जो यज्ञ सकाम अर्थात् फल-विशेषकी इच्छासे किया जाता है, उसे 'राजसिक यज्ञ' कहते हैं (गी० १७।१२)। जो यज्ञ शास्त्रोंके विरुद्ध किया जाता है, उसे 'तामसिक यज्ञ' कहते हैं (गी० १७।१३)*। इनमें सात्त्विक यज्ञका मुख्य उद्देश्य सात्त्विकताको लेकर ही होना चाहिये। शास्त्रोंमें सात्त्विक यज्ञका विशेष महत्त्व लिखा है। सात्त्विक यज्ञका विशेष महत्त्व होनेका कारण यह है कि सात्त्विक यज्ञ निष्काम-भावसे किया जाता है। निष्काम–भावसे किया हुआ यज्ञ ही फलप्रद और कल्याणप्रद होता है।

जो यज्ञ फलप्राप्तिकी दृष्टिसे सकाम–भावसे किया जाता है, वह 'अधम' कहा जाता है और जो भगवत्प्रीत्यर्थ निष्काम-भाव (ईश्वरार्पण बुद्धि)से किया जाता है, उसे 'उत्तम' कहा जाता है। वेदादि शास्त्रोंमें निष्काम–यज्ञको ही सर्वोत्तम यज्ञ कहा गया है।

तस्मात् सुनिष्ठिताः पूर्वं सर्वान् कामांश्च लेभिरे।
अकृष्टपच्या पृथिवी आशीर्भिर्वीरुधोऽभवन्॥
(महाभारत, शान्तिपर्व २६३।१२-१३)

---

*यष्टव्यो विधिना यज्ञो निष्कामाय स सात्त्विकः।
यज्ञः फलाय दम्भात्मा राजसस्तामसः क्रतुः॥
(अग्निपुराण ३८१।४३)

'विधिपूर्वक निष्कामभावसे किये जानेवाले यज्ञको सात्त्विक कहते हैं। जो यज्ञ किसी कामना को लेकर किया जाता है, उसे राजस कहते हैं और जो यज्ञ दम्भसे किया जाता है उसे तामस कहते हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'प्राचीन कालके मनुष्य स्वकर्तव्य समझकर यज्ञमें श्रद्धापूर्वक प्रवृत्त होते थे और उस यज्ञसे उनकी सम्पूर्ण कामनाएँ स्वतः पूर्ण हो जाती थीं। पृथ्वीसे बिना जोते—बोये ही काफी अन्न पैदा होता था तथा संसारके कल्याणके लिये उनके शुभ सङ्कल्पसे ही वृक्षों और लताओंमें फल-फूल लगते थे।'

न ते यज्ञेष्वात्मसु वा फलं पश्यन्ति किञ्चन।
शङ्कमानाः फलं यज्ञे ये यजेरन् कथञ्चन॥
जायन्तेऽसाधवो धूर्ता लुब्धा वित्तप्रयोजनाः॥

(महाभारत, शान्तिपर्व २६३।१३-१४)

'वे मनुष्य यज्ञोंमें अपने लिये किसी फलकी ओर दृष्टि नहीं रखते थे। जो मनुष्य 'यज्ञसे कोई फल मिलता है या नहीं' इस प्रकारका सन्देह मनमें रखकर किसी तरह यज्ञोंमें प्रवृत्त होते हैं, वे धन चाहनेवाले लोभी, धूर्त और दुष्ट होते हैं।'

शास्त्रोंमें सकाम यज्ञ करनेवाले मनुष्यकी निन्दा की गई है। सकाम यज्ञ करनेवाले मनुष्य पर इन्द्रदेवकी कृपा नहीं होती, जिससे उसके किये हुए यज्ञका यथार्थ फल उसको प्राप्त नहीं होता।

वेदमें कहा गया है—

अतीहि मनुष्याविणं सुषुवां समुपारणे।
इमं रातं सुतं पिब॥

(ऋग्वेद ८।३२ २१)

'क्रोधसे यज्ञ करनेवाले मनुष्यको इन्द्र अन्धा समझकर उसकी ओर नहीं देखते। ईर्ष्यासे यज्ञ करनेवालेको इन्द्र बधिर समझकर उसकी पुकारको नहीं सुनते। यशके लिये यज्ञ करनेवालेको धूर्त समझ कर इन्द्र उससे धूर्तताका व्यवहार करते हैं। जिसका आरचण निकृष्ट है, उसके साथ इन्द्र श्रेष्ठ व्यवहार नहीं करते। जो कटु-भाषी है, उसको इन्द्र शाप देते हैं और जो दूसरेके अधिकारको स्वा-यत्त करता है, उसकी पूजाको इन्द्र हजम कर जाते हैं।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्राचीन समयके मनुष्य यज्ञको बहुत श्रेष्ठ समझते थे। वे जब भी यज्ञ किया करते थे, तो भगवत्प्रीत्यर्थ निष्काम यज्ञ (सात्त्विक-यज्ञ) ही किया करते थे। किन्तु आजके मनुष्य भगवत्प्रीत्यर्थ निष्काम यज्ञ न कर किसी न किसी कामनाको लेकर ही यज्ञ करते हैं। इसीसे यज्ञोंका जो वास्तविक फल होना चाहिये, वह आज नहीं हो रहा है। अतः यज्ञमें श्रद्धा और विश्वास रखनेवाले प्रत्येक मनुष्यको सर्वदा भगवत्प्रीत्यर्थ निष्काम यज्ञ ही करना चाहिये। भगवत्प्रीत्यर्थ निष्काम-भावसे किये जानेवाले यज्ञका महत्त्व इस प्रकार लिखा है—

ये विष्णुभक्ता निष्कामा यजन्ति परमेश्वरम्।
त्रिसप्तकुलसंयुक्तास्ते यान्ति हरिमन्दिरम्॥

(बृहन्नारदपुराण ३९।६१)

'जो मनुष्य निष्काम-भावसे यज्ञके द्वारा परमेश्वरका यजन करते हैं, वे अपनी इक्कीस पीढ़ियोंको हरिमन्दिर (देवधाम) में पहुँचाते हैं।'

———

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आजका यज्ञ

गीता (१७।११) में 'सात्त्विक यज्ञ' का विशेष महत्त्व बतलाया है। इसीलिये प्राचीन कालके ऋषि-महर्षि विश्वकल्याणार्थ 'सात्त्विक यज्ञ' किया करते थे। निष्काम-भावसे होनेवाले सात्त्विक यज्ञका जो फल होना चाहिये वह फल प्रत्यक्षरूपमें भारतवासी अनुभव करते थे। परन्तु खेद है कि आज उस परम पुनीत 'सात्त्विक यज्ञ' के बदले †'तामसिक यज्ञ' का व्यवहार होने लगा है। अतएव आज यज्ञोंका वास्तविक फल नहीं हो रहा है।

सात्त्विक यज्ञका महान् फल है और इससे समस्त संसारका कल्याण होता है। ऐसी स्थितिमें भी इस यज्ञसे विमुख होनेका एकमात्र कारण है अपनी स्वतन्त्ररूपसे स्वार्थसिद्धि करना। इधर कुछ वर्षोंसे जो यज्ञादि धर्मानुष्ठान हो रहे हैं उनमें स्वार्थसिद्धिका रोग प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है। कोई बैंकोंमें रुपया जमा करने के लिये, कोई मठ-मन्दिर निर्माणके लिये, कोई धर्मशाला निर्माणके लिये, कोई स्कूल-कालेज निर्माणके लिये और कोई गृह-निर्माणके लिये यज्ञरूपी नाटककी रचना कर अपने उद्देश्यकी पूर्ति करते हैं।

कुछ लोगोंने अपनी उदरपूर्तिके लिये यज्ञको व्यापाररूपमें परिणत कर दिया है। ऐसे लोग वेदोक्त शास्त्रीय यज्ञोंको न करके मनमाने ढ़ँगसे 'उदरपूर्ति-यज्ञ' करने लग गये हैं। कोई मानस-यज्ञ, कोई चतुर्वेद-यज्ञ, कोई गायत्री-यज्ञ, कोई कृष्ण-यज्ञ, कोई इन्द्र-यज्ञ, कोई गंगा-यज्ञ और कोई यमुना-यज्ञ आदि विविध नामोंसे यज्ञ करते हैं। इस प्रकारके कपोलकल्पित एवं अशास्त्रीय यज्ञोंमें यजमान तथा ब्राह्मणोंकी जाति-पाति, अधिकारी और अनधिकारीका तो विचार ही उपस्थित नहीं होता। ऐसे यज्ञोंमें सभी समाजके व्यक्तियोंको यज्ञमें प्रविष्टकर उनसे हवन कराया जाता है और उनसे पैसा ऐंठा जाता

† गीता १७।१३

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है। यहाँ तक कि स्त्रियोंको भी यज्ञोपवीत पहनाकर उनसे गायत्री आदि वेद—मन्त्रोंको कहलाकर हवन कराया जाता है।

विधिहीन यज्ञोंके करनेवाले स्वार्थियोंके स्वार्थपूर्ण उद्देश्यकी पूर्तिमें सबसे अधिक सहयोग विद्वानोंका रहता है, जो दक्षिणाके लोभसे यज्ञमें प्रविष्ट होनेके लिये कई मास पूर्व यज्ञाध्यक्षों और यज्ञ-प्रबन्धकोंके निवासस्थानकी परिक्रमा करने लगते हैं। **'सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः'** के अनुसार सेवाधर्मके प्रभावके कारण जिन लोगोंके नाम कृपालिष्टमें दर्ज हो जाते हैं, वे लोग अपना और अपने पूर्वजोंका बड़ा ही सौभाग्य समझते हैं। यज्ञादि कर्म समाप्त हो जानेपर यज्ञाध्यक्ष याज्ञिक विद्वानोंको थोड़ी-बहुत दक्षिणा देकर (चाहे वे विद्वान् सन्तुष्ट हों या असन्तुष्ट, इस बातकी परवाह न करते हुए) उन्हें यज्ञस्थलसे बिदा कर देते हैं और यज्ञीय समस्त धन स्वयं हड़प कर लेते हैं और उस ब्राह्मणांश द्रव्यद्वारा वे अपनी स्वार्थसिद्धि पूर्ण करते हैं।

शास्त्रोंमें इस प्रकारके अशास्त्रीय विधिहीन यज्ञोंकी बड़ी निन्दा की गई है और उन्हें 'तामस-यज्ञ' कहा गया है। तामस यज्ञोंके द्वारा देश, समाज और राष्ट्रका कथमपि कल्याण नहीं हो सकता। तामस यज्ञोंसे प्रजा सर्वदा सभी प्रकारसे पीड़ित रहती है।

कालिकापुराण (२०।१६) में लिखा है—

न यज्ञाः सम्प्रवर्त्तन्ते न तपस्यन्ति तापसाः।
आहारदुःखान्निश्रीकाः प्रजाः क्षीणा भयातुराः॥

'इस समय प्रजा विधिपूर्वक न तो यज्ञ करती है और न तपस्वी तप ही करते हैं, इसलिये प्रजा भोजनकी न्यूनतासे और धनकी कमीसे भय और व्याकुलताको प्राप्त होती है।'

अतः भोलीभाली धार्मिक जनताको इस प्रकारके विधिहीन तामस यज्ञों और तामस वृत्तिवाले यज्ञकर्त्ताओंसे सर्वदा सतर्क रहना चाहिये।

—०—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञसे सभीको लाभ होता है

बहुत लोग यज्ञको ब्राह्मणोंकी उदरपूर्तिका साधन बतलाते हैं। वस्तुतः विचारपूर्वक देखा जाय, तो यज्ञसे केवल ब्राह्मणोंको ही लाभ नहीं होता, किन्तु सभीको लाभ होता है। यज्ञकी योजना निश्चित होनेपर यज्ञके प्रचारार्थ सर्वप्रथम नोटिस, बड़े-बड़े पम्पलेट और चन्दा वसूल करनेकी रसीद आदि छपाई जाती हैं, जिससे कागज-वालोंको और प्रेसवालोंको लाभ होता है। पश्चात् यज्ञ-मण्डप निर्माण करनेके लिये यज्ञ-भूमिको यज्ञयोग्य बनानेके लिये तथा यज्ञ-मण्डप एवं कुण्डोंके निर्माणके लिये मज़दूरों और कारीगरोंकी आवश्यकता होती है, जिससे उन्हें रोजी मिलती है और उनको लाभ होता है। यज्ञ-मण्डप निर्माणके लिये ईंटा, सिलमिट, चूना, लकड़ी, बाँस, छप्पर, सिरकी, टीन और लोहेकी कंटिया आदिकी जरूरत पड़ती है, जिससे ईंटा, सिलमिट, चूना, लकड़ी, बाँस, छप्पर, सिरकी और टीन आदिके विक्रेताओंको लाभ होता है।

यज्ञमें देवपूजनार्थ रोली, मौली, धूपवत्ती, केशर, कपूर, पंचमेवा और नारियल आदि विविध सामग्रियोंकी आवश्यकता पड़ती है, जिससे पनसारीवाले दुकानदारोंको लाभ होता है।

यज्ञमें हवनार्थ तिल, जौ, चावल एवं घृत आदिकी जरूरत होती है, जिससे अन्न और घृतके व्यापारियोंको लाभ होता है। यज्ञमें देवपूजनके लिये और ब्राह्मणोंके वरणके लिये ऊनी, रेशमी और सूती वस्त्रोंकी जरूरत पड़ती है, जिससे वस्त्रके व्यापारियोंको लाभ होता है। यज्ञमें सुवर्णकी मूर्त्तियों और चांदीके वर्त्तनोंकी जरूरत होती है, जिससे सुनारोंको लाभ होता है। यज्ञमें तांबे और पीतलके वर्त्तनोंकी आवश्यकना होती है, जिससे वर्त्तनके व्यापारियोंको लाभ होता है। यज्ञमें विविध प्रकारके काष्ठके यज्ञीय पात्रोंकी जरूरत होती है, जिससे यज्ञपात्र बनानेवाले मिस्त्रियों (बढ़इयों)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

को लाभ होता है। यज्ञमें यज्ञ भगवान्को पहनानेके लिये सिले हुए वस्त्रोंकी जरूरत होती है, अतः उनके वस्त्र निर्माणके लिये और यज्ञमण्डप आदिमें वस्त्र लगानेके लिये दर्जीकी आवश्यकता होती है, जिससे उसको लाभ होता है।

यज्ञमें ब्राह्मणोंके लिये तथा यज्ञमें आये हुए विशेष दर्शकोंके लिये दुग्ध, दधि, घृत, अन्न और फलकी आवश्यकता पड़ती है, जिससे दुग्ध, दधि, घृत अन्न और फलवाले दुकानदारोंको लाभ होता है। यज्ञमें आये हुए साधु-महात्माओं, उपदेशकों और यज्ञके ब्राह्मणोंके लिये दरियों, तंबुओं, कनातों और खेमोंकी जरूरत पड़ती है, जिससे इन वस्तुओंके व्यापारियोंको लाभ होता है। यज्ञमें यज्ञ भगवान्के लिये तथा यज्ञमें आये हुए साधु-महात्माओं और उपदेशकोंके लिये दर्शकगण पुष्पमाला, फल एवं मिठाई आदि लेते हैं, इससे तत्-तत् दुकानदारोंको लाभ होता है।

यज्ञमें उपदेशकोंके भाषण करनेके लिये 'लाउड स्पीकर' की जरूरत पड़ती है, जिससे लाउड स्पीकरवालेको लाभ होता है। यज्ञमें यज्ञ-मण्डप, सभा-मञ्च तथा तंबुओं और डेरोंमें विजलीकी रोशनीकी जरूरत पड़ती है, जिससे विजलीके दूकानदारको लाभ होता है। बड़े-बड़े यज्ञोंमें अधिक संख्यामें डाकद्वारा पत्र तथा तार दिये जाते हैं और टेलिग्राम किये जाते हैं, जिससे डाक-विभागको विशेष लाभ होता है। बड़े-बड़े यज्ञोंमें यज्ञस्थलमें 'टेलीफोन' का विशेष प्रवन्ध किया जाता है, जिससे टेलीफोन-विभागको लाभ होता है।

बड़े-बड़े यज्ञोंमें यज्ञके प्रारम्भसे यज्ञके अन्ततक माङ्गलिक रूपमें शहनाई अथवा अंग्रेजी बाजा बजानेकी व्यवस्था की जाती है, जिससे बाजेवालोंको लाभ होता है। यज्ञमें यज्ञ भगवान्के दर्शनार्थ तथा यज्ञमें आये हुए साधु-महात्माओंके दर्शनार्थ और उनके उपदेश सुननेके लिये दूर-दूरसे हजारों, लाखोंकी संख्यामें मनुष्य रेल (ट्रेन)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

और मोटर सर्विससे आते हैं, जिससे रेल्वे वालों और मोटर सर्विस वालोंको विशेष लाभ होता है। बहुतसे यज्ञोंमें अनेक प्रकारकी दुकानें, अनेक प्रकारके मनोरञ्जक खेल-तमाशा दिखलानेवाले आते हैं, जिससे उनको भी लाभ होता है।

यज्ञमें यज्ञमण्डप और सभा-मञ्च आदि बनानेके लिये कारीगरों और मजदूरोंकी जरूरत पड़ती है, जिससे उनको भी लाभ होता है। यज्ञमें यज्ञीय ब्राह्मणों और यज्ञमें आये हुए दर्शकों और मेहमानोंके लिये पाचकों (रसोइयों), कहारों, पनभरों, नापितों और अनेक प्रकारके कर्मचारियोंकी आवश्यकता होती है, जिससे उन्हें भी लाभ होता है।

बड़े-बड़े यज्ञोंमें यज्ञस्थलकी सफाईकी व्यवस्थार्थ अन्त्यजोंकी आवश्यकता पड़ती है, जिससे उन्हें भी लाभ पहुँचता है। अतः यज्ञ एक ऐसा महत्त्वपूर्ण विशाल कार्य है, जिसमें सभी प्रकारके मनुष्योंकी और सभी प्रकारकी वस्तुओंकी आवश्यकता होती है। अतः यज्ञके द्वारा सभीको लाभ होता है।

यज्ञ किसी जाति-विशेषके लाभके लिये नहीं किया जाता, किन्तु प्राणिमात्रके लाभके लिये किया जाता है। जिस प्रकार वृक्षकी जड़को सिञ्चित करनेसे समस्त वृक्षका रग-रग सिञ्चित हो जाता है, उसी प्रकार यज्ञके द्वारा समस्त प्राणियोंका कल्याण होता है।

एक बात विशेष ध्यान देनेकी यह है कि यज्ञमें उपदेशक, कारीगर, मजदूर अपना-अपना मेहनताना (पारिश्रमिक द्रव्य) प्रथम निश्चित करके ही यज्ञमें भाग लेते हैं। इसी प्रकार लाउड स्पीकरवाले, शहनाई आदि बाजावाले, बिजलीवाले तथा अन्य दरी, तंबू आदि वाले अपना रेट निश्चित करके ही लाउड स्पीकर आदिका उपयोग करते हैं, किन्तु यह बात ब्राह्मणवर्गमें नहीं पाई जाती। वे लोग बिना दक्षिणा निश्चित किए ही यज्ञमें भाग लेते हैं और त्यागवृत्तिसे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ-कार्यको सम्पादित करते हैं। यज्ञ पूर्ण होनेके बाद ब्राह्मणोंको यज्ञ-समितिके द्वारा जो दक्षिणा दी जाती है, वे उसे सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। ऐसी स्थितिमें भी जो लोग यज्ञ-विषयको लेकर ब्राह्मणोंके विषयमें व्यर्थका आक्षेप किया करते हैं, वह सर्वथा अनुचित है।

—:०:—

यज्ञमें सभीको सहयोग देना चाहिये

यज्ञ एक अत्यन्त पवित्र कर्म है। इस पवित्र कर्ममें प्रायः समस्त देवगणका निवास रहता है। यज्ञमें अनेक विरक्त साधु, महात्मा, तपस्वी, विद्वान्, उपदेशक आदि दूर-दूर से सम्मिलित होकर यज्ञकी शोभावृद्धिमें सहायक होते हैं। अतः यज्ञ जैसे महनीय कार्यमें सभीको यथाशक्ति तन, मन, धनसे सहायता करनी चाहिये। जिस मनुष्यकी शक्ति द्रव्य देनेकी नहीं है, उसे शरीरसे ही श्रमदान-द्वारा यज्ञ-कार्यमें सहयोग देकर अपने मानव-जीवनको सार्थक करना चाहिये।

यज्ञमें सहयोग देना प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है। जो मनुष्य यज्ञमें किसी भी रूपमें सहयोग नहीं देते, वे निन्दनीय और तिरस्कारके योग्य कहे गये हैं।

शतपथब्राह्मण (२।३।१।२०) में लिखा है—

'या वै प्रजा यज्ञे अनन्वाभक्ताः पराभूता वै ताः, एवमेवैतद्या इमाः प्रजा अपराभूतास्ता यज्ञमुख आभजति।'

'जो प्रजा यज्ञमें सहयोग प्रदान नहीं करती, वह पराभत है अर्थात्

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तिरस्कार करनेके योग्य है और जो प्रजा सहयोग प्रदान करती है, वह अपराभूत है अर्थात् स्वीकार करनेके योग्य है।'

इस विषयकी पुष्टि कृष्ण यजुर्वेदके ऐकपदिक काण्ड (३।१।२०) में भी की गई है।

यज्ञादिमें विघ्न करनेसे हानि

यज्ञ जैसे श्रेष्ठ कर्ममें प्रत्येक मनुष्यको किसी न किसी प्रकारकी सहायता करनी चाहिये। यदि किसीसे किसी भी प्रकारकी सहायता न हो सके, तो उसे यज्ञमें विघ्न-बाधा नहीं करनी चाहिये। यज्ञमें विघ्न-बाधा पहुँचानेवालेके लिये शास्त्र-मर्मज्ञोंने बहुत बड़ा दोष कहा है—

उपस्थिते विवाहे तु यज्ञे दानेऽपि वा विभो।
मोहात् करोति यो विघ्नं स मृतो जायते कृमिः॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व १११।८१)

'हे प्रभो! जो मनुष्य विवाह, यज्ञ अथवा दानका अवसर आनेपर मोहवश विघ्न करता है, वह मरनेके बाद कीड़ा होता है।'

उपस्थिते विवाहे च यज्ञे दाने च वासव!।
मोहाच्चरति विघ्नं यः स मृतो जायते कृमिः॥

(बृहस्पतिस्मृति ७०)

'हे इन्द्र! विवाह, यज्ञ और दानके उपस्थित होने पर जो मनुष्य मोहादिके वशीभूत होकर विघ्न करता है, वह मरनेके बाद कृमि होता है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तामिस्रमन्धतामिस्रं महारौरवरौरवौ ।
असिपत्रवनं घोरं कालसूत्रमवीचिकम् ॥
विनिन्दकानां वेदस्य यज्ञव्याघातकारिणाम् ।
स्थानमेतत् समाख्यातं स्वधर्मत्यागिनश्च ये ॥

(विष्णुपुराण १।६।४१-४२)

'तामिस्र, अन्धतामिस्र, महारौरव, रौरव, असिपत्रवन, घोर, कालसूत्र और अवीचिक आदि जो नरक हैं, वे वेदोंकी निन्दा करनेवाले और यज्ञोंमें व्याघात पहुँचानेवाले तथा स्वधर्मके त्यागनेवाले पुरुषोंके स्थान कहे गये हैं।'

इस विषयकी पुष्टि पद्मपुराणके सृष्टिखण्ड (३।१६१–१६३) में भी की गई है।

वेदोंमें लिखा है कि जो मनुष्य यज्ञमें विघ्न करते हैं, वे 'राक्षस' कहलाते हैं—

'देवान् ह वै यज्ञेन यजमानास्तानसुररक्षसानि ररक्षुर्न यक्ष्यध्वमिति । तद्यदरक्षंस्तस्माद्रक्षांसि ।'

(शतपथब्राह्मण १।१।१।१६)

'एक समय देवगण यज्ञ कर रहे थे। राक्षसोंने उनके यज्ञ-कार्यमें अनेक प्रकारसे विघ्न किया और कहा—'यज्ञ न करो।' अतः यज्ञ-कर्ममें विघ्न करनेवालेकी 'राक्षस' संज्ञा होती है।'

प्रचीन कालमें हिरण्यकशिपु और बलि जैसे अनेक असुर यज्ञके विरोधी थे, जिन्होंने अपनी पूर्ण शक्तिसे यज्ञका विरोध किया और धार्मिक प्रजाको खूब सताया। जिस कारण भगवान्‌को नृसिंहावतार एवं वामनावतार आदि धारण कर उन पापी असुरोंका नाश करना पड़ा। धर्म-विरोधी राजा वेनकी तो यह स्पष्ट घोषणा थी—

'न यष्टव्यं न दातव्यं न होतव्यं द्विजाः क्वचित् ।'

(भागवत ४।१४।६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'कोई भी द्विज कभी किसी प्रकारका यज्ञ, दान और हवन न करे।'

धर्म-विरोधी वेनके द्वारा यज्ञके विरोध करनेके कारण यज्ञ-यागादि धार्मिक कृत्य बन्द होगये। यज्ञोंके बन्द होनेसे वर्षा होनी बन्द होगई। वर्षाके बन्द होनेसे अन्न होना बन्द होगया। अन्नकी कमीसे भयङ्कर अकाल पड़ने लगा, जिससे समस्त प्रजा भूखसे पीड़ित होकर मरने लगी। अन्तमें वेनको भी मृत्युके मुखमें जाना पड़ा।

धर्मराज युधिष्ठिरके 'राजसूय-यज्ञमें अत्याचारी शिशुपालने भगवान् कृष्णके अग्रपूजनका विरोध कर यज्ञमें विघ्न पहुँचानेकी पूर्ण चेष्टा की, तो स्वयं भगवान् कृष्णने अपने 'सुदर्शन चक्र' द्वारा उसका शिर काट दिया। अतः यह निश्चित है कि जो कोई यज्ञका विरोध करता है, वह स्वयं अपनी मृत्युका आह्वान करता है।

यज्ञमें [1]श्रद्धाकी आवश्यकता

यज्ञके यजमानको श्रद्धा-भक्ति-सत्य-ब्रह्मचर्यादि व्रतके नियमानुकूल आचार-सम्पन्न होकर ही यज्ञ करना चाहिये। अन्यथा श्रद्धादिसे रहित किया हुआ यज्ञ-कर्म सर्वथा निष्फल होता है। यजमानके द्वारा अश्रद्धासे दी हुई 'आहुति' को देवगण भी स्वीकार नहीं करते—'नाश्रद्धधानाय[2] हविर्जुषन्ति देवाः।'

[1](क) श्रद्धा तु चतुर्विधपुरुषार्थेषु यथार्थो 'एवमिदम्' इति समुत्पद्यमाना या धीस्तदधिदेवताभाव संज्ञैव।

(ख) प्रत्ययो धर्मकार्येषु तथा श्रद्धेत्युदाहृता।
नास्ति ह्यश्रद्धधानस्य धर्मकृत्ये प्रयोजनम्॥ (देवलः)

[2]अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी। तथा च अश्रद्धधानस्येति फलति।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गीता (१७।२८) में भी उपर्युक्त कथनकी पुष्टि की गई हैं—

अश्रद्धया हुतं द्रव्यं तपस्तप्तं कृतं च तत् ।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥

'अश्रद्धासे हवन, दान, तप अथवा जो कुछ कर्म किया जाता है उसे 'असत्' कहते हैं। हे पार्थ ! असत्कर्मका फल न तो परलोकमें और न इहलोकमें ही लाभदायक होता है।'

अश्रद्धया च यद्दत्तं विप्रेऽग्नौ दैविके क्रतौ ।
न देवास्तृप्तिमायान्ति दातुर्भवति निष्फलम् ॥

'इष्ट-देवताकी प्रीतिके लिये अनुष्ठित यज्ञमें ब्राह्मणरूपी अग्निके लिये (अथवा ब्राह्मण और अग्निके लिये) जो दक्षिणा आदि द्रव्य अश्रद्धासे सर्मपित किया जाता है, उससे देवगणकी तृप्ति नहीं होती। दाताका वह दक्षिणा आदि द्रव्य निरर्थक ही जाता है।'

श्रद्धाके बिना अग्निदेवको आवाहित करनेसे वे भी यज्ञमें उपस्थित नहीं होते, यह वेदमें लिखा है—

प्र दैवोदासो अग्निर्देवाँ अच्छा न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ॥

(ऋग्वेद ८।१०३।२)

'दिवोदासने अश्रद्धासे अग्निदेवका आवाहन किया था, अतः वे अश्रद्धासे बुलानेके कारण स्वर्गलोकसे भूमि पर उपस्थित नहीं हुए और न देवताओंके लिये हवनीय पदार्थको ले जानेमें समर्थ हुए।'

श्रद्धाहीन सम्पादित यज्ञ नास्तिकतापूर्ण और निन्दनीय कहे जाते हैं। श्रद्धाहीन यज्ञोंसे राजा और राष्ट्र दोनोंकी भयङ्कर क्षति होती है। लिखा भी है—

शान्तिमङ्गलहोमेषु नास्तिक्यं यत्र जायते ।
राजा वा म्रियते तत्र स देशो वा विनश्यति ॥

(मत्स्यपुराण २३७।११)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'शान्ति, मङ्गल तथा हवन-कार्यों में जहाँ पर श्रद्धाहीनतासे उत्पन्न नास्तिकताका साम्राज्य रहता है, वहाँके राजा तथा उस देशका विनाश होता है।'

अतः श्रद्धापूर्वक यज्ञादि धार्मिक कर्मोंका अनुष्ठान करना चाहिये। श्रद्धापूर्वक यज्ञादि करनेसे ही मनुष्यको किये हुए कर्मका यथार्थ फल प्राप्त होता है।

भगवान् मनुने कहा है—

श्रद्धयेष्टं च पूर्तं च नित्यं कुर्यादतन्द्रितः।
श्रद्धाकृते ह्यक्षये ते भवतः स्वागतैर्धनैः॥

(मनु० ४।२२६)

'सावधान होकर श्रद्धासे सर्वदा यज्ञ करे और कूप, तालाव बनवावे। क्योंकि न्यायपूर्वक आये हुए धनके द्वारा श्रद्धापूर्वक जो यागादि किये जाते हैं, वे मोक्षको देते हैं।'

वेदोंमें श्रद्धाका महत्त्व इस प्रकार लिखा है—

श्रद्धयाऽग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि॥

(ऋग्वेद ८।८।६)

'श्रद्धासे ही यज्ञकी अग्नि प्रज्वलित की जाती है, श्रद्धासे ही हवनीय पदार्थोंकी आहुति दी जाती है। श्रद्धा ही धनके मस्तकके ऊपर रहती है, अतः समस्त आराध्यकी प्रधानभूता श्रद्धाका हम स्तवन करते हैं।'

'श्रद्धया सत्यमाप्यते।' (शुक्लयजुर्वेद १९।३०)

'श्रद्धासे ही सत्यताकी प्राप्ति होती है।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रौतयज्ञ—एक संक्षिप्त परिचय

भारतीय जन-जीवनमें यज्ञोंका क्या स्थान है, इसे जाननेके लिये दूर जानेकी आवश्यकता नहीं। भगवती गीता ही स्पष्ट और अभ्रान्त शब्दोंमें बताती है कि ब्रह्मदेवने यज्ञोंके सहित प्रजाकी सृष्टि कर उससे कहा कि इसी साधनसे अपनी जीविका चलाओ, यह तुम्हारे लिये कामधेनु है। इसके द्वारा आपलोग देवताओंको तृप्त करें और देवता वृष्टि आदिके द्वारा आपको तृप्त करेंगे (३।१०-११) अर्थात् आजकी भाषामें आपका एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट (आयात-निर्यात) केवल विदेश तक ही सीमित नहीं, त्रिलोक (स्वर्ग) तक उसकी व्याप्ति है। गीताकारने केवल वचन ही नहीं, युक्ति या कार्य-कारण-भाव भी प्रस्तुत करते हुए कहा है कि यज्ञसे वृष्टि और वृष्टिसे अन्न, अन्नसे [रेतस् और रेतस्से] प्राणी होते हैं (३।१४)। इतने विवेचनके बाद शास्त्र-विश्वासीके लिये यज्ञकी उपयोगिताके बारेमें अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं।

ये यज्ञ दो प्रकारके हैं—श्रौत और स्मार्त। श्रुतिप्रतिपादित यज्ञोंको 'श्रौतयज्ञ' और स्मृतिप्रतिपादित्त यज्ञोंको 'स्मार्तयज्ञ' कहते हैं। श्रौतयज्ञमें केवल श्रुतिप्रतिपादित मन्त्रोंका प्रयोग होता है और स्मार्तयज्ञमें वैदिक, पौराणिक और तान्त्रिक भी मन्त्र प्रयुक्त हुआ करते हैं। हम यहाँ केवल श्रौतयज्ञों पर ही प्रकाश डालेंगे।

वेदोंमें अनेक प्रकारके यज्ञोंका वर्णन मिलता है, किन्तु उनमें निम्नलिखित पाँच प्रकारके यज्ञ ही प्रधान माने गये हैं—

'स एष यज्ञः पञ्चविधः—अग्निहोत्रम्, दर्शपूर्णमासौ, चातुर्मास्यानि, पशुः सोमः।' (ऐतरेयब्राह्मण)

अर्थात् अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, चातुर्मास्य, पशुयाग और सोमयाग—ये पाँच प्रकारके यज्ञ कहे गये हैं। इन्हीं पाँच प्रकारके यज्ञोंमें श्रुतिप्रतिपादित वैदिक यज्ञोंकी परिसमाप्ति हो जाती है। वेदोंमें

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रौतयज्ञोंकी अत्यन्त महिमा वर्णित है। शतपथब्राह्मण (१।७।१।५) में श्रौतयज्ञोंको श्रेष्ठतम कर्म कहा है—'**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म**।' कुल श्रौतयज्ञोंको १९ प्रकारोंमें विभक्त कर यहाँ उनका संक्षिप्त परिचय देनेका यत्न किया जा रहा है।

(१) **स्मार्त-कर्म**—विवाहके अनन्तर विधिपूर्वक अग्निका स्थापन करके जिस अग्निमें सायं और प्रातः नित्य हवनादि कृत्य किये जाते हैं, उसे 'स्मार्ताग्नि' (आवसथ्याग्नि, औपवसथ्याग्नि) कहते हैं। इस स्मार्त अग्निमें किये जानेवाले कर्मोंको 'स्मार्त-कर्म' कहते हैं। स्मार्ताग्निमें पका भोजन ही प्रतिदिन करना चाहिये।

(२) **श्रौताधान**—गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्निके विधिपूर्वक स्थापनको 'श्रौताधान' कहते हैं। इन अग्नियोंमें हवि आदिका संस्कार आहवनीयमें हवन और दक्षिणाग्निमें पितृ-सम्बन्धी कार्य होते हैं।

(३) **दर्शपूर्णमास**—अमावास्या और पूर्णिमाको होनेवाले यज्ञको क्रमशः 'दर्श' और 'पौर्णमास' कहते हैं। इस यज्ञका अधिकारी सपत्नीक होता है। इसमें अध्वर्यु, ब्रह्मा, होता और आग्नीध्र—ये चार प्रकारके ऋत्विक् होते हैं। इस यज्ञका अनुष्ठान यावज्जीवन करना चाहिये। यदि कोई जीवनभर करनेमें असमर्थ हो, तो ३० वर्ष तक तो करना ही चाहिये।

(४) **चातुर्मास्य**—चार-चार महीने पर किये जानेवाले यज्ञको 'चातुर्मास्य यज्ञ' कहते हैं। इस यज्ञमें चार पर्व होते हैं—वैश्वदेव[1], वरुणप्रघास[2], साकमेध[3] और शुनासीरीय[4]। प्रथम वैश्वदेव पर्वका

---

१. जिस पर्वके 'विश्वेदेवा' देवता हों उसे 'वैश्वदेव पर्व' कहते हैं।
२. जिस पर्वमें वरुणके लिये प्रघास अर्थात् हवि दी जाती है, उसे 'वरुण प्रघास पर्व' कहते हैं।
३. जिस पर्वमें हवि प्राप्त करनेसे देवगण वृद्धिको प्राप्त होते हैं, उसे 'साकमेध पर्व' कहते हैं।
४. जिस पर्वके देवता वायु और आदित्य हों, उसे 'शुनासीरीय पर्व' कहते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अनुष्ठान फाल्गुनी पूर्णिमाको, द्वितीय वरुणप्रघास पर्वका अनुष्ठान आषाढ़ी पूर्णिमाको, तृतीय साकमेध पर्वका अनुष्ठान कार्तिकी पूर्णिमाको और चतुर्थ शुनासीरीय पर्वका अनुष्ठान फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदाको करना चाहिये। इन चारों पर्वोंको मिलाकर 'चातुर्मास्य-यज्ञ' होता है।

चातुर्मास्य यज्ञ करनेके लिये दो पक्ष हैं। इस यज्ञको यावज्जीवन करना, यह प्रथम पक्ष है और द्वितीय पक्ष है—इस यज्ञको केवल एक ही बार कर पश्चात् पशुयाग और सोमयाग करना चाहिये।

(५) **निरूढ़ पशुबन्ध**—प्रतिवर्ष वर्षा ऋतुमें या दक्षिणायन या उत्तरायणमें संक्रान्तिके दिन एक बार जो पशुयाग किया जाता है, उसे 'निरुढ़पशु' कहते हैं।

(६) **आग्रयणेष्टि**—प्रतिवर्ष वसन्त और शरद् ऋतुमें नवीन यव और चावलसे जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'आग्रयण' अथवा 'नवान्न' कहते हैं। इस यज्ञको करनेके बाद ही नवीन अन्न खाना चाहिये।

(७) **सौत्रामणी**—इन्द्रके निमित्त जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'सौत्रामणी यज्ञ' कहते हैं। यह सौत्रामणी यज्ञ इन्द्र-सम्बन्धी पशुयाग है। यह यज्ञ दो प्रकारका है—स्वतन्त्र और दूसरे यज्ञोंका अङ्गभूत।

चयनके बाद जो सौत्रामणी यज्ञ किया जाता है, वह अङ्गभूत सौत्रामणी है, जिसे 'चरक सौत्रामणी' भी कहते हैं। दूसरा स्वतन्त्र सौत्रामणी नामक जो यज्ञ है, वह पाँच दिनमें सुसम्पन्न होता है। सौत्रामणी यज्ञमें गोदुग्धके साथ 'सुरा' (मद्य) का भी विधान है, किन्तु कलियुगमें वह वर्ज्य है, अतः उसके स्थानमें 'पयोग्रह' लिया जाता है।

सौत्रामणी 'पशुयाग' कहा जाता है, क्योंकि इसमें पाँच अथवा तीन पशुओंकी बलि दी जाती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्वतन्त्र सौत्रामणी यज्ञमें केवल ब्राह्मणका अधिकार है और अङ्गभूत सौत्रामणीमें क्षत्रिय तथा वैश्यका।

(८) **सोमयाग**—सोमलताद्वारा जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'सोमयाग' कहते हैं। वह वसन्त ऋतुमें होता है। यद्यपि यह यज्ञ एक ही दिनमें पूर्ण होता है, तथापि अपने अङ्गके साथ पाँच दिनोंमें सुसम्पन्न होता है। इस यज्ञमें सोलह ऋत्विक् (देखिये, कात्यायन श्रौतसूत्र ७।१।७) होते हैं, जो कि चार गणोंमें विभक्त हैं। जैसे—अध्वर्युगण, ब्रह्मगण, होतृगण और उद्गातृगण। प्रत्येक गणमें चार-चार ऋत्विक् होते हैं। ये सब मिलकर सोलह ऋत्विक् होते हैं।

सोमयागके सात भेद होते हैं अर्थात् सोमयाग सात प्रकारका होता है—अग्निष्टोम (ज्योतिष्टोम), अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र और अप्तोर्याम।

अग्निष्टोम साममें जिस यज्ञकी समाप्ति हो और उसके बाद अन्य साम न पढ़ा जाय, उसे 'अग्निष्टोम' कहते हैं। इसी प्रकार उक्थ्य साम, षोडशी साम, वाजपेय साम, अतिरात्र साम और अप्तोर्याम नामक साम पढ़कर जिन यज्ञोंकी समाप्ति होती है, वे यज्ञ क्रमसे उक्थ्य आदि नामोंसे कहे जाते हैं। अग्निष्टोम सामके अनन्तर षोडशी साम जिस यज्ञमें पढ़ा जाता है, वह 'अत्यग्निष्टोम' कहा जाता है।

(९) **द्वादशाह यज्ञ**—यह 'सत्र' और 'अहीन' भेदसे दो प्रकारका होता है। जिसमें सोमयागके सोलहों ऋत्विक् आहिताग्नि और बिना दक्षिणावाले ब्राह्मण हों, ऐसे सोमयागको 'सत्र' कहते हैं। सत्रमें १२ से लेकर १००० तक सुत्याएँ होती हैं। सोमलताके रसको विधिपूर्वक निकालकर प्रातःकाल, मध्याह्नकाल और सायङ्काल इन तीनों समयोंमें हवन करनेको 'एक सुत्या' कहते हैं।

जिस यज्ञमें दो सुत्यासे लेकर ग्यारह सुत्याएँ हों और जिसके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आदि—अन्तमें 'अतिरात्र' नामक यज्ञ हो और जिसमें एक तथा अनेक यजमान कर्त्ता हों, ऐसे सोमयागको 'अहीन' कहते हैं। द्वादशाह यज्ञ छत्तीस दिनोंमें पूर्ण होता है। इस यज्ञके त्रैवर्णिक अधिकारी हैं।

(१०) **गवामयन सत्र**—यह सत्र तीन सौ पचासी दिनोंमें पूर्ण होता है। गौओं द्वारा अनुष्ठित होनेसे यह 'गवामयन' कहलाता है। इसका प्रारम्भ माघ कृष्ण अष्टमी, माघ शुक्ल एकादशी, फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा अथवा चैत्र शुक्ल पूर्णिमाको होता है। इसमें प्रारम्भसे लेकर बारह दीक्षाएँ, बारह उपसद और तीन सौ इकसठ सुत्याएँ होती हैं।

(११) **वाजपेय यज्ञ**—इस यज्ञके आदि और अन्तमें 'बृहस्पति सव' नामक सोमयाग अथवा 'अग्निष्टोम यज्ञ' होता है। अथवा वाजपेय यज्ञके प्रथम और पश्चात् बारह-बारह शुक्ल पक्षोंमें बारह-बारह अग्निष्टोमादि यज्ञ होते हैं। इसमें सतरह-सतरह हाथके सतरह यूप होते हैं। यह यज्ञ शरद् ऋतुमें होता है और चालीस दिनोंमें पूर्ण होता है। इस यज्ञका अधिकार केवल ब्राह्मण और क्षत्रियको ही है, किन्तु सप्तसंस्थान्तर्गत वाजपेय यज्ञका अधिकार वैश्यको भी है।

(१२) **राजसूय यज्ञ**—इस यज्ञमें अनुमती आदि बहुत-सी इष्टियाँ मल्हादि पशुयाग और पवित्र आदि बहुत-से सोमयाग होते हैं। इस यज्ञका अधिकार राज्यसिंहासनारूढ़ अभिषिक्त क्षत्रिय राजाको ही है। यज्ञका प्रारम्भ फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदको होता है। यह तैंतीस महीनेमें पूर्ण होता है। राजसूय यज्ञ करनेके बाद क्षत्रिय राजा 'सम्राट्' (चक्रवर्ती) उपाधिको धारण करता है।

(१३) **अग्निचयन**—जिस यज्ञमें ईंटोंके द्वारा वेदीका निर्माण हो उसे 'चयन' अथवा 'अग्निचयन' कहते हैं। वह वेदी दस हाथ लम्बी और चौड़ी होती है, जिसको 'आत्मा' कहते हैं। इसके दक्षिण

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

और उत्तरकी ओर छः-छः हाथका चबूतरा बनता है, जिसे 'दक्षिण-पक्ष' और 'उत्तरपक्ष' कहते हैं। पश्चिमकी तरफ साढ़े पाँच हाथका बनता है, जिसे 'पुच्छ' कहते हैं। इसकी ऊँचाई पाँच हाथकी होती है। अतः इसको 'पञ्चचितिक स्थण्डिल' कहते हैं। इसमें चौदह तरहकी ईंटें लगती हैं। (इन ईंटोंके नाम और माप स्वर्गीय म० म० पं० श्रीविद्याधर गौडके रचित 'श्रौतयज्ञ-परिचय' (पृष्ठ ७६) नामक ग्रन्थमें देखिये)। चयन यज्ञके चबूतरे समस्त इष्टिकाएँ ग्यारह हजार, एक सौ सत्तर (११६७०) होती हैं।

(१४) **अश्वमेध यज्ञ**—इस यज्ञमें दिग्विजयके लिये अश्व (घोड़ा) छोड़ा जाता है। इसमें इक्कीस हाथके यूप होते हैं। इस यज्ञका प्रारम्भ फाल्गुन मासकी शुक्ल पक्षकी अष्टमी तिथिको होता है। अथवा ग्रीष्म ऋतुमें अष्टमी या नवमी तिथिको प्रारम्भ होता है। यह यज्ञ दो वर्षसे भी अधिक समयमें समाप्त होता है। इस यज्ञका अधिकार अभिषिक्त सार्वभौम चक्रवर्ती राजाको ही बताया गया है।

(१५) **पुरुषमेध यज्ञ**—इस यज्ञमें पुरुष आदि यूपमें बाँधकर छोड़ दिये जाते हैं। इसमें तेईस दीक्षाएँ, बारह उपसद और पाँच सुत्याएँ होती हैं। इसमें ग्यारह यूप होते हैं। यह यज्ञ चैत्र शुक्ल दशमीसे प्रारम्भ होता है। इस यज्ञकी समाप्ति चालीस दिनोंमें होती है। इस यज्ञका अधिकार ब्राह्मण और क्षत्रियको ही है। इस यज्ञको करनेके बाद यज्ञकर्त्ता गृहत्यागपूर्वक वानप्रस्थाश्रममें प्रवेश कर सकता है।

(१६) **सर्वमेध यज्ञ**—इस यज्ञमें सभी प्रकारके अन्नों और वनस्पतियोंका हवन होता है। इस यज्ञमें बारह दीक्षाएँ, बारह उपसद और बारह सुत्याएँ होती हैं। यह यज्ञ चौंतीस दिनोंमें समाप्त होता है।

(१७) **पितृमेध यज्ञ**—इस यज्ञमें मृत पिता आदिका अस्थिदाह होता है। अर्थात् मरे हुए पिता आदिकी अस्थियोंको जंगलमें ले

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जाकर उन अस्थियोंको यथास्थान तत्तत् अङ्गोंकी कल्पनाकर पुरुषाकृति (मानवाकृति) बना लें। पश्चात् सेवार, कुश आदिसे उन्हें ढँक कर ग्राममें वापस आकर स्नान करें। पश्चात् घरमें प्रवेश करें। इस यज्ञमें केवल एक ही अध्वर्यु ऋत्विक् होता है। इस यज्ञके अधिकारी त्रैवर्णिक हैं।

(१८) **एकाह यज्ञ**—एक दिनमें होनेवाले यज्ञको 'एकाह यज्ञ' कहते हैं। जिन यज्ञोंमें एक सुत्या होती है, ऐसे सोमयाग, विश्वजित्, सर्वजित्, भूष्टोम आदि शताधिक यज्ञ तत्तत्सूत्रोंमें विहित हैं। इस यज्ञमें एक यजमान और सोलह ऋत्विक् होते हैं।

(१९) **अहीन यज्ञ**—दो सुत्यासे लेकर ग्यारह सुत्याओं तकको 'अहीन यज्ञ' कहते हैं। ये भी विभिन्न नामोंमें शताधिक तत्तत्सूत्रोंमें विहित हैं। यह अहीन यज्ञ अनेक दिनोंमें पूर्ण होनेवाले ऋतुओंका वाचक है।

(२०) **सत्र**—बारह, तेरह, चौदह, पन्द्रह, सोलह, अठारह, उन्नीस, बीस, इक्कीस, बाईस, तेईस, चौबीस, पचीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उन्तीस, तीस, इकतीस, बत्तीस, तेंतीस, पैंतीस, छत्तीस, सैंतीस, अड़तीस, उनतालीस, चालीस, उनचास, सौ, तीनसौ साठ और एक हजार सुत्यावाले जो अनेक सोमयाग हैं, उन्हें 'सत्र' कहते हैं।

यह विशेष स्मरण रखना चाहिये कि एक दिनमें एक ही सुत्या होती है।

अपने स्वर्णिम अतीतमें भारत इस श्रौतयज्ञ-संस्थाको बड़ी मुस्तैदीके साथ चलाता रहा। कोई द्विज ऐसा न था, जो ये वेदोक्त श्रौतयज्ञ न करता हो। फलस्वरूप उन दिनों देश सब तरहसे भरा-पूरा रहा। आज केवल स्मार्तयज्ञ थोड़े-बहुत दीख भी पड़ते हैं (यद्यपि वे नगण्य हैं), किन्तु श्रौतयज्ञ और उसके कर्ता याज्ञिक तो ढूँढ़ने पर भी कठिनाईसे मिलते हैं। इसका कुफल भी प्रत्यक्ष है। अतः हमें

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्राचीन वेदोक्त इन श्रौतकर्मोंकी ओर अविलम्ब मुड़कर देशको पुनः उन्नतिके पथपर अग्रसर करना होगा।

यज्ञाद् भवति पर्जन्यः

सन् १९६० की बात है। मैं श्रावण मासमें जि० हिसारके सुप्रसिद्ध 'किरमारा' ग्राममें 'रुद्रयाग' कराने गया था। वहाँ प्रतिदिन यज्ञके प्रेमी यज्ञ भगवान्‌के दर्शनार्थ आते थे। एक दिन 'किरमारा' ग्रामके पासके 'गोरखपुर' ग्रामके मिडिल स्कूलके कई अध्यापक यज्ञके दर्शन करके मेरेसे मिलने पधारे। उनमेंसे एक अध्यापक महोदय (जिनका नाम मुझे स्मरण नहीं है) ने मेरेसे कहा—'आप काशीके सुप्रसिद्ध याज्ञिक विद्वान् हैं। गीताके **'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः'** के अनुसार यज्ञके द्वारा तत्काल वर्षा कराके दिखाइये।'

मैंने अध्यापक महोदयके प्रश्नका चार प्रकारसे समाधान इस प्रकार किया—

(१) मैंने कहा—**'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः'** का अर्थ यह आपने कैसे समझा कि—यज्ञ करनेसे तत्काल वर्षा होती है ? अध्यापक महोदय निरुत्तर हो गये।

मैंने कहा—आपको गीताका **'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः'** केवल इतना ही याद है या पूरा श्लोक याद है ? अध्यापक महोदयने कहा—मुझे पूरा श्लोक याद है और उन्होंने इस प्रकार पूरा श्लोक सुनाया—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥
(गीता ३।१४)

मैंने कहा—इस श्लोकमें **'पर्जन्यादन्नसम्भवः'** भी लिखा है। अर्थात् वर्षासे अन्नकी उत्पत्ति होती है। 'आप बतलाइये—संसारमें ऐसी भी कोई 'भूमि' है, जहाँ पर वर्षा होते ही तत्काल 'अन्न' पैदा हो जाय ?

अध्यापक—मेरी समझमें ऐसी भूमि तो कहीं भी नहीं है कि वर्षा होते ही तत्काल अन्न उत्पन्न हो जाय। वर्षा होने पर काफी समयकी प्रतीक्षा करने पर ही प्रभुकी कृपासे अन्न होता है।

मैंने कहा—जिस प्रकार वर्षासे तत्काल अन्नके उत्पन्न होनेकी सम्भावना करना भूल है, उसी प्रकार यज्ञसे तत्काल वर्षाकी सम्भावना व्यर्थ है।

(२) मैंने अध्यापक महोदयसे कहा—आप यह बतलाइये कि—'यज्ञसे वर्षा होती है, यह आपको कैसे मालूम हुआ ?'

अध्यापक—यज्ञाग्निमें ब्राह्मणलोग जो हवन करते हैं, उससे शक्तिसंम्पन्न धूम (धूवाँ) उत्पन्न होकर आकाशमें पहुँचता है और वह मेघरूपमें परिणत होकर पृथ्वीमें जलके रूपमें बरसता है।

मैंने कहा—मैं आपकी बातको मानता हूँ। सारांश यह है कि—वर्षा होनेके लिये काफी प्रपञ्च करने पड़ते हैं। प्रथम यज्ञकी व्यवस्था करनी पड़ती है। पश्चात् यज्ञाग्निमें ब्राह्मणोंके द्वारा हवन होता है, फिर उस हवनसे निःसृत धूम आकाशमें जाकर वर्षाके रूपमें परिणत होता है।

मैंने पुनः अध्यापकसे कहा—कृपया यह बतलाइये कि इस 'किरमारा' ग्राममें जो महायज्ञ हो रहा है, इसमें हवन करनेवाले कितने ब्राह्मण हैं ?'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अध्यापकने कहा—यज्ञमें पचीस-तीस ब्राह्मण हवन करते हैं ।

मैंने कहा—किरमारा ग्राममें बहुत वर्षोंसे हजारों व्यक्तियों द्वारा प्रतिदिन बीड़ी, सिगरेट, गाँजा आदिका जो धूम्रपानात्मक अखण्ड 'महायज्ञ' चल रहा है, उसने यहाँके आकाश—मण्डलको इस प्रकार आच्छादित कर दिया है कि वह अल्पसंख्यक यज्ञके ब्राह्मणोंके द्वारा निःसृत धूएँको आकाश-मण्डलमें जाने ही नहीं देता अर्थात् बीड़ी, सिगरेट, गाँजा आदिका अत्यधिक धूवाँ बीचमें यज्ञके धूएँको रोक देता है। ऐसी स्थितिमें वर्षा तत्काल कैसे हो ? अतः आप यज्ञके द्वारा तत्काल वर्षा चाहते हैं, तो सर्वप्रथम बीड़ी, सिगरेट, गाँजा आदिके धूम्रपानको रोकनेकी व्यवस्था कीजिये ।

अध्यापक मेरी बातोंको सुनकर मौन हो गये ।

(३) मैंने कहा—किसीके पुत्रका विवाह हो और उस पुत्रके विवाह-मण्डपमें विवाहके समय वर-वधूको शुभाशीर्वाद-प्रदानार्थ साक्षात् ब्रह्मा, विष्णु और महेश पधारकर उन्हें 'पुत्र' प्राप्तिके निमित्त आशीर्वाद देदें और भगवत्कृपासे तत्काल नव-विवाहिता वधू गर्भवती हो जाय और गर्भवतीके रूपमें सर्वप्रथम नव-वधू 'पतिगृह' पहुँचे और उसको 'गर्भवती' देखकर पतिगृहवाले उस गर्भवती नववधूको अपने घर रखेंगे या उसे व्यभिचारिणी समझकर घृणा और हेय दृष्टिसे उसका परित्याग करेंगे ?

अध्यापक—ऐसी स्थितिमें नववधूका परित्याग होगा ।

मैंने कहा—उसी प्रकार यज्ञके द्वारा तत्काल वर्षा भी हानिकारक और परित्यागके योग्य है ।

(४) **'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः'** का आप यह अर्थ कदापि न समझिये कि—आपके गाँवमें जीवनमें केवल एक बार यज्ञ करानेसे वर्षा हो जाय । यज्ञका अर्थ बहुत व्यापक है । प्राचीन कालमें घर-घरमें यज्ञ होते थे। उस समय कोई भी ऐसा द्विज नहीं था, जिसके घरमें प्रति-दिन यज्ञ न होता हो । यज्ञकी प्रचुरतासे आवश्यकतानुसार समय-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

समय पर सर्वत्र वर्षा होती थी, जिससे गीताका **'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः'** यह भगवद्वाक्य पूर्ण घटित होता था।

राजा दिलीपकी कथा प्रसिद्ध है। वह पुत्र की इच्छासे महर्षि वशिष्ठजीके आश्रममें पहुँचे, तो उन्हें विदित हुआ कि महर्षि वशिष्ठ अपनी पत्नी अरुन्धतीके सहित 'यज्ञशाला' में बैठे हुए यज्ञ-कार्य सम्पादन कर रहे हैं। यज्ञकार्यको पूर्ण करके महर्षिने राजा दिलीपको दर्शन देकर उनकी इच्छा पूर्ण की।

विधेः सायन्तनस्यान्ते स ददर्श तपोनिधिम्।
अन्वासितमरुन्धत्याः स्वाहयेव हविर्भुजम्॥
(रघुवंश १।५६)

यह था प्राचीन कालका आदर्श यज्ञमयजीवन। इन्हीं यज्ञोंके कारण सारे संसारका सब प्रकारसे सर्वदा कल्याण होता रहता था। आज हम उन आदर्शमय यज्ञोंको भूल गये, जिससे हमें गीताके **'यज्ञाद् भवति पर्जन्यः'** का यथार्थ फल प्राप्त नहीं हो रहा है।

वस्तुतः गीताके **'यज्ञाद् भवति पर्जन्यः'** इसमें 'पर्जन्य' शब्द साकूत (साभिप्राय) है, वह केवल मेघ या वर्षाके साधारण अर्थमें प्रयुक्त नहीं है, किन्तु 'पृपालनपूरणयोः' इस धातुपाठके अनुसार पालन और पूर्णार्थिक अर्थमें प्रयुक्त है। **'धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः'** (मेघदूत, पूर्वमेघ) के अनुसार बादल और वर्षा तो जैसे-तैसे धूम्रसे भी हो सकती है, किन्तु वह वर्षा विषाक्त और असामयिक होगी, जिससे प्राणी रुग्ण और क्लेशभाजन बनेंगे। परन्तु यज्ञसे पर्जन्य अर्थात् प्राणियोंका पालन और पोषण करनेवाली सामयिक वर्षा होगी, यही 'पर्जन्य' शब्दका मुख्य अभिप्राय है।

—०—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ-सम्बन्धमें प्रश्नोत्तर

प्रश्न—यज्ञका फल यदि स्वर्ग है, तो यज्ञ करनेसे यज्ञकर्ताको तत्काल स्वर्गकी प्राप्ति क्यों नहीं होती ?

उत्तर—'**ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामो यजेत**', '**अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः**' इत्यादि वाक्योंसे स्पष्ट है कि यज्ञसे स्वर्गकी प्राप्ति अवश्य होती है, किन्तु यज्ञसे तत्काल स्वर्गकी प्राप्ति सर्वथा असंभव है। यज्ञ एक विशिष्ट क्रियाकलाप है, जो कि इसी लोकमें समाप्त हो जाता है, किन्तु तज्जन्य व्यापार अदृष्ट अथवा पुण्य स्थायी बना रहता है। वह अदृष्ट अथवा पुण्य आत्मामें अथवा अन्तःकरणमें विद्यमान रहता है, जो कि यज्ञकर्ता यजमानको स्वर्गादि फल देनेमें साधक होता है। जिस प्रकार कुम्भकार घटनिर्माणार्थ चक्र चलाकर जब उसको बन्द करता है, तब भी उसमें तज्जन्य चक्रका भ्रमण-व्यापार पूर्ववत् निहित रहता है और वह घटको तैयार करके ही शान्त (बन्द) होता है, उसी प्रकार '**काशीमरणान्मुक्तिः**' की भी व्यवस्था है। मनुष्यके श्वास-प्रश्वास बन्द होनेसे उसकी मृत्यु हो जाती है, किन्तु उससे उसकी मुक्ति नहीं होती। मुक्तिके लिये भगवान् विश्वनाथजीके प्रणवोपदेशकी आवश्यकता होती है, जो कि जीवात्माके अन्तःकरणमें विद्यमान होकर मुक्ति प्रदान करता है। यदि इसको न माना जाय, तो '**ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः**' यह श्रुति व्यर्थ हो जायगी। इसी प्रकार और भी अनेक दृष्टान्त हैं। अतः स्पष्ट है कि यज्ञकर्मके द्वारा जो अदृष्ट अथवा पुण्य बनता है, वह स्वर्ग-प्रदानका हेतु अवश्य है और वह फल प्रदान कर शान्त हो जाता है। वही व्यापार पुण्यस्थानीय स्वर्गादि लोकोंको देता है, यह मीमांसकोंका सिद्धान्त है।

(२) **प्रश्न**—यज्ञमें 'नारायणाय स्वाहा' आदि कहकर यज्ञ-कुण्डमें जो "आहुति' डाली जाती है, वह क्या भगवान् नारायणको प्राप्त होती है ?

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

उत्तर—श्रीमद्भागवत (६।२।७) में अजामिलकी कथा प्रसिद्ध है। वह सत्कर्मसे च्युत और असत्कर्ममें लिप्त था, किन्तु मृत्युकालमें भयवश उसने भगवन्नामधारी 'नारायण' नामक अपने पुत्रका उच्चारण किया, जिसके प्रभावसे उस दुष्कर्मीकी रक्षा भगवान्‌के द्वारा हुई और वह यम—यातनासे मुक्त होकर भगवान्‌के परम दिव्य धामको प्राप्त हुआ।

विचार करनेकी बात है कि अजामिल जैसे पाप-परायण व्यक्तिने साक्षात् भगवान्‌का नामोच्चारण न कर, केवल अपने पुत्रके बहाने 'नारायण' का उच्चारण कर भगवान्‌के दिव्य धामको प्राप्त कर लिया, तो जो व्यक्ति वेद-मन्त्रोंके ऋषि, छन्द, देवता और विनियोग आदिके द्वारा विधि-विधानपूर्वक 'नारायणाय स्वाहा' कहकर यज्ञ-कुण्डमें आहुति डालते हैं, तो क्या उनकी दी हुई आहुतिको भगवान् नारायण स्वीकार नहीं करेंगे? अवश्य ही करेंगे। विधि-विधानपूर्वक दी हुई आहुतिको भगवान् अवश्य स्वीकार करते हैं और वे यज्ञकर्ताको श्रेष्ठ फल प्रदान करते हैं, यह ध्रुव है।

(३) **प्रश्न**—यज्ञ करनेका विशेष विधान 'त्रेतायुग' में कहा गया है, तो कलियुगमें 'यज्ञ' करनेकी क्या जरूरत है?

उत्तर—त्रेतायुगमें यज्ञ करनेका जो शास्त्रोंमें उल्लेख मिलता है, उसका यह अभिप्राय नहीं है कि त्रेतायुगमें ही यज्ञ करना चाहिये, अन्य युगमें नहीं करना चाहिये। त्रेतायुगमें यज्ञ करनेकी जो बात कही गई है, उसका अभिप्राय यह है कि—त्रेतायुगमें ही यज्ञका प्रादुर्भाव हुआ था, अतः त्रेतायुगमें यज्ञके प्रति प्रायः सभी लोगोंकी विशेष श्रद्धा रहती थी। उस समय सभी लोग यज्ञ करते थे और उस समय यज्ञका कोई भी विरोधी नहीं था।

जिस प्रकार त्रेतायुगमें यज्ञके प्रति सब लोग श्रद्धा रखते थे, उस प्रकार अन्य युगोंमें, विशेषकर कलियुगमें यज्ञके प्रति सब लोग श्रद्धा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नहीं रखेंगे, किन्तु यज्ञके प्रति तरह-तरहके खण्डन-मण्डन और निन्दा करनेवाले होंगे।

(४) **प्रश्न**—'**कलौ केशवकीर्तनात्**' और '**दानमेकं कलौ युगे**' के अनुसार कलियुगमें कीर्तन करना और दान करना ही उचित है, तो कलियुगमें यज्ञ करनेकी क्या आवश्यकता है?

उत्तर—शास्त्रोंमें '**कलौ केशवकीर्तनात्**' और '**दानमेकं कलौ युगे**' आदि जो वाक्य लिखे हैं, वे अर्थवादपरक (स्तुतिमात्रपरक) हैं, न कि यज्ञविरोधी वाक्य हैं।

(५) **प्रश्न**—शास्त्रोंमें '**नास्ति यज्ञसमो रिपुः**' का उल्लेख कर यज्ञको 'शत्रु' बतलाया गया है, तो शत्रुरूप यज्ञ करनेकी क्या आवश्यकता है?

उत्तर—मत्स्यपुराण (९३।१११) में '**नास्ति यज्ञसमो रिपुः**' का जो उल्लेख किया गया है, वह सबके लिये नहीं कहा गया है, किन्तु केवल यज्ञके यजमानके लिये कहा गया है। 'जो यजमान शास्त्र-विधिके अनुकूल यज्ञ करते हैं और यज्ञके आचार्यादि ऋत्विजोंका दक्षिणा आदिके द्वारा पूर्णरूपसे सम्मान करते हैं, उनके लिये यज्ञ सर्वप्रकारसे कल्याणकारक होता है और जो यजमान शास्त्र-विधिके विरुद्ध यज्ञ करते हैं उनके लिये वह शत्रुरूपमें परिणत होकर हानिकारक होता है।' अतः निष्कर्ष यह है कि '**नास्ति यज्ञसमो रिपुः**' इस वाक्यका उल्लेख केवल विधिहीन यज्ञ करनेवाले यजमानके लिये ही किया गया है, न कि समस्त संसारके लिये।

(६) **प्रश्न**—जो यज्ञ विधिपूर्वक नहीं किया जाता, उसका फल यजमानको प्राप्त होता है या नहीं?

उत्तर—जिस यज्ञको यजमान श्रद्धासे करता है उसका फ़ल उसको अवश्य प्राप्त होता है और जिस यज्ञको वह अश्रद्धासे करता

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है, उसका फल उसको प्राप्त नहीं होता। इस विषयमें गीता (१७।२८) का भी कहना है कि—

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह॥

'हे अर्जुन! अश्रद्धासे किया हुआ हवन, दान, तप और जो कुछ भी कर्म किया जाता है वह सब असत् कहा जाता है, इसलिये वह न तो इस लोकमें और न परलोकमें ही कल्याणकारक होता है।'

अतः मनुष्यको श्रद्धापूर्वक यज्ञ करना चाहिये। श्रद्धापूर्वक किया हुआ यज्ञ विधिपूर्वक हो अथवा अविधिपूर्वक उसका फल यजमानको अवश्य ही प्राप्त होता है।

यह निर्विवाद है कि यज्ञ जैसे महनीय कार्योंमें मनुष्यसे ज्ञाताज्ञात रूपमें थोड़ी-बहुत त्रुटि अवश्य ही हो जाती है। अतएव शास्त्रोंकी आज्ञा है कि यज्ञादि कर्मके अन्तमें कर्मकी न्यूनताकी पूर्तिके लिये भगवन्नामका स्मरण अवश्य करना चाहिये। भगवान्‌के स्मरणमात्रसे ही यज्ञादिमें होनेवाली सभी प्रकारकी त्रुटियों और अविधियोंकी पूर्ति हो जाती है।

(७) **प्रश्न**—यज्ञ करनेसे ही यदि वर्षा होती है, तो जिन देशोंमें (इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस, जर्मन आदि देशोंमें) यज्ञ नहीं होते, वहाँ वर्षा क्यों होती है?

उत्तर—यज्ञका बहुत व्यापक प्रभाव होता है। अतः यज्ञ किसी भी स्थानमें किया जाय, उसका प्रभाव सर्वत्र पड़ता ही है, जिससे समस्त देशोंमें वर्षा होती है। यज्ञ करनेसे केवल भारतवर्षमें ही वर्षा होती है, अन्य देशोंमें नहीं होती, ऐसा कहीं भी नहीं कहा गया है। इसलिये किसी भी स्थानमें विधिपूर्वक यज्ञ किया जाय, तो उसका व्यापक प्रभाव समस्त देशोंमें पड़ता है, जिससे सर्वत्र वर्षा होती रहती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जिस प्रकार मनुष्योंके द्वारा प्रतिदिन किसी न किसी प्रकारके यज्ञ होते रहते हैं, उसी प्रकार प्रकृतिके द्वारा भी नित्य—निरन्तर यज्ञ होते रहते हैं। अतः मनुष्योंके द्वारा और प्रकृतिके द्वारा होनेवाले यज्ञोंके परिणामस्वरूप वर्षा केवल भारतवर्षमें ही नहीं, अन्य देशोंमें भी होती है।

यज्ञका फल चिरस्थायी होता है। अतः प्राचीनकालमें जो यज्ञ हुए हैं, उन्हींके फलस्वरूप आज भी सर्वत्र वर्षा होती रहती है और सर्वदा होती रहेगी।

—:०:—

वेदोंमें यज्ञसम्बन्धी कुछ आवश्यक बातें

ऋग्वेद

१—यज्ञकी अग्निमें डाला हुआ पदार्थ देवताओंको प्राप्त होता है (१।१।४)

२—इन्द्र ऋषियोंके द्वारा की गई स्तुतिमें और मनुष्योंके द्वारा किये गये यज्ञोंमें जाते हैं (१।८४।२)

३—यज्ञके द्वारा ही प्रभुकी प्राप्ति होती है (१।९६।३)

४—यह यज्ञ समस्त भुवनोंका केन्द्र (नाभिस्थान) है (१।१६४।३५)

५—यह यज्ञ मनुष्यको परमात्माके पास पहुँचानेवाला है। यह यज्ञ स्वयं पवित्र है और दूसरोंको पवित्र करनेवाला है (१।१७७।४)

६—यज्ञसे प्राणिमात्रका कल्याण होता है तथा यज्ञसे देश और समाजका सञ्चालन एवं संरक्षण होता है (२।३८।१)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७—अग्निदेव हविर्द्रव्यके द्वारा देवताओंका सत्कार करते हैं, अतः सत्य-सनातनस्वरूप यज्ञोंको (निन्दाद्वारा) कोई भी दूषित करनेमें समर्थ नहीं हो सकता (३।३।१)

८—परमात्मा यज्ञके द्वारा मनुष्योंको सर्वदाके लिये भक्ति-युक्त वना देता है (५।३।५)

९—यज्ञकी अग्नि हविर्द्रव्य प्रदान करनेवालेको अत्यन्त यशस्वी, ज्ञानी, विजयी और श्रेष्ठ वाग्मी (वक्ता) बनाती है और सर्वगुण-सम्पन्न पुत्र प्रदान करती है (५।२५।५)

१०—व्यभिचारी मनुष्यको यज्ञादि धार्मिक कार्योंमें भाग नहीं लेना चाहिये (७।२१।५)

११—देवगण यज्ञकर्ता (यजमान), पुरुषार्थी और भक्तको चाहते हैं, वे आलसीसे प्रेम नहीं करते (८।२।१८)

१२—यज्ञके द्वारा इन्द्र समृद्धिको प्राप्त हुए (८।१४।५)

१३—जो यज्ञकर्ता (यजमान) ब्रह्म-परायण है, वह निश्चित ही कभी ऋणी नहीं रह सकता (८।३२।१६)

१४—यज्ञ ही प्रथम और मुख्य धर्म है (१०।९०।१६)

१५—यज्ञादि सत्कर्मोंकी समस्त देशोंमें वृद्धि करनी चाहिये (१०।१०१।१०)

१६—हवन करनेसे अभिलषित कामनाओंकी पूर्ति होती है (१०।१०१।२)

शुक्ल यजुर्वेद

१—यजमान (यज्ञकर्ता) को यज्ञादि समस्त कार्योंमें परमेश्वरकी सहायतार्थ प्रार्थना करनी चाहिये। परमेश्वरकी प्रार्थना करनेसे यजमानके द्वारा किया गया यज्ञ ठीक-ठीक सम्पादित होता है और यजमानका मङ्गल होता है। परमात्माकी प्रार्थना न करनेसे यज्ञमें अमङ्गल होता है (१।६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२—हिंसारहित यज्ञ श्रेष्ठ होता है (२।८)

३—यज्ञके द्वारा मनुष्यकी आत्माग्नि प्रदीप्त होती है। आत्माग्निके प्रदीप्त होनेसे परमात्मा प्रसन्न होते हैं और वह प्रसन्न होकर यज्ञकर्ताके समस्त मनोरथोंको पूर्ण करते हैं (२।१४)

४—यज्ञ त्रिलोक-व्यापी है अर्थात् यज्ञ समस्त संसारमें रहता है (४।६)

५—यज्ञ-हवनसे विविध कामनाएँ पूर्ण होती हैं (१०।२०)

६—जो मनुष्य यज्ञ नहीं करता, उसपर दुर्भाग्य अपना आक्रमण कर लेता है (१२।६२)

७—प्रजापतिने प्रजाकी सृष्टि-कामनासे यज्ञ प्रारम्भ किया और उस यज्ञकी अग्निमें अपनी वपा (हृदयकी चर्बी) निकाल कर उसका हवन किया। अतः जब कि प्रजापतिने सृष्टि-समृद्धिके लिये अपनी वपाद्वारा यज्ञ किया, तो उनकी सन्तुष्टिके लिये हमें भी हवनीय द्रव्यद्वारा अवश्य यज्ञ करना चाहिये (१३।५१)

८—यज्ञमें यजमान देवताओंको आह्वान करता हुआ उनसे प्रार्थना करता है कि आपलोग मेरे यज्ञमें पधार कर मुझे अभिलषित पदार्थोंको देनेकी कृपा करें (२०।४८)

९—यज्ञ करनेसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है (२०।८४)

१०—देवताओंके निमित्त प्रकृतिद्वारा रात्रिन्दिवा यज्ञ होता रहता है (२१।४१)

११—देवताओंका यज्ञ सर्वदा होता रहता है। अतः मनुष्योंको भी सदैव यज्ञ करना चाहिये (२१।४७)

१२—यह सम्पूर्ण पृथ्वी यज्ञकी वेदीरूप है, इसमें होनेवाले यज्ञ ही विश्वको धारण किये हुए हैं (२३।६२)

१३—यज्ञ-मण्डपके दर्वाजे मजबूत बनवाने चाहियें, जिससे किसी प्रकारके पशु यज्ञ-मण्डपमें प्रवेश न कर सकें और धूल तथा वृष्टि आदिका जल यज्ञ-मण्डपमें प्रवेश न कर सके (२८।१३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१४—यज्ञ और यज्ञ भगवान्‌की उपासना करनेसे मनुष्यके मनकी, वाणीकी एवं बुद्धिकी उन्नति होती है (३०।१)

१५—यज्ञ दूसरी वस्तुओंके अभावमें तो हो सकता है, किन्तु अग्निके अभावमें कथमपि नहीं हो सकता (३३।१६)

१६—यज्ञोंमें ऋत्विजोंका पूर्ण राज्य अर्थात् स्वातन्त्र्य होता है। अतः जिस प्रकार राजाओं पर अनुशासन नहीं किया जाता, उसी प्रकार यज्ञके ऋत्विजों पर भी यजमानको अनुशासन नहीं करना चाहिये (३३।८३)

१७—वायु और इन्द्रसे प्रार्थना की गई है कि वे यज्ञके दिनोंमें जल और वायुको दूषित न होने दें। क्योंकि जल और वायुके दूषित होनेसे संक्रामक रोगोंके होनेकी संभावना रहती है, जिससे मनुष्योंमें बिमारी होनेका विशेष भय रहता है (३३।८६)

१८—हव्य-प्रदानद्वारा मित्रावरुणकी उपासना करनेसे संक्रामक रोग शान्त हो जाते हैं (३३।८७)

१९—यज्ञमें समस्त देवताओंको आह्वान करते हुए कहा गया है कि आपलोग यज्ञमें पधार कर हमारी आयुकी वृद्धि करें, पापोंको दूर करें, दुर्भाग्यका नाश करें और हमारे सभी कार्योंमें सहायक बनें (३४।४७)

सामवेद

१—यज्ञके द्वारा ही इन्द्रदेव समृद्धिशाली हुए (पूर्वा० २।१७)

२—यज्ञसे अनेक प्रकारके ऐश्वर्योंकी प्राप्ति होती है (पूर्वा० २।८।५)

३—देवगण यज्ञकर्ता, पुरुषार्थी और भक्तको चाहते हैं, वे आलसीसे प्रेम नहीं करते (पूर्वा० ३।८।९)

४—इन्द्र ऋषियोंके द्वारा की गई स्तुतिमें और मनुष्योंके द्वारा किये गये यज्ञोंमें जाते हैं (उत्तरा० ३।३।२३)।

५—यज्ञकी ज्योति मनुष्यको पवित्र करती है (उत्तरा० ७।१।१)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अथर्ववेद

१—यज्ञाग्निमें डाला हुआ हविर्द्रव्य देवताओंको प्राप्त होता है (५।१२।२)

२—यज्ञ करनेवाला मनुष्य परम धाममें प्रतिष्ठित होता है, यह ध्रुव है। अतः परम धाममें जानेवाले यज्ञकर्ताका इष्टापूर्तिके द्वारा स्वागत करना चाहिये (६।१२३।३)

३—यज्ञ समस्त ब्रह्माण्डका बाँधनेवाला नाभिस्थान है (९।१०।१४)

४—यज्ञहीन पुरुषका तेज नष्ट हो जाता है (१२।२।३७)

५—यज्ञ करनेवाले पुरुष स्वर्गमें जाते हैं (१८।४।२)

६—जो यज्ञ हमारा कल्याणकारक है, जिसके द्वारा हम सब प्रकारसे वृद्धिङ्गत होते हैं, उस यज्ञके निमित्त यज्ञ भगवान्‌से प्रार्थना करनी चाहिये (१९।६०।२)

७—यज्ञके द्वारा इन्द्रदेवने अपनी उन्नति की (२०।२७।५)

८—देवगण यज्ञकर्ता (यजमान), पुरुषार्थी और भक्तको चाहते हैं, वे आलसीसे प्रेम नहीं करते (२०।१८।३)

—०—

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगी— २२.२.३६४
(३ १)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्राह्मण-ग्रन्थोंमें यज्ञसम्बन्धी आवश्यक बातें

शतपथब्राह्मण

१—यज्ञसे ही यज्ञका निर्माण होता है (१।१।२)

२—यज्ञके समय अपवित्रता नहीं करनी चाहिये (१।४।१)

३—हिंसारहित यज्ञकर्म श्रेष्ठ होता है (१।४।५)

४—यज्ञ अत्यन्त श्रेष्ठ कर्म है (१।७।१।५)

५—यज्ञमें ही ऐश्वर्य है (१।७।१।६)

६—यज्ञ ही विश्वका उत्पत्तिस्थान है और वही श्रेष्ठ कर्म है (१।७।४।५)

७—यज्ञ ही देवताओंकी विभूति है (१।७।२।११)

८—यजमानके लिये यज्ञको ही देवताओंका आशीर्वाद कहा गया है। यज्ञमें जो आहुति दी जाती है, वह भी यज्ञरूपमें यजमानके लिये आशीर्वाद ही है (२।३।४।५)

९—इन्द्र ही यज्ञका देवता है (३।५।२।६)

१०—यज्ञसे सन्तति उत्पन्न होती है (४।४।२।६)

११—यज्ञ ही देवताओंका अन्न (भोजनीय पदार्थ) है (५।१।१।२)

१२—यज्ञ करनेसे मनुष्यको चन्द्रलोककी प्राप्ति होती है (७।३।१।२०)

१३—यज्ञ ही देवताओंकी आत्मा है (८।६।१।१०)

१४—यज्ञ ही समस्त प्राणियोंका रक्षण (पालन) करता है (६।४।१।११)

१५—यज्ञकी रक्षा तभी होती है जब विद्वान् वेदज्ञ ब्राह्मण यज्ञको करते कराते हैं (६।८।६।२८)

१६—यज्ञकर्ताको स्वर्गकी प्राप्ति होती है (१२।४।३।७)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१७—जो ब्राह्मण अश्वमेध यज्ञकी विधि नहीं जानता, वह ब्राह्मण नहीं है (१३।४।२।१७)

१८—यज्ञ समस्त प्राणियों और समस्त देवताओंका आत्मा (जीवन) है (१४।३।२।१)

ऐतरेयब्राह्मण

१—यज्ञ जनताके कल्याणके लिये होता है (१।२।३)

२—यज्ञकर्ता (यजमान)को स्वर्गकी प्राप्ति होती है (१।२।१०)

३—यज्ञ करनेसे और वेदमन्त्रोंके उच्चारण (स्वाध्याय) करनेसे वायुमण्डलमें परिवर्तन होता है, जिससे समस्त विश्वमें धर्मचक्र चलने लगता है (१।४।३)

४—यज्ञको ब्राह्मणोंका शस्त्र कहा है (७।१९)

५—ब्रह्म बनकर ही यज्ञकी उपासना करनी चाहिये (३४।१)

तैत्तिरीयब्राह्मण

१—यज्ञ ही भुवन है (३।३।७।५)

२—यज्ञ करना तप है (१०।८)

गोपथब्राह्मण

१—यज्ञ ही सूर्य है (पू० १।३३)

२—विधिहीन यज्ञोंसे संसारका कल्याण नहीं होता है।

शाङ्खायनब्राह्मण

यज्ञ ही समस्त भुवनोंमें श्रेष्ठ है (२५।११)

—:०:—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

उपनिषदोंमें यज्ञसम्बन्धी आवश्यक बातें

१—पुरुष ही यज्ञ है (छान्दोग्योपनिषद् ३।१६)

२—आकाशमें और पृथिवीमें प्रतिदिन और प्रतिक्षण यज्ञ होते रहते हैं (छान्दोग्योपनिषद्)

३—यज्ञ ही देवता है (नारायणोपनिषद् ७८)

४—यज्ञसे शत्रु भी मित्र वन जाते हैं। यज्ञमें सब प्रकारके गुण हैं (नारायणोपनिषद् ७९).

५—यज्ञके द्वारा जो जिस वस्तुकी इच्छा करता है, वह उसे वही वस्तु देता है (कठोपनिषद् १।२।१६)

६ यज्ञ करनेसे यजमानको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है (मुण्डकोपनिषद् २।६)

७—जो लोग यज्ञ करना, वापी, कूप, तालाव आदिका निर्माण कराना और बगीचा लगवाना आदि इष्टापूर्त्तरूप कर्मका अवलम्बन करते हैं, वे चन्द्रलोकको प्राप्त करते हैं (प्रश्नोपनिषद् १।९)

८—यज्ञको देवताओं, पितरों और ऋषियोंका जीवन कहा है (प्रश्नोपनिषद् २।१।८)

९—यज्ञसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है (सरस्वत्युपनिषद्)

१०—यज्ञमें ही सरस्वती प्रसन्न होती है (सरस्वत्युपनिषद्)

११—यज्ञिय कर्मको छोड़कर समस्त कर्म मानवको बन्धनमें डालनेवाले हैं (गीतोपनिषद् ३।९)

१२—ब्रह्माजीने यज्ञके साथ ही मनुष्यकी रचना की है (गीतोपनिषद् ३।१०)

१३—यज्ञसे ही वर्षा होती है (गीतोपनिषद् ३।१४)

१४—सर्वव्यापी परब्रह्म परमात्मा सर्वदा यज्ञमें ही प्रतिष्ठित रहते हैं (गीतोपनिषद् ३।१५)

१५—यज्ञ ही सृष्टिचक्रका सञ्चालन करता है (गीतोपनिषद् ३।१६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१६—यज्ञोंके परिणामस्वरूप ज्ञानामृतको भोगनेवाले श्रेष्ठ जन सनातन परमात्माको प्राप्त होते हैं। यज्ञ न करनेवाले पुरुष इहलोक (मृत्युलोक) को ही प्राप्त नहीं कर सकते, परलोक (स्वर्गलोग) की तो बात ही क्या है (गीतोपनिषद् ४।३१)

१७—समस्त यज्ञोंमें ज्ञानरूप यज्ञ श्रेष्ठ है (गीतोपनिषद् ४।३३)

१८—देवयज्ञ करनेवाले देवताओंको प्राप्त होते हैं (गीतोपनिषद् ७।२३)

१९—यज्ञको दैवी-सम्पत्ति कहा गया है (गीतोपनिषद् १६।१)

२०—यज्ञ कभी भी त्याग करनेके योग्य नहीं है (गीतोपनिषद् १८।३)

२१—यज्ञ बुद्धिमान मनुष्योंको पवित्र करनेवाला है (गीतोपनिषद् १८।५)

—०—

पुराणोंमें यज्ञसम्बन्धी आवश्यक बात

१—समस्त यज्ञ वासुदेवपरक हैं (भागवत १।३।२८)

२—यज्ञादिमें वेदज्ञ ब्राह्मणोंसे ही हवन कराना चाहिये। वेद-शून्य ब्राह्मणको होतृत्वका अधिकार नहीं है (भागवत १।७।५)

३—समस्त यज्ञ नारायणपरक हैं (भागवत २।५।१५)

४—यज्ञ-शेषको अमृत कहा है (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १५।३१२)

५—बुद्धिमान् पुरुषोंको यज्ञकी सिद्धिके लिये १०० दुग्ध देनेवाली गौएँ दान करनी चाहियें (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ३४।२३)

६—यजमान यज्ञान्तमें अपना सर्वस्व दान कर दे, यह स्वायम्भुव मनुका कथन है (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ३४।२६)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७—यज्ञमें समस्त प्रकारके शुभ-लक्षणोंसे सम्पन्न, मन्त्रोंके ज्ञाता, जितेन्द्रिय, कुलीन, शीलवान् एवं श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको ही नियुक्त करना चाहिये (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

८—यज्ञमें सभी ब्राह्मण वेदोंके पारगामी विद्वान् होने चाहियें (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

९—यज्ञमें आठ द्वारपाल तथा आठ जप करनेवाले ब्राह्मण होनें चाहियें (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

१०—यज्ञमें प्रत्येक कुण्डके पास कलश, यज्ञसामग्री, निर्मल आसन और दिव्य विस्तृत ताम्रपात्र प्रस्तुत रहने चाहियें (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

११—यज्ञमें गाँव, दास, दासी, भेड़ तथा बकरियाँ देनी चाहियें (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

१२—अवभृथस्नानके बाद यज्ञिय ब्राह्मणोंको षड्रस भोजन कराना चाहिये (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

१३—विष्णु सर्वक्रतुमय हैं (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ७१।११३)

१४—यज्ञार्थ शूद्रकी भिक्षा ग्रहण करनेसे यज्ञ नष्ट हो जाता है (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड १२५।२२)

१५—विष्णु यज्ञोंके द्वारा आराध्य हैं (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड (२०२।८)

१६—यज्ञ ही साक्षात् यज्ञपति हैं (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड २२४।१७)

१७—सुख-प्राप्तिकी इच्छा करनेवाले मनुष्यको प्रतिदिन यज्ञ (हवन) करना चाहिये यज्ञ करनेसे यज्ञ करनेवाले का उपकार होता है (पद्मपुराण, भूमिखण्ड १५२)

१८—यज्ञसिद्धिके लिये ही ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदका निर्माण किया गया है (ब्रह्मपुराण १।४९)

१९—समस्त यज्ञोंका प्रभु ईश्वर है (ब्रह्मपुराण ३४।४०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२०—समस्त यज्ञ नारायणपरक हैं (ब्रह्मपुराण ६०।२६)

२१—यज्ञोंके अधीश्वर भगवान् पुरुषोत्तम (विष्णु) का यज्ञ जब-जब नहीं होता, तब-तब कलियुगका बल बढ़ रहा है, यह समझना चाहिये (ब्रह्मपुराण २२९।४७)

२२—यज्ञादि कर्म वस्त्रके विना पूर्ण नहीं हो सकते (ब्रह्म-पुराण २२०।१३९)

२३—तीनों लोकोंमें यज्ञके सदृश और कोई महत्त्वपूर्ण वस्तु नहीं है (महाभारत, शान्तिपर्व ६१।५३)

२४—यज्ञ—शेषको अमृत कहा है (महाभारत, शान्तिपर्व २४२।३०)

२५—यज्ञसे सन्तति उत्पन्न होती है महाभारत, शान्तिपर्व २६३।१०)

२६—यज्ञोंमें देवता प्रतिष्ठित रहते हैं (महाभारत, वनपर्व (१५०।२८)

२७—वेदाचारविधानसे होनेवाले यज्ञोंमें ही देवगण पधारते है (महाभारत, वनपर्व १५०।२९)

२८—यज्ञ ही धर्ममन्त्रात्मक है (वायुपुराण ५७।११७)

२९—यज्ञसे देवताओंकी प्राप्ति होती है (वायुपुराण ५७।११७)

३०—यज्ञोंके नाशसे देवताओंका नाश होता है, जिससे सब कुछ नष्ट हो जाता है (वायुपुराण ६०।६)

३१—यज्ञ ही समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाला है (वायु-पुराण ६०।७)

३२—शान्तिके अभिलाषुकोंको रात्रिमें यज्ञमण्डपमें निवास नहीं करना चाहिये (कालिकापुराण ८८।४३)

३३—यज्ञ ही भगवान् विष्णु है (विष्णुधर्मोत्तरपुराण १६२।२)

३४—महायज्ञ (पञ्चमहायज्ञ) विहीन व्यक्ति ब्राह्मणोंकी पङ्क्तिमें बैठनेके योग्य नहीं है (कूर्मपुराण, उत्तरार्ध २१।४२)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३५——समस्त यज्ञ नारायणपरक हैं (मत्स्यपुराण २४७।३६)

३६——विश्वकल्याणार्थ होनेवाले यज्ञोंमें ब्राह्मणकी संख्या और समयका नियम नहीं है (भविष्यपुराण)

३७—वाणिज्य-वृत्तिसे जीविका चलानेवाले ब्राह्मण यज्ञमें त्याज्य हैं (स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड)

३८——यज्ञ और श्राद्धमें जो ब्राह्मणको निमन्त्रण देकर उसका त्याग करता है, वह पापात्मा शूकर योनिको प्राप्त होता है (स्कन्द-पुराण, प्रभासखण्ड)

३९—यज्ञमें जो व्यक्ति मौन रहता है, वह स्वर्गमें जाता है (स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड)

४०——यज्ञादिमें उत्तम सावन मास माना जाता है, यह ज्यौतिष-शास्त्रका मत है (स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड)

४१——यज्ञादिमें पूर्णाहुति खड़े होकर ही करना चाहिये (वह्निपुराण)

४२—यज्ञमण्डपमें देवपीठपर आभूषण चढ़ानेसे स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है (नन्दिपुराण)

—:०:—

यज्ञसम्बन्धी कुछ महत्त्वपूर्ण बातें

१——जिस भूमिमें देवप्रीत्यर्थ यज्ञ किया जाता है, उसे 'देवयजन' कहते हैं ।

२——यज्ञ स्वर्ग जानेके लिये सुखद नौका है । अतः यज्ञरूपी नौका पर सवार होकर संसार-सागरसे तरना चाहिये ।

३——यज्ञ एक ऐसा श्रेष्ठ और पवित्र कर्म है, जिसके द्वारा भगवान्‌की प्राप्ति हो सकती है ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४—यज्ञके द्वारा भगवान् का सान्निध्य प्राप्त होता है और यज्ञातिरिक्त कर्म भगवान्से दूर हटानेवाले हैं।

५—निष्काम-भावसे किया हुआ यज्ञ ही सफल होता है और स्वार्थ-भावसे किया हुआ यज्ञ असफल होता है।

६—यज्ञमें ही सच्चा सुख और आनन्द है। यज्ञको छोड़कर समस्त कर्म बन्धनमें डालनेवाले हैं।

७—यज्ञमें दैवी-गुणोंका खजाना भरा हुआ है। अतः दैवी-गुणोंसे परिपूर्ण यज्ञके द्वारा मनुष्यकी समस्त कामनाएँ परिपूर्ण होती हैं।

८—जो व्यक्ति निःस्वार्थ-भावसे यज्ञमें तन, मन, धनसे सहयोग देते हैं, वे सर्वदा सब प्रकारके ऐश्वर्योंसे परिपूर्ण रहते हैं।

९—यज्ञके प्रति श्रद्धा-विश्वास रखनेवाले पुण्यात्मा मनुष्यों पर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि अपना कुप्रभाव नहीं डाल सकते।

१०—यज्ञको दैवी-सम्पत्ति कहा है। जो मनुष्य यज्ञरूपी दैवी-सम्पत्तिको अपनाता है, वह 'देवता' बन जाता है।

११—जो मनुष्य यज्ञको नहीं मानते अथवा यज्ञ नहीं करते, वे दुर्भाग्यरूपी आक्रमणसे घिरे रहते हैं।

१२—जिस प्रकार माता-पिता अपने छोटे-छोटे बालकोंके खेल-कूद देखकर तथा उनकी अमृतमयी तोतली वाणी सुनकर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं, उसी प्रकार देवगण अपने यज्ञप्रेमी यजमानोंके किये हुए यज्ञकर्मको देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं और उन्हें आशीर्वाद देते हैं।

१३—जिस प्रकार मनुष्योंके द्वारा देवताओंके निमित यज्ञ होता है, उसी प्रकार प्रकृतिके द्वारा भी देवताओंके निमित्त यज्ञ होता रहता है।

१४—यज्ञके द्वारा जो धूम्र निकलता है, वह सूर्यकी किरण और वायुके साथ प्राप्त होकर आकाशमण्डलमें जाकर वर्षाका रूप धारण करता है, जिससे समस्त संसारका कल्याण होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१५—यज्ञमें मन्त्रोंके द्वारा देवताओंके निमित्त जो आहुति डाली जाती है, उससे देवता बलिष्ठ और सन्तुष्ट होते हैं।

१६—यज्ञके ब्राह्मणोंका दक्षिणासहित पूजन करनेसे तथा उनके चरणोदकका पान करनेसे समस्त देवताओंके दर्शन करनेका पुण्य और धन-धान्य एवं पुत्र-पौत्रादिकी प्राप्ति होती है।

१७—यज्ञमण्डपकी १०८ बार परिक्रमा करनेसे समस्त तीर्थोंकी यात्रा करनेका फल प्राप्त होता है और मनोभिलषित वस्तुओंकी प्राप्ति होती है।

१८—यज्ञमण्डपकी १०८ बार परिक्रमा करनेवाले प्रत्येक व्यक्तिको १०८ सुपारी अथवा १०८ बादाम अथवा १०८ रुपया अथवा १०८ अठन्नी अथवा १०८ चवन्नी अथवा १०८ इकन्नी अथवा १०८ पैसासे परिक्रमा करनी चाहिये।

१९—यज्ञमण्डपकी १०८ बार परिक्रमा करनेवाली सौभाग्यवती स्त्रियों (नारियों) को अपने-अपने सौभाग्यवृद्धि एवं पुत्र तथा पति-की आयुवृद्धिके लिये यज्ञ भगवान्‌का पूजन कर सौभाग्य-पिटारी चढ़ाना चाहिये। सौभाग्य-पिटारीमें सिन्दूर, रोली, शीशा, कंघा, तेल, कज्जल, सुरमा, मेंहदी, साबुन, सुवर्णकी नथ, चाँदीके बिछुवे, जनानी धोती और कब्जा आदि होते हैं।

२०—जो मनुष्य यज्ञ भगवान्‌की आरतीका दर्शन करता है और अपने दोनों हाथोंसे आरती लेता है, वह अपनी करोड़ों पीढ़ियोंका उद्धार करता है और अन्तमें भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त करता है।

२१—यज्ञमें प्रातःकाल देवपूजनके अन्तमें और सायङ्काल हवनके अन्तमें यज्ञ भगवान्‌की प्रतिदिन आरती करनी चाहिये। आरती करनेसे देवपूजनादिमें जो त्रुटि रह जाती है, उसकी पूर्ति हो जाती है।

२२—देवताओंकी परिक्रमाके सम्बन्धमें 'बह्वृचपरिशिष्ट' का

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मत है कि—गणेशकी एक प्रदक्षिणा, सूर्यकी दो प्रदक्षिणा, ईश्वर (भगवान्) की तीन प्रदक्षिणा, विष्णुकी चार प्रदक्षिणा और शिवकी आधी प्रदक्षिणा करनी चाहिये।

२३—यज्ञके यजमान और यज्ञके ब्राह्मणोंको यज्ञमण्डपके पश्चिम द्वारसे जाना चाहिये।

२४—यज्ञमण्डपमें हवनसामग्रीको यज्ञमण्डपके पूर्व द्वारसे ले जाना चाहिये।

२५—यज्ञमण्डपमें दान करनेकी सामग्रीको यज्ञमण्डपके दक्षिण द्वारसे ले जाना चाहिये।

२६—यज्ञमण्डपमें प्रतिष्ठाकी सामग्रीको यज्ञमण्डपके उत्तर द्वारसे ले जाना चाहिये।

२७—यज्ञमें अरणिमन्थनद्वारा अग्नि प्रकट करनेकी शास्त्रीय विधि है। यज्ञमें जिस काष्ठके टुकड़ेपर अग्नि मथी जाती है, उसको 'अरणि' कहते हैं। उसमें जो अरणि पृथ्वीमें रखी जाती है, उसको 'अधरारणि' कहते हैं। यह अधरारणि स्त्री-स्थानीय है, जिसका नाम 'उर्वशी' है। अधरारणिके ऊपर रखनेवाली अरणिको 'उत्तरारणि' कहते हैं। यह उत्तरारणि पुरुष-स्थानीय है, जिसका नाम 'पुरूरवा' है। इस प्रकार अधरारणि और उत्तरारणि-रूप स्त्री और पुरुषके संयोगके मन्थनसे अग्निकी जो उत्पत्ति की जाती है, उसे 'अग्निचयन' कहते हैं (शुक्लयजुर्वेद ५।२)।

२८—यज्ञमें वेद-मन्त्रोंके द्वारा अरणिमन्थनसे जो अग्नि प्रकट की जाती है, उसे 'ब्राह्म' अग्नि कहते हैं। यज्ञमें 'ब्राह्म' अग्निका विशेष महत्त्व कहा गया है।

२९—यज्ञमें हवनके प्रारम्भ होनेके बाद यदि अग्नि नष्ट हो जाय, तो पुनः अरणिमन्थनद्वारा अग्निका प्राकट्य करना चाहिये।

३०—सात्त्विक हवनमें 'स्वाहा' शब्दका प्रयोग होता है और

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आभिचारिक हवनमें एवं किसीके नष्ट-भ्रष्ट अथवा छिन्न-भिन्न करनेमें 'फट्' शब्दका प्रयोग होता है।

३१—यज्ञमें आचार्यकी आज्ञाके विना देवपूजन नहीं करना चाहिये।

३२—यज्ञ-मण्डपमें भोजन करना निषिद्ध है। यज्ञमण्डपमें भोजन करनेसे एक दिन व्रत (उपवास) करना चाहिये।

३३—हवनार्थ संस्कृत आज्य (घृत) और पय (दुग्ध) आदिका हवन किये बिना उनके पान करनेमें उपवास करना चाहिये।

३४—स्मार्त होम और श्रौत होमके १ दिनके लोपमें १००८ गायत्रीजप करना चाहिये।

३५—पञ्चमहायज्ञमें से किसी एक यज्ञका भी लोप होनेसे एक दिनका उपवास कहा गया है। इसी प्रकार सप्तपाकसंस्थाके लोपमें भी उपवासका विधान है। पञ्चमहायज्ञ तथा सप्तपाकसंस्थाके सर्व-लोपमें कृच्छ्रार्ध अथवा चान्द्रायण प्रायश्चित्त कहा गया है। आतुर अवस्थावालेके लिये उक्त प्रायश्चित्त नहीं कहा गया है।

३६—यज्ञके अभावसे कलियुगके बलकी वृद्धि होती है।

३७—यज्ञप्रेमियोंको यज्ञविरोधी नास्तिक मनुष्योंसे संसर्ग और व्यवहार नहीं करना चाहिये।

३८—जो यजमान यज्ञके ब्राह्मणोंको यथेष्ट दक्षिणा देता है, उससे यज्ञ भगवान् प्रसन्न होकर उसको ऋद्धि-सिद्धि प्रदान करते हैं।

३९—यज्ञके हवनके लिये वृक्षादि काटनेसे दोष नहीं होता है।

४०—यज्ञमें प्रतिदिन और खासकर पूर्णाहुतिके शुभावसर पर यज्ञाचार्यद्वारा यज्ञका प्रसाद और शुभाशीर्वाद प्राप्त करना विशेष महत्त्व रखता है।

४१—यज्ञान्तमें यज्ञाचार्यका यथाशक्ति दक्षिणासहित सबको पूजन करना चाहिये। यज्ञमें आचार्य 'प्रधान' होता है। आचार्यको

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्रह्मलोकका मालिक कहा गया है—**'आचार्यो ब्रह्मलोकेशः'** (पद्म-पुराण, सृष्टिखण्ड १५।३१६)।

४२—यज्ञमें मनुष्यसे ज्ञाताज्ञातरूपमें जो भूल और अपराध हो जाते हैं, उनकी निवृत्ति यज्ञ भगवान्‌के स्मरण और नमस्कार करनेसे हो जाती है।

४३—यज्ञमण्डपमें चढ़ाया हुआ समस्त समान यज्ञके प्रधानाचार्य-का होता है।

४४—यज्ञमण्डपमें यज्ञके निमित्त आया हुआ समस्त सामान प्रधानाचार्यका होता है।

४५—यज्ञमण्डपके चारों द्वारोंके ऊपर सर्वसाधारण जनताके द्वारा चढ़ाया हुआ द्रव्य और यज्ञमण्डपकी परिक्रमाके निमित्त चढ़ाया हुआ द्रव्य तथा यज्ञकी आरतीमें चढ़ाया हुआ समस्त द्रव्य यज्ञके प्रधानाचार्यका होता है।

४६—यज्ञमें ब्रह्मा केवल पूर्णपात्र लेनेका अधिकारी है। आज्य-स्थाली, चरुस्थाली, अभिषेकपात्र तथा यज्ञपात्रादि सभी सामान यज्ञके प्रधानाचार्यका होता है।

४७—यज्ञमें आचार्य, ब्रह्मा आदि समस्त ऋत्विज गृहस्थ ब्राह्मण ही होने चाहियें।

४८—यज्ञ करानेवाला आचार्य गृहस्थ ब्राह्मण ही होना चाहिये।

४९—साधु, महात्मा और संन्यासी दर्शकरूपमें यज्ञमें भाग ले सकते हैं, ऋत्विक्‌रूपमें नहीं।

५०—साधु, महात्मा और संन्यासी यज्ञके प्रेरक या संयोजक हो हो सकते हैं, यजमान नहीं हो सकते।

५१—आजकल कुछ यज्ञोंमें देखा जाता है कि यज्ञावसर पर साधु, संन्यासी, महात्मा यज्ञमण्डपमें ब्रह्मचारियों और गृहस्थोंको शिष्य बनाते हैं, जो कि सर्वथा अनुचित और शास्त्रविरुद्ध है। साधु, संन्यासी, महात्मा, ब्रह्मचारियों और गृहस्थोंको शिष्य नहीं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

बना सकते, किन्तु वे अपने सम्प्रदायके साधु-महात्माओंको ही शिष्य बना सकते हैं। स्त्रियोंको तो कभी भी शिष्या (चेली) नहीं बनाना चाहिये।

५२—यज्ञके प्रेरक अथवा संयोजक साधु, महात्मा, संन्यासीको केवल यज्ञकी सुव्यवस्था करनेका ही अधिकार है, उन्हें यज्ञके निमित्त आये हुए द्रव्य आदिको अपने पास रखनेका अधिकार नहीं है। यज्ञके निमित्त चन्देके रूपमें आये हुए द्रव्य और अन्य प्रकारकी सामग्रियोंको रखनेका अधिकार यज्ञसमितिको है, दूसरेको नहीं।

यज्ञसे लाभ

१—यज्ञसे सद्बुद्धि, सद्विचार, सद्धर्म और सत्कर्मकी ओर प्रवृत्ति होती है।

२—यज्ञसे स्वधर्म और स्वकर्तव्यका परिज्ञान होता है!

३—यज्ञसे मनुष्यकी आत्मशक्ति, ज्ञानशक्ति और मन्त्रशक्ति जागृत होती है।

४—यज्ञसे मनुष्यकी आत्माग्नि प्रदीप्त होती है। आत्माग्निके प्रदीप्त होनेसे परमात्मामें दृढ़ भक्ति और अनुराग होता है।

५—यज्ञसे मनुष्य माया-मोहके बन्धनसे मुक्त होकर भगवत्परायण हो जाता है।

६—यज्ञसे मनुष्य बड़े-बड़े दुःखोंसे उस प्रकार पार हो जाता है, जिस प्रकार मनुष्य नौकाद्वारा नदीको पार कर जाता है।

७—यज्ञसे मनुष्यकी परमात्मामें और आत्मतत्त्वचिन्तनमें प्रवृत्ति होती है।

८—यज्ञसे मनुष्य अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९—यज्ञसे मनुष्य मोक्षमार्गका अधिकारी बनता है।

१०—यज्ञसे मनुष्यका जीवन मङ्गलमय बनता है।

११—यज्ञसे मनुष्यमें दैवी-शक्ति अथवा दैवी-गुणोंका प्रादुर्भाव होता है।

१२—यज्ञसे मनुष्यके अहङ्कारादि तामसिक पदार्थोंका दूरीकरण होता है।

१३—यज्ञसे मनुष्यके अन्तःकरणकी अपवित्रता, मलविक्षेप और कुसंस्कारोंका निवारण होता है।

१४—यज्ञसे मनुष्यके संशयोंकी निवृत्ति होकर आत्मामें शान्तिकी स्थापना होती है।

१५—यज्ञसे भगवान्‌की सत्ता और सर्वव्यापकतामें विश्वास होकर मनुष्य भगवद्भजन और भगवत्स्मरणमें प्रवृत्त होता है।

१६—यज्ञसे देवता प्रसन्न होते हैं। देवताओंकी प्रसन्नतासे मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है।

१७—यज्ञसे भगवान्‌का सान्निध्य प्राप्त होता है।

१८—यज्ञसे मनुष्य देवता बनकर जगत्‌के कल्याण करनेकी क्षमता प्राप्त करता है।

१९—यज्ञसे स्वर्गादि लोकोंकी प्राप्ति होती है।

२०—यज्ञसे पितर तृप्त और अशुभ योनिसे मुक्त हो जाते हैं।

२१—यज्ञसे प्राणिमात्रका ही नहीं, समस्त चराचर जगत्‌का कल्याण होता है।

२२—यज्ञसे देश और समाजका संरक्षण और संचालन होता है।

२३—यज्ञसे धर्म, कर्म, संस्कृति और सभ्यताका यथार्थ परिज्ञान होता है।

२४—यज्ञसे मानव-जातिमें फैले हुए साम्यवाद, समाजवाद, अधिनायकवाद आदि विभिन्न मतवादोंकी समस्याओंका समाधान होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२५—यज्ञसे माता, पिता, गुरु आदिके वास्तविक महत्त्व और रहस्यका परिज्ञान होता है।

२६—यज्ञसे गोमाताके महत्त्वकी पुष्टि और गोरक्षा होती है।

२७—यज्ञसे ब्राह्मणोंके स्वरूप और महत्त्वका असली परिचय प्राप्त होता है।

२८—यज्ञसे वैदिक-धर्मका प्रचार, रक्षण और पोषण होता है।

२९—यज्ञसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन पुरुषार्थ-चतुष्टयकी प्राप्ति होती है।

३०—यज्ञसे आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—इन तापत्रयकी निवृत्ति होती है।

३१—यज्ञसे ऐहलौकिक और परलौकिक अभ्युदय एवं निःश्रेयसकी सिद्धि सरलतासे प्राप्त होती है।

३२—यज्ञसे ऐहलौकिक और पारलौकिक सभी प्रकारकी एषणाओंकी पूर्ति होती है।

३३—यज्ञसे आश्रमचतुष्टय और वर्णचतुष्टयके धर्मपालनकी शिक्षा मिलती है।

३४—यज्ञसे मानवताका संरक्षण, धर्मका संरक्षण और स्वकर्तव्यका संरक्षण होता है।

३५—यज्ञसे मनुष्यकी भूलों, अपराधों और पापोंका प्रायश्चित होता है।

३६—यज्ञसे संक्रामक रोग नष्ट होते हैं।

३७—यज्ञसे शारीरिक समस्त दोषोंका नाश होता है।

३८—यज्ञसे सर्वविध अमङ्गलोंका नाश होता है।

३९—यज्ञसे बड़े-बड़े पापोंकी निवृत्ति होती है।

४०—यज्ञसे पैशाचिक कष्टोंकी निवृत्ति होती है।

४१—यज्ञसे शत्रु भी मित्र बन जाते हैं।

४२—यज्ञसे असाध्य कार्य भी साध्य हो जाते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४३——यज्ञसे मनुष्यका कभी अघ:पतन नहीं होता है।

४४——यज्ञसे मनुष्यकी सर्वप्रकारकी विघ्न-बाधाएँ टल जाती हैं।

४५——यज्ञसे मनुष्यकी सर्वदा सर्वत्र विजय होती है।

४६——यज्ञसे सत्य और सदाचारपालनकी शिक्षा प्राप्त होती है।

४७——यज्ञसे परमात्माका साक्षात्कार होता है।

४८——यज्ञसे मनुष्य 'महापुरुष' बन जाता है।

४९——यज्ञसे मनुष्य ब्रह्म-निर्वाण और परम पद (मुक्ति) को प्राप्त करता है।

५०——यज्ञसे मनुष्य सर्वदा स्वधर्म पर स्थित रहता है।

५१——यज्ञसे मनुष्य आरोग्यता, विद्या, कीर्ति, पराक्रम, धन-धान्य और पुत्र-पौत्रादि अनेक प्रकारके ऐश्वर्योंको प्राप्त करता है।

५२——यज्ञसे यज्ञस्थल, यज्ञमण्डप, यज्ञवेदी, यज्ञकुण्ड, यज्ञसामग्री एवं अन्यान्य यज्ञाङ्गभूत उपकरण तथा यज्ञके ऋत्विज, यजमान और यज्ञदर्शक—ये सभी देवमय बन जाते हैं।

५३——यज्ञसे धर्मकी जय, अधर्मका नाश, प्राणियोंमें सद्भावना और विश्वका कल्याण होता है।

कामनापरक यज्ञोंका फल

(१) तेज, इन्द्रिय, पशु और लक्ष्मीकी प्राप्तिके लिये तथा ब्रह्महत्या को दूर करनेके लिये 'अश्वमेध यज्ञ' करना चाहिये। (शतपथब्राह्मण १३।२।६।३)

(२) अकाल मृत्युके निवारणार्थ 'राजसूय यज्ञ' करना चाहिये।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(३) ग्रहोंकी प्रतिकूलता—निवारणार्थ गायत्रीयज्ञ (सावित्रीयज्ञ) करना चाहिये। (महाभारत, वनपर्व २००।८५)

(४) लक्ष्मी तथा शान्तिकी प्राप्तिके लिये 'नवग्रह यज्ञ' करना करना चाहिये। (अग्निपुराण १४१।२)

(५) चक्षुर्दृष्टि, दीर्घायु और शारीरिक पुष्टिकी प्राप्तिके लिये 'नवग्रह यज्ञ' करना चाहिये। (अग्निपुराण १४१।२)

(६) ग्रहात्मक लक्षहोमसे मनुष्यकी समस्त कामनाएँ परिपूर्ण होती हैं और वह आठ-सौ कल्प तक वसु, आदित्य, मरुद्गण आदिके द्वारा शिवलोकमें पूजित होता है। पश्चात् वह 'मोक्ष' पदको प्राप्त करता है।

(७) स्वर्गकी कामनाके लिये 'ज्योतिष्टोम यज्ञ' करना चाहिये।

(८) वर्षाके लिये 'कारीरी इष्टि' नामक यज्ञ करना चाहिये।

(९) अन्नोत्पादनके लिये 'सीतायज्ञ' करना चाहिये। यह यज्ञ हल जोतनेके पूर्व किया जाता है और इस यज्ञको किसानवर्ग करते हैं।

(१०) यज्ञ करनेसे मनुष्य ग्रामाधिपति होता है। (न्याय-दर्शन २।१।६८)

यज्ञ करनेसे नेत्रकी ज्योति बढ़ती है। (महाभाष्य १।१।६३)

(११) पुत्रकामनार्थ 'पुत्रेष्टियज्ञ' करना चाहिये। (न्यायदर्शन भाष्य २।१।५७)

(१२) महाराज दशरथके पुत्र नहीं था। उन्होंने पुत्रकी कामना-से 'पुत्रेष्टि' नामक यज्ञ किया था, जिससे उन्हें भगवान् राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न—ये चार पुत्र हुए।

(१३) पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें लिखा है कि पुत्रेष्टि-यज्ञमें अग्निकुण्डसे साक्षात् भगवान् विष्णु प्रकट हुए। उनसे राजा दशरथने याचना की कि 'भगवन्! आप मेरे पुत्रभावको प्राप्त हों।'

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इस यज्ञके फलस्वरूप भगवान् विष्णु अपने अंशोके सहित रामके रूपमें लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्नके साथ दशरथके यहाँ प्रकट हुए।

(१४) भागवत (९।२०।३५) में 'मरुत्स्तोम' नामक यज्ञ पुत्र-प्राप्तिके लिये कहा गया है। दुष्यन्तके पुत्र चक्रवर्ती राजा भरत-ने पुत्रप्राप्त्यर्थ 'मरुत्स्तोम' यज्ञ किया था, जिससे मरुद्गणोंने प्रसन्न होकर भरतको 'भरद्वाज' नामक पुत्र दिया।

(१५) भागवत (९।१।१३) में 'मित्रावरुण' नामक यज्ञका विधान है, जिसको करनेसे पुत्रकी प्राप्ति होती है।

(१६) मनुने पुत्र-प्राप्तिके लिये भगवान् वासुदेवका यज्ञ किया था, जिससे उन्हें १० पुत्र हुए (भागवत ९।२)। अतः पुत्र-प्राप्तिके लिये 'वासुदेव-यज्ञ' करना चाहिये।

(१७) वैवस्वत मनु सन्तानहीन थे। उन्होंने सन्तान-प्राप्तिके लिये महर्षि वशिष्ठके द्वारा 'मित्रावरुण-यज्ञ' कराया, जिससे उन्हें पुत्रकी प्राप्ति हुई।

(१८) त्रिशंकुके पुत्र राजा सत्य हरिश्चन्द्र पुत्रहीन थे। वे नारद मुनिकी आज्ञानुसार 'वरुणदेव' की शरणमें गये और पुत्र-प्राप्तिके लिये प्रार्थना की। वरुणदेवकी कृपासे उन्हें 'रोहित' नामक पुत्रकी प्राप्ति हुई।

(१९) चक्रवर्ती राजा दिलीप सन्तति-विहीन थे। उन्हें महर्षि वशिष्ठने कामधेनुकी पुत्री 'नन्दिनी' नामक गौकी सेवा करनेका उपदेश दिया। नन्दिनी गौकी सेवासे दिलीपको 'रघु' नामक पुत्रकी प्राप्ति हुई।

(२०) अथर्ववेदमें पुत्रोत्पादनार्थ कुछ मन्त्र लिखे हैं, जिन मन्त्रोंके द्वारा सविधि हवन (यज्ञ) करनेसे निश्चित ही पुत्रकी प्राप्ति होती है।

 CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(२१) विष्णुयज्ञ करनेसे पुत्रकी प्राप्ति होती है॥ ।

—:०:—

शुक्ल यजुर्वेदमें यज्ञसम्बन्धी सूक्तियाँ

१—ते यज्ञपतिः प्रथताम्। (१।२२)

तुम्हारा यज्ञपति (यजमान) पुत्र-पौत्र और पशु आदिसे परिपूर्ण हो।

२—पाहि यज्ञम्। (२।६)

हे व्यापक यज्ञपुरुष विष्णुदेव ! तुम हमारे यज्ञकी रक्षा करो।

३—स्विष्टे मे सन्तिष्ठस्व। (२।१६)

हे यज्ञपुरुष ! तुम मेरे श्रेष्ठ यज्ञमें उपस्थित हो।

४—त्वं यज्ञेष्वीड्यः। (४।१६)

हे अग्निदेव ! तुम यज्ञोंमें स्तुतियोग्य (पूजनीय) हो।

५—ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात्। (५।२८)

यह यजमान इस यज्ञस्थानमें सन्ततियों और पशुओंके सहित सुखी हो।

६—सं यज्ञपतिराशिषा। (६।१०)

यज्ञका यजमान आशीर्वादसे श्रेष्ठ सङ्गति प्राप्त करे।

॥आश्वलायन श्रौतसूत्र और विद्यार्णव तन्त्रमें 'पुत्रेष्टि-यज्ञ' का विधान है, जिसको सविधि करनेसे पुत्रकी प्राप्ति होती है।

वाल्मीकि रामायण (बालकाण्ड १५।२) में 'पुत्रेष्टि-यज्ञ' का वर्णन किया गया है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७—ऊर्ध्वमिममद्ध्वरं दिवि देवेषु होत्रा यच्छ । (६।२५)

हे देव! तुम इस यज्ञको उन्नत करके यज्ञके होताओंको देवलोकमें देवताओंके मध्यमें ले जाकर देवत्व प्रदान करो।

८—देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् । (७।१६)

हे देवताओ! तुम इस यज्ञसे प्रीति करो।

९—पाहि यज्ञम्, पाहि यज्ञपतिम् । (७।२०)

हे देव! तुम यज्ञकी रक्षा करो और यज्ञपति (यजमान) की रक्षा करो।

१०—जिन्व यज्ञं जिन्व यज्ञपतिम् । (८।७)

हे देव! तुम यज्ञ और यजमानको तृप्त करो।

११—यं कं च लोकमगन् यज्ञस्ततो मे भद्रमभूत् । (८।६०)

मेरा यज्ञ जिस किसी भी लोकमें गया हो, मेरे उस यज्ञसे मेरा कल्याण हो।

१२—प्रसुव यज्ञम्, प्रसुव यज्ञपतिम् । (११।७)

हे सवितृदेव! तुम यज्ञको प्रेरणा करो और यज्ञ-यजमानको सुख-सौभाग्यके लिये प्रेरणा करो।

१३—आयुर्यज्ञेन कल्पताम् । (१८।२९)

यज्ञके द्वारा दीर्घायुकी प्राप्ति हो।

१४—यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् । (१८।२९)

यज्ञके द्वारा महायज्ञ प्राप्त हो।

१५—विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे । (१८।७६)

समस्त देवगण उत्तम लोकमें हमारे यज्ञकी रक्षा करें।

१६—यज्ञो देवेषु कल्पताम् । (१९।४५)

यज्ञ देवताओंको तृप्त करनेमें समर्थ हो।

१७—प्रतितिष्ठामि यज्ञे । (२०।१०)

मैं यज्ञमें प्रतिष्ठा प्राप्त करूँ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१८—यज्ञस्य समनक्तु देवान्। (२०।४४)
यज्ञके देवताओंको भोजन कराकर तृप्त करो।

१९—यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः। (२०।५४)
हे यज्ञके ऋत्विजो! तुम अनेक कल्याणोंके द्वारा हमारी सदैव रक्षा करो।

२०—यज्ञं वष्टु धियावसुः। (२०।८४)
यज्ञसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है।

२१—यज्ञो भुवनस्य नाभिः। (२३।६२)
यज्ञ ही सारे भुवनोंका केन्द्र-स्थान है।

२२—ऋतवस्ते यज्ञं वितन्वन्तु। (२६।१४)
हे अग्निदेव! समस्त ऋतुएँ तुम्हारे निमित्त किये गये हमारे यज्ञका विस्तार करें।

२३—संवत्सरस्ते यज्ञं दधातु नः। (२६।१४)
हे अग्निदेव! संवत्सरके अधिष्ठातृदेवता तुम्हारे निमित्त किये गये हमारे यज्ञको पुष्ट करें।

२४—देवानो यज्ञमृतुथा नयन्तु। (२६।१९)
देवगण हमारे किये हुए यज्ञको स्वीकार करें।

२५—इमं यज्ञमवतामध्वरं नः। (२७।१७)
हमारे इस कुटिलतादिदोषशून्य यज्ञकी रक्षा करो।

२६—यज्ञं नो देवीरमृतेषु धत्त। (२६।८)
भारती, सरस्वती और इडा नामकी तीनों देवियाँ हमारे यज्ञको देवताओंमें स्थापित करें।

२७—कृणु ह्यध्वरं नः। (२६।२६)
हे अग्ने! तुम हमारे यज्ञको देवताओंको प्राप्त कराओ।

२८—यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः। (३१।१६)
देवताओंने यज्ञके द्वारा यज्ञपुरुष भगवान्का यजन किया।

२९—यज्ञेषु विप्रराज्ये। (३२।८३)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञोंमें ब्राह्मण राजाकी तरह स्वतन्त्र होते हैं अर्थात् यज्ञोंमें ब्राह्मणोंका राज्य होता है।

३०--देवा यज्ञं नयन्तु नः। (३३।८६)

यजनशील देवगण हमारे यज्ञको प्राप्त करें।

३१--शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः। (३६।२)

समस्त भुवनों का अधिपति यज्ञ हमारे लिये सुखस्वरूप हो।

३२--ऊर्ध्वो ऽअध्वरं दिवि देवेषु धेहि। (३७।१९)

हे देव! सावधान होकर हमारे यज्ञको द्युलोकमें रहनेवाले देवताओंमें स्थापित करो।

—:०:—

❀ इति ❀

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २-२-६४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भूल सुधार

[यज्ञ-प्रवचनके पृष्ठ ८० और पङ्क्ति १२ (विना दीपेन) के बाद नीचे लिखित अंशको पढ़ना चाहिये]

अतः प्रत्येक गृहस्थको अपने-अपने घरमें अखण्ड दीपक जलानेकी व्यवस्था करनी चाहिये। जो अपने घरमें अखण्ड दीपक जलानेकी व्यवस्था करेगा उसका घर देवमन्दिरकी तरह पवित्र और महत्त्वशाली बन जायगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वैदिक पुस्तकालयके प्रकाशन

[वैदिक पुस्तकालयकी प्रकाशित पुस्तकों पर
मूधन्य विद्वानोंकी सम्मतियाँ]

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०३३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

महामहोपाध्याय पं० श्रीविद्याधर गौड स्मारक-ग्रन्थ

भारतप्रसिद्ध, महान् वेदज्ञ म० म० पण्डितप्रवर श्रीविद्याधरजी गौड़की पुण्य-स्मृति में 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' प्रकाशित किया गया है। इसमें तीन खण्ड हैं। प्रथम खण्डमें महामहोपाध्याय-जीका आदर्श जीवनचरित और उनके सम्बन्धमें धर्माचार्यों, नेताओं और विद्वानोंके सन्देश और श्रद्धाञ्जलियाँ हैं। द्वितीय खण्डमें महामहोपाध्यायजीके विविध विषयोंके सारगर्भित लेख हैं। तृतीय खण्डमें भारतके अग्रगण्य विद्वानोंके महत्त्वपूर्ण लेख हैं। यह स्मारक-ग्रन्थ प्रत्येक पुस्तकालय, विद्यालय और विद्वान्के घरमें रखनेके योग्य है। लगभग ६०० पृष्ठोंके विशाल ग्रन्थका लागतमात्र मूल्य १०) रुपया रखा गया है।

कुछ सम्मतियाँ—

१—राजस्थानके राज्यपाल श्रीमान् माननीय सम्पूर्णानन्दजी—

मैंने स्मारक-ग्रन्थको देखा। उसके लिए सामग्रीके सङ्कलन और सम्पादन पर अच्छा परिश्रम किया गया है। ग्रन्थ अपने ढंगका अच्छा है।

२—बंबईके भूतपूर्व राज्यपाल श्रीमान् माननीय श्रीप्रकाशजी—

'महामहोपाध्याय पण्डित विद्याधर गौड स्मारक-ग्रन्थ' को देखकर मुझे बहुत आनन्द और सन्तोष हुआ। एक बड़े विद्वान्का स्मारक तो है ही, साथ ही साथ उसमें विविध विषयों पर विशिष्ट विशेषज्ञोंके गवेषणापूर्ण और उपयोगी लेख प्रकाशित किये गये हैं।

मुझे पूरी आशा है कि इसका समुचित प्रचार होगा और जनसाधारण इस ग्रन्थके द्वारा लाभ उठावेगा तथा पण्डितजीकी स्मृति सदैव बनी रहेगी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३—वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयके भूतपूर्व उपकुलपति डा० श्रीमङ्गलदेवजी शास्त्री—

मैंने 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' को ध्यानसे देखा। बड़ा सन्तोष और प्रसन्नता हुई। म० म० पं० विद्याधरजी गौड़ वेदके धुरन्धर विद्वान् थे। उनकी कीर्ति देश-व्यापिनी थी। उनकी पवित्र स्मृतिमें प्रकाशित उक्त ग्रन्थ सर्वथा उनकी गुण-गरिमाके अनुरूप हुआ है। विशिष्ट विद्वानों द्वारा लिखित उपादेय लेखोंसे तथा म०म० जीके यशोमय जीवन-चरित्रसे सुभूषित यह ग्रन्थ विद्वानों और पुस्तकालयोंके लिए संग्रहणीय है। ग्रन्थके विद्वान् सम्पादकोंको मैं हृदयसे बधाई देता हूँ।

४—काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके प्राध्यापक डा० श्रीवासुदेव-शरणजी अग्रवाल—

महामहोपाध्याय पण्डित श्रीविद्याधरजी गौड भारतप्रसिद्ध अद्वितीय वेदज्ञ विद्वान् थे। उनके सुपुत्र वेदाचार्य पण्डित श्रीवेणीरामजी गौडके मनमें यह सत्सङ्कल्प हुआ कि अपने पूज्य श्रीपिताजीका एक 'स्मारकग्रन्थ' प्रकाशित किया जाय। तदनुसार उन्होंने यह 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' प्रकाशित किया। इसमें तीन खण्ड हैं। प्रथम खण्डमें पण्डित विद्याधरजीका जीवन-चरित, उनके संस्मरण तथा श्रद्धाञ्जलियाँ हैं। द्वितीय खण्डमें महामहोपाध्याय श्रीविद्याधरजी गौडके संस्कृत और हिन्दीमें वेद, कर्मकाण्ड एवं धर्मशास्त्रसम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण लेख हैं। तृतीय खण्डमें भारतके मूर्धन्य विद्वानोंके विविध विषयोंके विशिष्ट लेख हैं। ग्रन्थकी सामग्री सर्वथा उपादेय है। मुझे प्रसन्नता है कि वेद-विद्याके उद्‌भट विद्वान्‌की स्मृतिमें इस प्रकारका उत्तम कार्य सम्पन्न हो सका है। मैं स्मारक-ग्रन्थका प्रचुर प्रचार चाहता हूँ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५ —गोयनका संस्कृत महाविद्यालय, काशीके प्रिंसिपल पण्डित श्रीकमलाकान्तजी मिश्र—

'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' बहुत ही सुन्दर है। जिस प्रकार म० म० पण्डित श्रीविद्याधरजी गौड भारतके सर्वश्रेष्ठ वेदज्ञ विद्वान् थे, उसी प्रकार यह स्मारक-ग्रन्थ भी सर्वश्रेष्ठ और सर्वोपयोगी प्रकाशित हुआ है। वेदज्ञोंमें सर्वप्रथम महामहोपाध्याय श्रीगौडजीका स्मारक-ग्रन्थ प्रकाशित हुआ, यह अत्यन्त गौरवका विषय है।

६ – काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभागके रीडर पण्डित श्रीपद्मनारायणजी आचार्य--

महामहोपाध्याय स्मारक ग्रन्थ अर्थात् प्रातःस्मरणीय पं० विद्याधर गौड स्मारकग्रन्थ मैंने ध्यानसे पढ़ा है। वह औपचारिक स्मारकग्रन्थ ही नहीं है, वह तो संग्रहणीय ग्रन्थ है। वह प्रेरणा और उपयोग दोनोंकी दृष्टिसे उपादेय सामग्री उपस्थित करता है। वैदिक संस्कृतिके प्रेमियोंको प्रेरणा और वैदिक संस्कार तथा कर्मकाण्डके प्रेमियोंको उपयोगकी सामग्री भरपूर मात्रामें मिलती है। वेद और वैदिक दोनों-का गुणानुवाद ही नहीं, जीवन्त दर्शन इस ग्रन्थके पढ़नेसे हो जाता है। ऐसा मेरा और मेरे अनेक साथी संगियोंका मत है। मेरे घर बूढ़ोंसे लेकर बच्चों तकने इस ग्रन्थको पढ़ा और सराहा, इससे मेरा अनुभव दृढ़ होगया कि यह **स्मारक ग्रन्थ सबके कामकी वस्तु है और पुस्तकालयोंमें रखने योग्य है। इस ग्रन्थके वितरणसे वैदिक संस्कृति और हिन्दू संस्कार दोनों का प्रचार और प्रसार होगा। अतः पुण्य लूटनेवाले धनियोंको चाहिए कि इस ग्रन्थको खरीदकर सत्पात्रों तथा अच्छे पुस्तकालयोंको दान करके पुण्य अर्जित करें।** यह ग्रन्थ-रत्न कुछ ऐसा ही सुन्दर उपयोगी और सफल बन गया है कि उसका माहात्म्य गीता, मानस आदिके वितरणकी कोटिमें आ गया है। मनुने

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

लिखा है कि धर्मका सच्चा बोध आचरणवान्का चरित देखनेसे होता है। ऐसे ही आचरणवान् तथा क्रियावान् वैदिकोंका चरित इस ग्रन्थमें मूर्तिमन्त है। अतः मेरी संस्तुति है कि लोग इस ग्रन्थरत्नको अवश्य पढ़ें और अधिकाधिक प्रचार करें। इसके सम्पादक, प्रकाशक और व्ययकर्ता याज्ञिकसम्राट् वेदवेत्ता अपने भाई वेणीरामजीको मैं हृदयसे आशीर्वाद देता हूँ कि वे ऐसे सांस्कृतिक कार्योंमें लगकर राष्ट्रको बलवान् बनावें।

७—टाउन डिग्रीकालेज, बलियाके प्रिंसिपल पण्डित श्रीसोतारामजी चतुर्वेदी—

प्रियवर वेणीरामजी,

'महामहोपाध्याय पं० विद्याधर गौड स्मारक-ग्रन्थ' प्रकाशित करके आपने जो अत्यन्त स्तुत्य कार्य किया है, उसका निश्चय ही व्यापक स्वागत होना चाहिए। उसमें प्रत्येक सुविज्ञ और विद्या-प्रेमी महानुभाव तथा जिज्ञासु अध्येताके लिये इतनी अधिक सुव्यवस्थित, उपादेय और महत्त्वपूर्ण सामग्री है कि प्रत्येक महाविद्यालय, विश्वविद्यालय और सार्वजनिक पुस्तकालयमें इसका होना अनिवार्य है। जिस पाडित्यपूर्ण ढँगसे इसका सम्पादन किया गया है, जिस परिश्रमसे इसमें सामग्री सङ्कलित की गई है और जिस निष्ठाके साथ इसका प्रकाशन कराया गया है, वह निश्चय ही सराहनीय है।

मैं इस सम्पूर्ण प्रयासके लिए आपको साधुवाद और बधाई देता हूँ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८—वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयके पुराणेतिहासाध्यापक पं० श्रीबलदेवजी उपाध्याय—

महामहोपाध्यायपण्डितश्रीविद्याधरगौडमहोदयानां स्मारकग्रन्थं विलोकयतो नितरां प्रसीदति ममान्तरात्मा। ग्रन्थस्य प्रथमखण्डे पुण्ययशसां कैलासवासिनां श्रीगौडमहाभागानां पावनं चरितं निबद्धं वर्तते। द्वितीयखण्डे महामहोपाध्याय—श्रीगौडमहोदयानां वेद—कर्मकाण्ड-धर्मशास्त्रादिविषयका विविधा विशिष्टपाण्डित्यपूर्णलेखाः। तृतीयखण्डे नानाविमलशेमुषीकैर्विद्वद्भिः प्रणीता वेदशास्त्रदर्शनादिसम्बन्धाः प्रौढपाण्डित्यप्रकाशका विद्योतन्तेतरां विविधा निबन्धाः। एतेषामनुशीलनेन पण्डितानामपि बुद्धिवैमल्यं भजते नवीनविषयाणां ग्रहणं च वैशद्येन लभते इति ध्रुवं वक्तुं पारयति विपश्चितां पश्चिमः कश्चन।

९—रामदल संस्कृत महाविद्यालय, दिल्लीके प्रिन्सिपल तथा संस्कृत एवं हिन्दीके सुप्रसिद्ध लेखक पण्डित श्रीदीनानाथजी सारस्वत—

'महामहोपाध्याय स्मारक ग्रन्थ' (पृ० ६००) को मैंने आरम्भसे अन्त तक देखा। इसमें पहले म० म० पं० श्रीविद्याधरजी गौडका जीवनचरित्र दिया है, जिससे उनकी विद्वन्मूर्धन्यता तथा सकलगुण-गणाधिष्ठानता मालूम होती है। उसके बाद म० म० श्रीविद्याधरजी गौडके विषयमें भारतीय धर्माचार्यों, राजकीय महापुरुषों, नेताओं तथा भारतके गण्यमान्य विद्वानों एवं म० म० जीके शिष्यों द्वारा अपने हार्दिक भाव व्यक्त किये गये हैं। इनसे हमें '**कीर्तिर्यस्य स जीवति**' इस उक्तिकी चरितार्थता प्रतीत होती है। महामहोपाध्यायजीके गुण सचमुच 'ईर्ष्याकी वस्तु' हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

महामहोपाध्यायजीकी स्मृतिमें यदि उनका केवल जीवन-चरित्र प्रकाशित किया जाता, तो वह वैयक्तिक वस्तु ही रहता, **सबके** उपयोगमें न आता। किन्तु उनकी स्मृतिमें जीवनचरित्रके साथ-साथ स्मारक-ग्रन्थके द्वितीय खण्डमें म० म० पं० श्रीविद्याधरजीके लिखित संस्कृत-हिन्दीनिबद्ध, सदा सबके उपयोगमें आने योग्य विद्वत्तापूर्ण निबन्धोंका संग्रह है और तृतीय खण्डमें भारतप्रसिद्ध विद्वानोंके लेख---जिनसे वैदिक सिद्धान्तों पर प्रकाश पड़ता है—दिये गये हैं। अतः यह स्मारकग्रन्थ व्यक्तिगत वस्तु न रहकर विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा लायब्रेरियों एवं वाचनालयोंका शृङ्गार बन गया है। प्रत्येक पुस्तकालयमें इस ग्रन्थके रखनेसे पुस्तकालयकी शोभा बढ़ेगी और इस ग्रन्थके पाठकोंका भी विशेष उपकार होनेकी पूर्ण सम्भावना है।

छपाई, सफाई, विशाल आकार, वैदुष्यपूर्ण निबन्धसङ्कलन आदिसे यह महाग्रन्थ अन्तरङ्ग—बहिरङ्ग दोनों ही प्रकारोंसे सुन्दर बन गया है।

महामहोपाध्यायजीके आत्मज याज्ञिकसम्राट् पं० श्रीवेणीरामजी गौड वेदाचार्यने इस महत्त्वपूर्ण स्मारकग्रन्थको प्रकाशित करके जहाँ पितरोंका अलौकिक श्राद्ध किया है, वहाँ ही वेदोंकी विद्वत्ता सञ्चित करनेमें विद्वानोंको प्रोत्साहित भी किया है। हम इस सफलताके लिए याज्ञिकसम्राट् श्रीवेणीरामजी गौड वेदाचार्यको बधाई देते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१०—गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, पटनाके दर्शनादिशास्त्रोंके प्राध्यापक पण्डित श्रीकेदारनाथजी ओझा—

आपने महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थको मुझे देकर मेरा महान् उपकार किया है। एतदर्थ आपको सहस्र धन्यवाद है।

स्मारक-ग्रन्थको प्रकाशित करनेमें आप बहुत ही सफल हुए हैं, इसकी मुझे विशेष प्रसन्नता है। आपको भी अपने सफल प्रयास पर प्रसन्न होना चाहिये। आपने स्मारकग्रन्थको प्रकाशित कर पाण्डित्य, धर्मशास्त्र और कर्मकाण्डको सुरक्षण भी कर दिया है। प्रत्येक शिक्षित मानवको अपने कामकी वस्तु समझ कर 'महामहोपाध्याय स्मारक--ग्रन्थ' की एक प्रति अपने पास अवश्य रखना चाहिए।

११--गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, पटनाके वेदविज्ञान–विभागाध्यक्ष पण्डित श्रीजगदानन्दजी झा--

प्रिय श्रीवेणीरामजी गौड,

पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय कैलासवासी श्री १०८ गुरूजीकी स्मृतिमें प्रकाशित किये गये 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ'के अध्ययनसे पूर्ण लाभान्वित हो रहा हूँ। स्मारक-ग्रन्थके तीनों खण्ड अनुपम और प्रशंसनीय हैं। आपने पूज्य श्रीगुरूजीकी स्मृतिमें स्मारक--ग्रन्थको प्रकाशित कर सभीका, विशेषतः वेदज्ञ विद्वानोंका मस्तक उन्नत किया है। मैं इस श्रेष्ठ कार्यके लिये आपको हार्दिक धन्यबाद देता हूँ और भगवान्से प्रार्थना करता हूँ कि वे आपको पूर्णायु दें और आप सदा–सर्वदा पुत्र, पौत्रादिके आनन्दानन्दसन्दोहसे परिपूर्ण रहें। आशा है, मेरी इस शुभ–कामनाका अनुमोदन स्वर्गस्थ पूज्य श्रीगुरूजी भी करेंगे।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१२—हृषीकेशनिवासी वैदिकप्रवर पण्डित श्रीबालकरामजी आहिताग्नि—

वेदाचार्य पण्डित श्रीवेणीरामजी,

आपके द्वारा प्रेषित 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' मिला। एतदर्थ आपको कोटिशः धन्यबाद है। यह ग्रन्थ बहुत ही उपादेय और विद्वत्तापूर्ण है। आपने अपने पूज्य श्रीपिताजीकी स्मृतिमें स्मारकग्रन्थको प्रकाशित कर अपनी पितृभक्तिद्वारा अपने श्रीपिताजीकी अखण्ड उज्ज्वल कीर्तिको प्रतिष्ठित करनेमें पूर्ण सफलता प्राप्त की है। महापुरुषोंके सुपुत्रोंका यही कर्तव्य है।

१३—कानपुरके सुप्रसिद्ध वेदज्ञ पण्डित श्रीरामचन्द्रजी वाजपेयी—

आपका भेजा हुआ 'महामहोपाध्याय स्मारक ग्रन्थ' प्राप्त हुआ। यह स्मारकग्रन्थ बहुत ही श्रेष्ठ और विविध पाण्डित्यपूर्ण लेखोंसे सुशोभित है। पूज्य म० म० पण्डितप्रवर श्रीविद्याधरजी महाराजके वेद—धर्मशास्त्र एवं कर्मकाण्डादिके जो लेख हैं, वह उपयोगी और अमर स्मारकवृत्त हैं। स्मारकग्रन्थकी लेखनशैली ध्यानाकर्षित होनेसे अत्यन्त प्रशंसनीय है। बार-बार पढ़नेसे भी तृप्ति नहीं होती।

१४—स्वाध्यायमण्डल (जि० सूरत) के संस्थापक तथा वेदोंके सुप्रसिद्ध व्याख्याता पं० श्रीपाद दामोदरजी सातवलेकर—

प्रिय गौडजी,

आपके पूज्य श्रीपिताजीकी स्मृतिमें जो स्मारक-ग्रन्थ छपा है, वह उत्तम तथा बोधप्रद है। मैं इसके प्रचारका यत्न करूँगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१५– राधाकृष्ण संस्कृत कालेज, खुरजाके साहित्यविभागाध्यक्ष पण्डित श्रीब्रह्मानन्दजी शुक्ल—

प्रिय वेदाचार्यजी,

निःसन्देह 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' अत्युत्तम बना है। स्मारकग्रन्थके तीनों खण्ड विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। प्रथम खण्डमें महामहोपाध्यायजीका 'जीवन-चरित्र' बड़ा ही सुन्दर और अनुकरणीय है। ऐसे महापुरुषोंका जन्म ही आदर्शपूर्ण होता है। द्वितीय खण्डमें म० म० श्रीगौडजीके विविध विषयों पर लिखे गये लेखोंका संकलन बहुत उपयोगी हुआ है। अनेक विज्ञ–जन उन लेखोंसे लाभान्वित हो सकेंगे। तृतीय खण्डमें प्रसिद्ध विद्वानोंके भिन्न-भिन्न विषयों पर गवेषणापूर्ण लिखे गये लेख हैं, जो कि ग्रन्थकी सुषमा-समृद्धिमें सहायक हुए हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

सच तो यह है कि आपने सत्पुत्रोचित मार्गका अनुसरण ही नहीं, प्रत्युत अनुपम आदर्श मार्गप्रदर्शन कर दिग्-दिगन्तरोंमें अपने पूज्य श्रीपिताजीकी एवं अपनी विमल कीर्ति चिरप्रतिष्ठित कर दी। "**प्रीणाति यः स्वचरितैः पितरं स पुत्रः।**" इस कलिकालमें ऐसे पितृभक्त पुत्र अन्यत्र दुर्लभ हैं। भगवान्से आपके आयुष्य एवं वंश-वृद्धिकी कामना है।

१६—वृन्दावननिवासी मानससम्राट् गोस्वामी श्रीबिन्दुजी महाराज—

प्रियवर गौडजी,

'महामहोपाध्याय स्मारकग्रन्थ' पढ़ कर विशेष हर्ष-प्रकर्ष हुआ। महामहोपाध्याय पण्डित श्रीविद्याधरजी गौडका जिन श्रेयस्कर शब्दोंमें सुस्मरण किया जाय, वह अपर्याप्त ही कहा जासकता है। ऐसे महापुरुषकी स्मृतिमें आपने बृहत् पुस्तकाकार–रूपमें स्मारक-ग्रन्थ प्रकाशितकर ओजस्वी प्रयास किया है। एतदर्थ आपको धन्यबाद।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१७—सनातनधर्मके सुप्रसिद्ध विद्वान् शास्त्रार्थमहारथी पं० श्रीमाधवाचार्यजी शास्त्री—

प्रायः प्रतिवर्ष अनेक विशिष्ट पुरुषों के 'स्मारकग्रन्थ' अथवा 'अभिनन्दनग्रन्थ' प्रकाशित होते रहते हैं। परन्तु उनमें 'भवान् सूर्यः, भवान् सोमः' आदि प्रशंसा-वाक्योंके अतिरिक्त विशेष उपादेय विषय नहीं रहते। इसलिये निन्यानबे प्रतिशत व्यक्ति ऐसे ग्रन्थोंको एक बार भी आद्यन्त पढ़नेके लिये उद्यत नहीं होते। किन्तु 'महामहोपाध्याय स्मारकग्रन्थ' में ऐसी बात नहीं है। इसमें जो सामग्री दी गई हैं, वे सबके लिये सदैव अत्यन्त उपयोगी और मार्गप्रदर्शक सिद्ध होंगी। यह स्मारकग्रन्थ स्वर्गीय महामहोपाध्याय पं०श्रीविद्याधरजी गौडके लोकोत्तर पाण्डित्यका वास्तविक स्मारक और स्वर्गीय आत्माका बोलता हुआ सजीव चित्र है, जो उनके अभावकी पूर्तिका आंशिक प्रतीक है। इस प्रशंसनीय स्मारक-ग्रन्थके प्रकाशक तथा सम्पादक वर्धापनके पात्र हैं, जिन्होंने इसको उपादेय बनानेमें कोई कोर-कसर बाकी नहीं रखा।

१८—बाबा कालीकमलीवाला पंचायती क्षेत्र, ऋषिकेशके वरिष्ठ अधिकारी पण्डित श्रीजंगबहादुरजी शर्मा—

आपका प्रेषित 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' मिला। इसमें दी हुई अलभ्य सामग्रीके सङ्कलन, चयन और सम्पादनके लिए आप बधाईके पात्र हैं। अपने पूर्वजोंकी स्मृतिको चिरस्थायी बनानेकी दिशामें यह स्मारक-ग्रन्थ आपके उज्ज्वल भविष्यका प्रतीक सिद्ध होगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१९—'लोकालोक' (मासिक पत्र) दिल्ली—

महामहोपाध्याय पं० श्रीविद्याधरजी गौड—जो अपने समयके अद्वितीय वैदिक विद्वान् थे—की स्मृतिमें 'महामहोपाध्याय स्मारकग्रन्थ' प्रकाशित किया गया है। यह ग्रन्थ तीन खण्डोंमें विभाजित है। प्रथम खण्डमें म० म० जीका जीवनचरित है और उनके प्रति धर्माचार्यों, नेताओं एवं विद्वानोंके द्वारा व्यक्त की गई शुभ—कामनाएँ एवं श्रद्धाञ्जलियाँ हैं। द्वितीय खण्डमें महामहोपाध्याय श्रीगौडजीके विविध विषयों पर लिखित लेख हैं और तृतीय खण्डमें अनेक मूर्धन्य विद्वानोंके विविध लुप्तप्राय अनुसन्धानसाध्य गम्भीर विषयों पर सोपपत्तिक लेख हैं, जिस-कारण ग्रन्थकी उपयोगिता विशेष बढ़ गई है। धार्मिक जनताको इसे अधिकसे अधिक अपनाना चाहिए।

ग्रन्थका सम्पादन बहुत ही विद्वत्तापूर्ण शैलीसे किया गया है। ऐसे सुन्दर प्रकाशनके लिये महामहोपाध्यायजीके यशस्वी सुपुत्र वेदाचार्य पं० श्रीवेणीरामजी गौड धन्यबादके पात्र हैं, जिनके सत्प्रयत्नसे यह स्मारकग्रन्थ प्रकाशमें आ सका है।

२०—चिन्ताहरण जन्त्री, वाराणसी—

भारत—विभूति, महान् वेदज्ञ म० म० श्रीविद्याधरजी गौडकी पुण्य-स्मृतिमें 'महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ' का प्रकाशन कर संस्कृत—समाजमें बहुत उच्च आदर्श स्थापित किया गया है। प्रथमखण्डमें महामहोपाध्यायजीका जीवन—चरित, द्वितीयखण्डमें उनके महत्त्वपूर्ण लेख और तृतीयखण्डमें भारतप्रसिद्ध विद्वानों एवं धर्माचार्योंके सारगर्भित लेख हैं। लगभग ६०० पृष्ठोंका यह विशाल ग्रन्थ बहुत ही महत्त्वशाली और उपादेय है। प्रत्येक पुस्तकालय और विद्यालयमें यह ग्रन्थ अवश्य होना चाहिये।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२१—**गाण्डीवम्** (साप्ताहिकपत्र) वाराणसी—

महामहोपाध्यायस्मारकग्रन्थनामकं यथाभिधानं वैदिक—कुल-कमलदिवाकराणां गौडवंशावतंसानां स्वनामधन्यानां अग्निहोत्रिणां स्व० म० म० श्रीविद्याधरगौडमहाभागसंस्मरणस्थास्नुतार्थं तत्सु-पुत्रैर्याज्ञिकसम्राड्वेदाचार्यैः श्रीवेणीरामशर्मगौडमहोदयैः प्रकाशितम् । अत्र त्रयः खण्डाः प्रकल्पिताः । प्रथमखण्डे महामहोपाध्याय श्रीगौडमहोदयस्य जीवनचरित्रम्, विविधविदुषां श्रद्धाञ्जलयः शुभ-सन्देशादिकञ्च । द्वितीयखण्डे म० म० श्रीगौडमहोदयलिखिता अपूर्वा मननीया व्यवस्था-निबन्ध-भाषणलेखादयः । तृतीयखण्डे विबुध-धौरेयलिखिता विभिन्नदर्शनविषयकाः साधुतमा अवधेया लेखावलयः। एवं संग्रथितमिमं ग्रन्थमामूलचूलं विहङ्गमावलोकनेन पर्यवेक्ष्य निर्विशङ्कं वक्तुं शक्यते यद् वेदादिविविधविषयतत्त्वज्ञापनपरमेता-दृशमपूर्वं महत्त्वपूर्णं सर्वाङ्गसुन्दरं ग्रन्थरत्नमिदं नाद्यावधि कैरपि प्राकाशि । अतः संस्कृतज्ञैः हिन्दीभाषाध्येतृभिश्च सर्वैरेव सर्वथेदमुपा-देयम् ।

स्मारक-ग्रन्थ भेजनेका नियम—

महामहोपाध्याय स्मारकग्रन्थ रजिस्ट्रीसे ही भेजा जाता है, वी० पी० से नहीं । रजिस्ट्रीसे मँगानेवाले सज्जनोंको प्रति पुस्तक १) रुपया कमीशन दिया जायगा । अतः ९) रुपया पुस्तकका मूल्य और १।।।) रजिस्ट्री खर्च, इस प्रकार १०।।।) मनिआर्डरसे भेजनेपर तत्काल रजिस्ट्रीद्वारा स्मारकग्रन्थ भेजा जायगा ।

पुस्तक प्राप्तिस्थान—

(१)
मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स
संस्कृत बुकडिपो
कचौरी गली, वाराणसी ।

(२)
वैदिक पुस्तकालय
७।१४ सकरकन्दगली, वाराणसी ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ-मीमांसा

(तृतीय संस्करण)

यज्ञ सनातन धर्मका प्रधान अङ्ग है। वेदों, उपनिषदों, पुराणों और धर्मशास्त्रोंमें यज्ञकी विशिष्ट महिमा लिखी है। अतः यज्ञके वास्तविक स्वरूप और विधि-विधानसे सबलोग परिचित हो जायँ, इस दृष्टिसे यह पुस्तक लिखी गई है। इस पुस्तकमें **वैज्ञानिक ढंगसे लिखे गये यज्ञसम्बन्धी २२ निबन्ध हैं और** अनेक अप्राप्य ग्रन्थोंके पर्यालोचनद्वारा यज्ञ-विषयके ज्ञातव्य विविध दुर्लभ गूढ़ विषय दिये गये हैं। साथ ही अनेक यज्ञोंके स्वाहाकारके मन्त्र, अनेक यज्ञोंके न्यास, अनेक यज्ञोंके महत्त्व, अनेक यज्ञोंकी सामग्री, कुण्मण्डपसम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण विषय, अनेक देवी-देवताओंकी गायत्री, **वास्तु, क्षेत्रपाल, योगिनी, नवग्रह और सर्वतोभद्रादिके मन्त्र, वेदसंहिताके पद, क्रम, जटा** एवं **घनके पठनीय मन्त्र, वृष्टिकारक मन्त्र और वृष्टिरोधक मन्त्र** आदि सैकड़ों महत्त्वपूर्ण विषय दिये गये हैं, जिनका ज्ञान प्रत्येक वैदिक, याज्ञिक, कर्मकाण्डी और पुरोहितको होना ही चाहिये। परिशिष्टमें **लक्ष्मीयाग, सूर्ययाग, रामयाग, पुत्रेष्टियाग और अंबायाग** आदिकी पद्धतियाँ भी दी गई हैं, जिससे इस पुस्तककी विशेष उपयोगिता बढ़ गई है। हिन्दीमें यज्ञ-विषयकी ऐसी और कोई महत्त्वपूर्ण पुस्तक नहीं है।

पुस्तककी पृष्ठ संख्या ५०० से अधिक होने पर भी मूल्य लागतमात्र ५) रुपया रखा गया है। **जो सज्जन ५) रुपया मनिआर्डरसे भेजेंगे, उनके पास ही यह पुस्तक भेजी जायगी।**

पुस्तक प्राप्तिस्थान—

वैदिक पुस्तकालय,

७।१४, सकरकन्दगली, वाराणसी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'यज्ञमीमांसा' पर कुछ सम्मतियाँ --

१—अनन्तश्रीविभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य श्रीस्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज--

काशीनिवासी वेदाचार्य पं० श्रीवेणीरामजी शर्मा गौडद्वारा निर्मित 'यज्ञ-मीमांसा' ग्रन्थ देखा। हिन्दी-भाषामें जनताके बोधनके लिये यह ग्रन्थ उपयोगी है। महामहोपाध्याय पं० श्रीप्रभुदत्तजी शास्त्रीके पौत्र और महामहोपाध्याय पं० श्रीविद्याधरजी शास्त्रीके सुपुत्रके द्वारा इस ग्रन्थका निर्माण होना विशेष महत्त्व रखता है। ऐसे ग्रन्थोंको लिखनेका इनको स्वाभाविक अधिकार है। यह ग्रन्थ जनताको लाभ पहुँचावे, ऐसी शुभ-कामना है।

२—अनन्तश्रीविभूषित श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज—

काशीस्थ गोयनका संस्कृत महाविद्यालयके वेदाध्यापक वेदाचार्य पं० श्रीवेणीरामशर्मा गौड काशीके प्रतिष्ठित वैदिक कुलके यशस्वी विद्वान् हैं। इनके द्वारा निर्मित 'यज्ञ-मीमांसा' नामक ग्रन्थको हमने देखा है। इस ग्रन्थमें यज्ञसम्बन्धी अनेक आवश्यक गूढ़ विषयोंका सप्रमाण निरूपण किया है। हिन्दीभाषामें यज्ञ-विषयका विवेचन करनेवाला और कोई ग्रन्थ नहीं है। यह ग्रन्थ यज्ञसम्बन्धी जिज्ञासुओं एवं वैदिकोंके लिये विशेष उपादेय है। ऐसे ग्रन्थकी आवश्यकता थी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३—त्यागतपोमूर्ति अनन्तश्रीविभूषित श्रीस्वामी रामदेवजी महाराज—

प्राचीन समयमें श्रौत—स्मार्त यज्ञ विधिपूर्वक होते थे, जिससे अनेक प्रकारके शुभ फल होते थे। बीचमें यज्ञोंके प्रति शैथिल्य हो गया था, किन्तु वर्तमान समयमें पुनः यज्ञोंकी ओर विशेष प्रवृत्ति देखी जा रही है। वेदोंके स्वाध्यायके अभावसे विधिका यथार्थ परिज्ञान न होनेसे प्रायः विधिहीन यज्ञ होते हैं। अतएव यज्ञविधिके ज्ञानकी परमावश्यकता है। इस आवश्यकताकी पूर्ति याज्ञिकसम्राट् पं० श्रीवेणीरामशर्मा गौड वेदाचार्यद्वारा लिखित 'यज्ञ-मीमांसा' पुस्तकके द्वारा हो जाती है। केवल हिन्दी-भाषाके ज्ञाता भी इस पुस्तकके द्वारा यज्ञ-विधिको जान सकते हैं। अतएव यह पुस्तक सबको पढ़नी चाहिये।

४—माध्वसम्प्रदायाचार्य गोस्वामी श्रीदामोदरजी शास्त्री, काशी—

यज्ञ—विषयक अनेक महत्त्वपूर्ण दुर्लभ विषयोंके प्रतिपादन करनेवाले 'यज्ञ मीमांसा' नामक ग्रन्थको आद्यन्त देखा। इस ग्रन्थमें यज्ञ—सम्बन्धी सभी विषय उपयोगी और महत्त्वपूर्ण हैं।

५—महामहोपाध्याय पण्डित श्रीगिरिधरजी शर्मा चतुर्वेदी—

यज्ञ-मीमांसामें यज्ञ—विषयका बहुत ही सुन्दर ढंगसे प्रतिपादन किया गया है। इसका प्रत्येक विषय विद्वत्तापूर्ण है। हिन्दी-भाषामें यज्ञ-विषयकी ऐसी दूसरी पुस्तक नहीं है। मैं इस प्रयासकी प्रशंसा करता हूँ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६—महामहोपाध्याय पं० श्रीचिन्नस्वामीजी शास्त्री, काशी—

हिन्दी—भाषामें 'यज्ञ-मीमांसा' लिखकर यज्ञप्रेमियोंका बहुत ही उपकार किया है। यज्ञप्रेमियोंके लिये यह पुस्तक विशेष उपयोगी है।

७—महामहोपाध्याय पं० श्रीनारायण शास्त्रीजी खिस्ते, काशी—

'यज्ञ-मीमांसा' पढ़ कर बहुत हर्ष हुआ। इसका प्रत्येक विषय पठनीय और मननीय है।

८—सनाततधर्म प्रतिनिधि सभा (पंजाब) के प्रधानमन्त्री त्यागमूर्ति श्रीयुत गोस्वामी गणेशदत्तजी महाराज—

काशीनिवासी वेदाचार्य पं० वेणीरामशर्मा गौड वेद—कर्म-काण्डके उच्चकोटिके विद्वान् हैं। आपने वेद—कर्मकाण्डकी अनेकों मौलिक पुस्तकें लिखकर तथा अनेक पुस्तकोंकी टीकाएँ लिखकर जनता जनार्दनकी विशेष सेवा की है।

आपने हिन्दी—भाषामें सप्रमाण 'यज्ञ-मीमांसा' नामकी विशाल पुस्तक लिखकर सनातनधर्मका विशेष लाभ किया है। यज्ञ-मीमांसा-में यज्ञ-सम्बन्धी अनेकों उपयोगी विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचन किया है। हिन्दी-भाषामें यह पुस्तक यज्ञ-विषयकी प्रथम प्रकाशित हुई है। मुझे आशा है, इस पुस्तकसे यज्ञप्रेमियोंका अत्यधिक लाभ होगा।

९—पण्डित श्रीजगदानन्दजी झा वेदाचार्य

(अध्यक्ष-वेद-विभाग गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, पटना)

यज्ञ-मीमांसा' में यज्ञ-विषयक बहुत-से महत्त्वपूर्ण विषयोंको देखकर प्रसन्नता हुई। आपके द्वारा यज्ञ-विषयकी पुस्तकका निर्माण होना, विशेष महत्त्व रखता है। मैं इस पुस्तकका प्रचुर प्रचार चाहता हूँ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१०—पं० श्रीब्रह्मानन्दजी शुक्ल, एम्० ए०, साहित्याचार्य
(साहित्यविभागाध्यक्ष-राधाकृष्ण संस्कृत कालेज, खुरजा)

आपकी प्रेषित 'यज्ञ-मीमांसा' पुस्तक मिली। चित्त प्रसन्न हुआ। मुझे आपकी अनेक कृतियाँ पढ़नेका सुयोग प्राप्त हो चुका है। वास्तवमें ऐसे युगमें आप सरीखे कर्मठ विद्वान् देशको छिपे-छिपे रत्न प्रदान कर महान् कीर्तिभाजन बना रहे हैं। आपकी लेखन-शैली सहज मनोग्राहिणी एवं कलापूर्ण है। आपकी यह पुस्तक बड़े महत्त्वकी वस्तु है। मुझे हार्दिक प्रसन्नता है। भगवान् आपको दिनोंदिन ऐसे-ऐसे शुभ कार्योंमें सफल करें, यह मेरी सच्ची शुभ कामना है।

११—माननीय श्रीमान् बाबू हनुमानप्रसादजी पोद्दार
(सम्पादक–'कल्याण' गोरखपुर)

'यज्ञ' हमारी भारतीय संस्कृतिका एक प्रधान अङ्ग है। "यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्" कहकर भगवान् श्रीकृष्णने यज्ञको अवश्य–कर्तव्य बताया है। 'यज्ञो वै विष्णुः' इत्यादि श्रुतियोंमें यज्ञको भगवान्‌का स्वरूप ही कहा गया है। 'यज्ञ–मीमांसा' के विद्वान् लेखकने—जो स्वयं एक कुशल याज्ञिक एवं वेद–निष्णात होनेके साथ-साथ काशीके एक प्रसिद्ध याज्ञिकवंशके अवतंसरूप हैं—इस पुस्तकमें इस महान् उपयोगी विषयकी बड़ी ही सुन्दर एवं सर्वाङ्गपूर्ण समीक्षा की है। इसमें यज्ञ—सम्बन्धी सभी आवश्यक विषयोंकी अधिकारपूर्ण आलोचना की गयी है, जिससे यह पुस्तक सभी धर्मप्रेमियोंके लिये विशेष संग्रहणीय एवं उपयोगी बन गई है। वर्तमान जड़वादके युगमें, जब कि भारतीय धर्मप्राण जनता अपने प्राचीन गौरवको भूलती जा रही है, इस प्रकारके ग्रन्थोंकी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विशेष आवश्यकता है। लेखकने इस पुस्तकके द्वारा धार्मिक साहित्यके एक अत्यावश्यक अङ्गकी पूर्ति की है। आशा है; उनकी इस कृतिका जनता उचित आदर करेगी।

१२—रायबहादुर पं० श्रीदत्तशर्मा वैद्यराज, भिवानी (हिसार)—

'यज्ञ—मीमांसा' में यज्ञ—सम्बन्धी सभी आवश्यक और गूढ़ विषयोंको देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ। वैदिकसमाजके लिये यह पुस्तक बहुत ही उपकारक सिद्ध होगी। मैं इस पुस्तकके प्रचुर प्रचारार्थ भगवान्से प्रार्थना करता हूँ।

१३—पं० श्रीकालीप्रसादजी शास्त्री, सम्पादक—'संस्कृतम्' (अयोध्या)—

स्व० म० म० पं० श्रीप्रभुदत्तजी शास्त्रीके पौत्र तथा स्व० म० म० पं० श्रीविद्याधरजी शास्त्रीके पुत्र वेदाचार्य पं० श्रीवेणीरामशर्मा गौड महोदयने हिन्दी-भाषामें 'यज्ञ-मीमांसा' पुस्तकका प्रणयनकर बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। अद्यावधि यज्ञसम्बन्धमें इतना प्रामाणिक ग्रन्थ दूसरा कोई भी प्रकाशित नहीं हुआ है। यह पुस्तक प्रत्येक संस्कृतज्ञके घरमें होनी चाहिये।

१४—साकेत (संस्कृत साप्ताहिकपत्र), अयोध्या—

काशीस्थ-गोयनकासंस्कृतमहाविद्यालयस्य वेदाध्यापकमहोदय—लिखितयज्ञ-मीमांसायां यज्ञसम्बन्धिनः ज्ञातव्याः बहवो विषयाः मीमांसिताः सन्ति। यज्ञ-मीमांसायाः लेखकः काश्यां सुप्रसिद्ध—वैदिकयाज्ञिककर्मकाण्डकुले प्रसूतः वैदिकप्रकाण्डानां याज्ञिकमूर्धन्यानां महामहोपाध्यायपण्डितश्रीविद्याधरशास्त्रिणां पुत्रः स्वयं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेदाचार्यः याज्ञिकः यज्ञानुष्ठाने निपुणो वर्तते। अत एव यज्ञमीमांसायाः प्रामाणिकत्वं श्रद्धेयमस्ति। साम्प्रतिके युगे यज्ञ-मीमांसाया महती आवश्यकता आसीत्। यज्ञतत्त्वान्वेषिभिः यज्ञमीमांसा अवश्यं द्रष्टव्या।

पुस्तकप्राप्तिस्थान—

वैदिक पुस्तकालय

७।१४, सकरकन्दगली, वाराणसी।

वेद-विज्ञान-मीमांसा

वैदिक वाङ्मयका संक्षिप्तरूपमें सर्वाङ्गीण परिचय देनेवाला संस्कृत भाषाका यह अपूर्व मौलिक ग्रन्थ है। भाषा सरल, सुबोध और प्राञ्जल, प्राच्य एवं पाश्चात्य, नवीन एवं प्राचीन ग्रन्थकारों द्वारा उपस्थित समस्त वैदिक विचारोंका आलोड़न करनेके बाद इस पुस्तकका प्रणयन किया गया है। यह पुस्तक प्रत्येक वेद-स्वाध्यायी तथा संस्कृतज्ञके लिये नोटबुक्की भाँति उपयोगी है। मूल्य ।।) आना लागतमात्र है।

कुछ सम्मतियाँ—

१—माध्वसम्प्रदायाचार्य, दार्शनिकसार्वभौम, साहित्यदर्शनाद्याचार्य,

गोस्वामी श्रीदामोदरलालजी शास्त्री, काशी—

वेदविज्ञान-मीमांसा बालानामुपकारिका।
वेणीरामकृता जीयात् श्रीशानुग्रहतश्चिरम्॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२—महामहोपाध्याय सर डा० श्रीगङ्गानाथझा एम्० ए०,

(भूतपूर्व वाइसचाँन्सलर—इलाहाबाद युनिवर्सिटी)

'वेद विज्ञान-मीमांसा' की प्रति मिली। वेदविषयक एतादृश ज्ञान और किसी दूसरी सुसाध्य पुस्तकसे नहीं हो सकता है। पितृ-पितामहोपार्जित विद्यासम्पत्तिको आपमें देखकर चित्त कृतार्थ हुआ।

३—महामहोपाध्याय पं० श्रीगिरिधरशर्माचतुर्वेदिमहोदयः

(डायरेक्टर—वनारस हिन्दूयुनिवर्सिटी)

महामहोपाध्याय वैदिकाग्रगण्य—श्रौताग्निहोत्रिश्रीविद्याधरशर्मणां तनूजन्मभिर्वाराणसीवास्तव्यश्रीवेणीरामशर्मवेदाचार्य—काव्यतीर्थमहाशयैर्निबद्धा 'वेदविज्ञान-मीमांसा' कतिषुचिदंशेषु मयावलोकिता। वैदिकानि तत्त्वानि सामान्यान् विदुषः प्रतिबोधयितुमत्र ग्रन्थकर्त्रा विशेषेण परिश्रमः कृतः। ग्रन्थलेखकमहोदयस्य वैदिकविज्ञानप्रवणतानेन ग्रन्थेन स्फुटीभवति। कुतो वा न स्यात्, कुलपरम्परागतमेषां महाभागानां वैदिक-विज्ञानधुरन्धरत्वम्। यथैषां पितामहाः पितृचरणाश्चासन् समग्रे भारतेऽग्रगणनीया वैदिका याज्ञिकाश्च, तथैव महाभागा इमेऽपि कृतश्रमा वेदे कर्मकाण्डे चेति परं हर्षास्पदम्। विलुप्तवेदपरिचये विद्वत्समाज इदानीमीदृशानां लघूनां महतां च ग्रन्थानामतीवावश्यकता वर्तते। लघुना ग्रन्थेन महान्ति तत्त्वानि बोधयितुं प्रवृत्ता इमे महाशयाः सफलप्रयत्ना धन्यवादार्हाश्च। अहमस्या मीमांसायाः प्रचारं कामये, ईदृशान् वैदिकान् ग्रन्थान् अन्यानपि निबन्धुं ग्रन्थकर्तृमहाशयमनुरुणध्मि चेति।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४—महामहोपाध्याय पं० श्रीप्रमथनाथतर्कभूषण महोदयः

(डायरेक्टर—ओरिएण्डल कालेज, वनारस हिन्दूयुनिवर्सिटी)

आयुष्मता श्रीमता वेणीरामशर्मगौडेन विरचितां वेद-विज्ञान-मीमांसां समवलोक्य महतीं प्रीतिमवाप्तवानस्मि । सौकर्येण वेदशास्त्रस्य समयोपयोगिनं परिचयमाप्तुमिच्छतां संस्कृतविद्यार्थिनां जिज्ञासूनां सहृदयानाञ्च इयं 'वेद-विज्ञान-मीमांसा' महत उपकाराय भविष्यतीति मे सुदृढो विश्वासः । वेदशास्त्रप्रचाराय यां खलु नवीनां पद्धतिमाविष्कृतवान् सा सर्वथा प्रशंसनीया समुत्साहनीया नवीनैर्ग्रन्थकृद्भिरनुकरणीया चेति निःसङ्कोचं सहृदयेषु शिष्टेषु समावेदयति ।

५—महामहोपाध्यायपण्डितश्रीपञ्चाननतर्करत्नमहोदयः

सुप्रसिद्धवैदिककुलोद्भवेन श्रीमता वेणीरामशास्त्रिणा गौडेन प्रणीता वेद-विज्ञान-मीमांसा मया समवालोकि ।

मीमांसामिमां यथासम्भवमालोक्य सपरितोषमुच्यते ग्रन्थोऽयं नव्य-प्राचीनसिद्धान्तानुगतः प्रणेतुर्वेदवैचक्षण्यं धर्मानुरागित्वं च प्रकाशयति । किमधिकम्, ग्रन्थकर्त्तुः साभ्युदयं दीर्घजीवनं भूयादित्याशास्महे ।

६—महामहोपाध्याय पण्डितश्रीहरिहरकृपालुद्विवेदिमहोदयः

(प्रिन्सिपल—गोयनका संस्कृत महाविद्यालय, काशी)

वेद-विज्ञान- मीमांसामवलोक्य नितरामानन्दसन्दोहः समजनि । संक्षेपेण वेदस्य साङ्गोपाङ्गपरिचयप्रदायिकेयं लघुपुस्तिका नाद्यावधि केनापि सुधिया सन्दब्धा । अनया पुस्तिकया वेदपदार्थजिज्ञासूनामन्येषाञ्च महानुपकारः सम्भवेदिति निश्चप्रचमेव ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७—महामहोपाध्याय पण्डितश्रीबालकृष्णमिश्रमहोदयः
(प्रिन्सिपल—प्राच्यविद्याविभाग, काशी हिन्दूविश्वविद्यालय)

वेद-विज्ञानमीमांसा मयावलोकिता । वैदिकवाङ्मयस्य परिचयप्रदाने सर्वथोपयुक्तेयं वेदविज्ञानमीमांसा । अहमस्याः प्रचारं सततं हृदा कामये ।

८—महामहोपाध्याय पं० श्रीनारायणशास्त्रीखिस्तेमहोदयः
(प्रिन्सिपल-गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, वाराणसी)

ज्ञातव्यानेकविषयैर्भूषितां चारुताञ्चिताम् ।
वेदविज्ञानमीमांसां वीक्ष्य प्रीतोऽस्मि पुष्कलम् ।। १ ।।
श्रीमन्महामहोपाध्यायानां वेदविद्वरेण्यानाम् ।
विद्याधराख्यविदुषां तनयो विनयादिसद्गुणोपेतः।। २ ।।
वेदाचार्यो वेणीरामो गौडः स्ववंशसद्दशश्रीः ।
अतिशेतां स्वगुणैरनिशं पितरं पितामहं च ।। ३ ।।

९—महामहोपाध्यायपण्डितश्रीचिन्नस्वामीशास्त्रिमहोदयः
(मीमांसाप्रधानाध्यापक—काशी हिन्दू विश्वविद्यालय)

वेदाचार्यश्रीवेणीरामशर्मगौडरचिता वेद-विज्ञान-मीमांसा आद्यन्तमालोकिता । वेदविषयकविविधपदार्थानां परिज्ञानायेयं मीमांसा सर्वेषामुपकारिणी स्यादिति विश्वसिमि ।

१०—कवितार्किकचक्रवर्ती पं० श्रीमहादेवपाण्डेयमहोदयः
(साहित्यप्रधानाध्यापक—काशी हिन्दूविश्वविद्यालय)

प्राचीनसंस्कृतिनिदानमशेषविद्या-
सम्यग्विधानमनुमानमनन्तशक्तेः ।
वेदाविधानमवधानतपो विधातु-
र्लोकोत्तरं जयति धर्मसहस्रधारम् ।। १ ।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेणीरामस्तत्र सन्दर्भरत्नं
प्रत्ना युक्ती: सन्दधानं न्यभान्त्सीत् ।
यद्विद्वत्ता श्लाघनीया बुधानां
जीयादुच्चैर्भारतं द्योतयन्ती ॥ २ ॥

११—शास्त्रार्थमहारथी पं० श्रीमाधवाचार्यशास्त्रिमहोदय:

गौड-वंशावतंसेन श्रीवेणीरामशर्मवेदाचार्येण प्रणीता 'वेद-विज्ञान-मीमांसा' दृष्टिसरणिमवतीर्णा नितरां मानसोल्लासमचीकरत् । वेद-महत्त्व-प्रख्यापनाय तदन्तर्गतविषयाणां विज्ञानेन सह सामञ्जस्यं विधातुं वेदाद्यनेकहृद्यानवद्यसच्छास्त्राणां वचनोद्धरणमस्मिन् प्रबन्धे ग्रन्थकर्तुरसाधारणं वैदुष्यं व्यनक्तीति निसर्गसिद्धम् ।

किं बहुना प्रबन्धोऽयं सर्वसाक्षरसुलभभाषयाऽनुप्रणीतो विविधा-वश्यकविधानपरिमण्डित: प्रचुरप्रचार: सन्नज्ञतान्धकाराच्छादितदृशां भूयो भूयो वेदप्रकाशाभिव्यञ्जकस्स्यादित्याशास्ते ।

१२—साहित्याचार्य पं० श्रीपुरुषोत्तमशर्मा चतुर्वेदिमहोदय:
(संस्कृताध्यापक–मेयो कालेज, अजमेर)

महामहोपाध्यायपण्डितश्रीप्रभुदत्ताग्निहोत्रिमहाभागानां पौत्रेण महामहोपाध्यायपण्डितश्रीविद्याधरशास्त्रिमहाभागानामात्मजन्मना वेदाचार्यश्रीवेणीरामगौडमहोदयेन प्रणीता वेदविज्ञान-मीमांसाऽव-लोकिता । अल्पीयस्यामप्यस्यां पुस्तिकायां पण्डितप्रकाण्डेन प्रणेत्रा सपरिकरस्य वेदराशेरनुक्रम: सविमर्शं तथा निबद्धो यथा न केवलं छात्राणामेव, किन्तु साम्प्रतिकपरीक्षाप्रणालीपठितानामत एवैकदेशि-तादोषदूषितानां विद्यापात्राणामपि तादृशस्तदीय: परिचय: सम्पद्यते येन तेऽध्ययनाध्यापनप्रयोगादिषु यथायथं यथार्थमुपयोगमस्य विधातुं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रभवेयुः । प्रयासेनानेनास्य नितरामाश्वस्तहृदयो वैदिकविमर्शेऽदसीयमितोऽपि प्रशस्यतरं गवेषणापरिपूर्णं प्रबन्धमवलोकितुमाशासानः समुपहरामि ।

वेद-वेदाङ्गविदुषा वेणीरामविपश्चिता ।
रचिता वेदविज्ञान-मीमांसा प्रथतां चिरम् ॥

१३——पण्डितश्रीईश्वरीदत्त-दौर्गादत्तिशास्त्रिमहोदयः
(सेक्रेटरी–विहार संस्कृत एसोशियेसन, पटना)

इयं 'वेद-विज्ञान-मीमांसा' न खलु वेदस्यैव रहस्यस्फोरिका अपितु निखिलवेद-वेदाङ्गश्रौतस्मार्त्तसिद्धान्तप्रदर्शनपथेनानुत्तमामेव, कोटिमासादयति । अद्यावधि नैतादृशी कापि लघुपुस्तिका केनापि वेदादिरहस्यानुसन्धानकर्त्रा सङ्गृहीतोपनिबद्धा प्रकाशिता वा । यदीयं संस्कृतपरीक्षासु निवेशिता स्यात्तदा महानुपकारः संस्कृतज्ञानां भवेदिति ।

१४—साहित्याचार्य पण्डितश्रीकृष्णपन्तमहोदयः
(अध्यक्ष—विश्वनाथ पुस्तकालय, काशी)

अस्माकं सर्वस्वभूतोऽप्याम्नायसमवायः सम्प्रति कलिकालविलासेन विपश्चितामपि नाक्षिलक्ष्यतामाकलयति । तस्य भगवतः समाम्नायस्य तं महिमानम्, विप्रशेवधिताम्, अपौरुषेयताम्, तांस्तान् भेदान्, अङ्गान्युपाङ्गानि, शाखाविभागान्, शाखाविभागेन भिन्नानि तानि ब्राह्मणानि, आरण्यकानि, उपनिषदः, श्रौतसूत्राणि, गृह्यसूत्राणि, धर्मसूत्राणि, अन्यांश्च भृशमपेक्षितान् विषयान् वेदविज्ञान-मीमांसायां निपुणमुपनिबध्नन् ग्रन्थकारः वेदविज्ञान-जिज्ञासून् दृढमन्वग्रहीत् सर्वेषां वेदविषयकमज्ञानञ्चोत्साहयितु बाढं पराक्रामत् ।

प्राचामाचार्याणां निबन्धेषु यत्र तत्र विकीर्णा अप्यमी विषया नाद्यावधि केनापि सुधिया संगृहीतास्तानिमां सर्वसुलभतां नेतुमत्यर्थं वेद-विज्ञान-मीमांसाभिधानं लघुग्रन्थमारचयतो ग्रन्थकृतः स्तुत्यं कृत्यं नूनं विदुषां मनोमोदमावक्ष्यतीति दृढोऽस्ति मे विश्वासः ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१५—साहित्याचार्य पण्डित श्रीकेदारनाथशर्मा सारस्वत
(सम्पादक—'सुप्रभातम्' काशी)

गौडकुलावतंसैः श्रीमद्भिर्वेदविद्भिः पण्डितवेणीरामशर्मभिः सम्पादिता वेद-विज्ञान-मीमांसा साद्यन्तमालोकिताऽस्माभिः। सा च वेद-विषयक-विविधप्रश्नानां समाधाने जिज्ञासूनां महतीमुपकृति-तति वितनोति। यत्र तत्र बहुत्र पृथग्वर्णितानां बहूनां विषयाणा-मेकत्र समावेशेन वेदविषयं बुभुत्सूनां छात्राणां विदुषां च परं विज्ञानं प्रमोदञ्च समेधयेदिति लेखकस्य श्रमं प्रतिभां च प्रमोदभरनिर्भरं सभाजयामः।

१६—पण्डित श्रीअवधेशप्रसादशर्मा द्विवेदिमहोदयः
(सम्पादक—सूर्योदयः, काशी)

काशीस्थगोयनका-संस्कृत-महाविद्यालयाध्यापकेन वेदाचार्य-श्रीवेणीरामशर्मगौडेन प्रणीता वेद-विज्ञान-मीमांसा मया संपरि-ष्कृता दृष्टा। वैदिकवाङ्मयस्य सर्वाङ्गीणपरिचयप्रदाताऽयमेव मौलिको ग्रन्थः। अत्र ग्रन्थकृता प्राच्यप्रतीच्योभयविधविदुषा-मुभयविधविचाराणाञ्च समालोचनपुरस्सरं निखिला अपि वैदिक-सिद्धान्ताः प्रादर्शिषत। ग्रन्थस्यावलोकनानन्तरं समस्तवैदिक—विषयाणां सामान्यतो ज्ञातव्यज्ञानन्नावशिष्यते।

पुस्तकरत्नस्यास्य कृते अवश्यमेव वक्तुं शक्यते यदेवंविधं सङ्कलनं नाद्यावधि मुद्रितमासीत्। विश्वासोऽयं मामकीनो यदस्य ग्रन्थरत्नस्य गृहे गृहे प्रचारस्तेन च भारतीयेषु सञ्चरतो वैदिक-विषयाज्ञानस्य हानिरवश्यम्भाविनी। सम्भावये ग्रन्थकर्तॄणां चिरमायुष्यं येन भविष्यति बहव ईदृशाः ग्रन्था: दृष्टिपथमागच्छेयु-रिति।

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
———जहांगीराबाद २-२-६४
बा... (३ ४०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१७—रायबहादुर पण्डित श्रीदत्तशर्मा वैद्यराज
(स्पेशल मजिस्ट्रेट तथा सब जज, भिवानी, हिसार)

I have gone through some selected portions of the Veda Vijnan Meemansa by Pandit Beni Ram Sharma Gaur of Kashi. My perusal has led me to pen that the publication is a Unique of its type. The outher has taken great pains in giving a scientific and methodical treatment to a most difficult subject. Really the book fulfites a long-felt need and is sure to prove highly beneficial for those who are interested in the study of onr ancient Vedic Literature. I heartily congratulate. Pandit Beni Ram Sharma Gaur for his commendable efforts and hope that he will continue his similar studies.

पुस्तक प्राप्तिस्थान—

(१)
वैदिक पुस्तकालय
७।१४, सकरकन्दगली,
वाराणसी।

(२)
मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स
संस्कृत बुकडिपो
कचौरीगली, वाराणसी।

'दीक्षातत्त्व-मीमांसा' पर सम्मति—

१—माननीय श्रीयुत हनुमानप्रसादजी पोद्दार
(सम्पादक—'कल्याण' गीताप्रेस, गोरखपुर)

विश्वके समस्त धर्म और सम्प्रदायोंमें दीक्षाका स्थान महत्त्व-पूर्ण है। हिन्दू-समाजका तो यह प्राण है। प्रत्येक वर्ण और प्रत्येक आश्रमके लिये दीक्षा विहित है। इस पर संस्कृतके ग्रन्थोंमें तो बहुत लिखा गया है, किन्तु उन ग्रन्थोंसे संस्कृतज्ञोंके अतिरिक्त अन्य लोगोंको पूर्णतः लाभ नहीं हो पाता था। अब 'दीक्षातत्त्व-मीमांसा' ने उस कमीकी पूर्ति कर दी है। इसमें दीक्षा-सम्बन्धी प्रायः सभी ज्ञातव्य विषयोंपर सरल और सुबोधगम्य भाषामें प्रकाश डाला गया है। यह पुस्तिका अपने कृश कलेवरमें भी अधिक उपयोगी दीख रही है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२—महामहोपाध्याय पं० श्रीपरमेश्वरानन्दजी शास्त्री
(प्रधानाचार्य—ऋषिकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार)

मैंने श्रीमान् पण्डित वेणीरामजी गौड वेदाचार्यकी 'दीक्षातत्त्व-मीमांसा' देखी। पुस्तक उपादेय है। प्रत्येक आस्तिक पुरुषको इसका संग्रह करना चाहिये और इससे लाभ उठाना चाहिये।

३—पं० श्रीहरिदत्तजी शास्त्री एम्० ए०, सप्ततीर्थ
(मुख्याधिष्ठाता—गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर, हरद्वार)

दीक्षातत्त्व-मीमांसा वेदाचार्य पण्डित श्रीवेणीरामजी गौडकी लेखनीसे प्रसूत हुई है। इसमें दीक्षा-सम्बन्धमें अनेक उपादेय और आवश्यक विषय दिये गये हैं, जो कि अत्यन्त रोचक और सहेतुक हैं। यह पुस्तक दीक्षानुयायी व्यक्तियोंके लिये अत्यन्त उपयोगी है।

पण्डितसम्राट् महामहोपाध्याय श्रीहरिहरकृपालुजी द्विवेदीकी भूमिकाने पुस्तककी उपादेयता विशेष बढ़ा दी है। आशा है, वेदाचार्यजी भविष्यमें भी इसी प्रकार अन्य उपयोगी ग्रन्थोंको अपने लेख-जलद्वारा सिञ्चित, पल्लवित, पुष्पित एवं फलित करते रहेंगे।

श्रौतयज्ञ-परिचय

(लेखक—महामहोपाध्याय पं० श्रीविद्याधरजी गौड)

वैदिकमूर्धन्य महामहोपाध्याय पण्डितश्रीविद्याधरजी गौडने 'श्रौतयज्ञ-परिचय' नामक पुस्तक निर्माण कर वैदिक-जगत्‌का महान् उपकार किया है। इस पुस्तकमें विविध यज्ञोंके स्वरूप, दर्शपूर्णमास-याग, चातुर्मास्ययाग, सौत्रामणीयाग, सोमयाग (अग्निष्टोम), वाजपेययाग, राजसूययज्ञ, अश्वमेधयज्ञ, पुरुषमेधयज्ञ, सर्वमेधयज्ञ और पितृमेधयज्ञ आदि अनेक महत्त्वपूर्ण श्रौतयज्ञोंका उल्लेख किया है, जो कि प्राचीनकालमें भारतमें नानाविध मनोकामनापूर्तिके परम साधन समझे जाते थे, जिन पर प्राणिमात्रकी अपार आस्था थी। आज

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दुर्दैवसे उन महत्त्वपूर्ण श्रौतयज्ञों के नाम और उनके विधि-विधानसे भी बड़े-बड़े विद्वान्, यहाँ तक कि वेदज्ञ भी अपरिचित होगये हैं। अतः सबके लाभार्थ उन लुप्तप्राय समस्त श्रौतयज्ञोंको साङ्गोपाङ्ग पूर्ण विवरणके साथ लिखकर वेदमार्गावलम्बी साधारण जनताको आप ऋणी बना गये हैं। यह पुस्तक संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओंमें लिखी गई है। यह पुस्तक खासकर विद्वानोंके लिये संग्रहणीय है। पुस्तकके प्रारम्भमें स्व० महामहोपाध्यायजीका महत्त्वपूर्ण जीवनचरित्र भी है। पुस्तककी पृष्ठ संख्या २१० और सुन्दर कागज, दिव्य छपाई आदि होते हुए भी मूल्य लागतमात्र २) रुपया रखा गया है। अतः रजिस्ट्रीसे मँगानेवाले सज्जनोंको डाकव्यय-सहित ३) रुपया भेजना चाहिये।

प्राप्तिस्थान—

वैदिक पुस्तकालय

७।१४, सकरकन्दगली, वाराणसी।

विवाह-पद्धति

(लेखक—वेदाचार्य पण्डित श्रीवेणीरामशर्मा गौड)

यह विवाहपद्धति सर्वश्रेष्ठ और सर्वप्रामाणिक है। इस विवाह पद्धतिमें प्रत्येक मन्त्रके साथ-साथ हिन्दीमें अर्थ दिया गया है, जिससे विवाह करानेवाले पण्डितोंको मन्त्रका अर्थ कहनेमें सुविधा हो। विवाहपद्धतिमें तिलकविधि, तैल हरिद्रालेपन-विधि, द्वारपूजाविधि, चतुर्थीकर्म, मङ्गलाष्टक, गोत्रप्रवर और शाखोच्चार आदि अनेक आवश्यक विषय दिये गये हैं। साथ ही विवाहसम्बन्धी १०८ बातें दी गई हैं, जिनमेंसे कुछ विषय ये हैं—

१—विवाहमें आशौच (जननाशौच और मरणाशौच) की संभावना होनेपर क्या करना चाहिये। (२) विवाहमें वर और

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वधूकी माताको रजोदर्शनकी संभावना हो तो क्या करना चाहिये। (३) विवाह प्रारंभ होने पर हवनके समय कन्या (वधू) के ऋतुमती होने पर क्या करना चाहिये। (४) विवाहके समय वर और वधूकी माताको सन्तान होने पर क्या करना चाहिये। (५) विवाहमें वर और वधूका ग्रन्थिबन्धन कब होना चाहिये। (६) विवाहके बाद एक वर्ष तक कौन-कौन कार्य नहीं करना चाहिये—इत्यादि विषयोंको शास्त्रोक्त ढंग से समझाया गया है। इस पुस्तकको पासमें रखनेसे दूसरी विवाह-पद्धतिकी जरूरत नहीं पड़ेगी। पुस्तकका मूल्य १) रुपया है। रजिस्ट्रीसे मँगानेवाले सज्जनोंको १।।।) भेजना चाहिये।

पुस्तक प्राप्तिस्थान—
वैदिक पुस्तकालय
७।१४, सकरकन्दगली वाराणसी।

वेदाचार्य पं० श्रीवेणीरामशर्मा गौडकी

लिखित, टीकाकृत, अनुवादित तथा सम्पादित पुस्तकें—

वेद विज्ञान-मीमांसा	(संस्कृत)	।।)
यज्ञ-मीमांसा (यज्ञोंका शास्त्रीय विवेचन)	हिन्दी	५)
यज्ञ-प्रवचन (यज्ञसम्बन्धी २२ प्रवचनोंका संग्रह)	,,	१।।)
यज्ञ-माहात्म्य	,,	।=)
यज्ञ-प्रसाद	,,	।)
आशौच-निर्णय (जनन-मरणसम्बन्धी आशौचोंका निर्णय)	,,	।।)
दीक्षातत्त्व-मीमांसा	,,	१।।)
नारी धर्म-शिक्षा	,,	१।।)
नारी-सन्ध्या	,,	≡)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रयाग-माहात्म्य	हिन्दी	॥)
कुम्भपर्व-माहात्म्य	,,	॥)
प्रयाग कल्पवास	,,	।)
गुरुपूजन-पद्धति	,,	≡)
विवाह-पद्धति	,,	१)
वैदिक सूक्तसंग्रह	,,	१।)
पिङ्गलछन्दसूत्र (वैदिकछन्दप्रकरणान्त)	,,	।)
श्रीसूक्त (चार प्रकारके अनुष्ठानसहित)	,,	।)
पुरुषसूक्त	,,	।)
दुर्गा	,,	३।)
कार्तिक माहात्म्य	,,	२)
एकादशी माहात्म्य	,,	२॥)
पार्वणश्राद्धपद्धति	,,	॥)
एकोद्दिष्टश्राद्धपद्धति	,,	॥)
नान्दीश्राद्धपद्धति	,,	॥)
सत्यनारायण कथा	,,	॥)
मन्त्रसंहिता (पूजापाठके चुने हुए मन्त्रोंका संग्रह)		३)
दण्डकसंहिता		१)
रुद्री		१।)
शिवार्चनपद्धति		१॥।)
लक्ष्मीनारायणहृदय		।=)
दुर्गा मूलपाठ		१।)

पुस्तक-प्राप्तिस्थान--

(१)
मास्टर खेलाड़ीलाल एण्डसन्स
संस्कृत बुक डिपो
कचौड़ी गली, वाराणसी ।

(२)
वैदिक पुस्तकालय
७।१४, सकरकन्द गली
वाराणसी ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यज्ञ-मीमांसा

(तृतीय संस्करण)

यज्ञ सनातन धर्मका प्रधान अङ्ग है। वेदों, उपनिषदों, पुराणों और धर्मशास्त्रोंमें यज्ञकी विशिष्ट महिमा लिखी है। अतः यज्ञके वास्तविक स्वरूप और विधि-विधानसे सबलोग परिचित हो जायँ, इस दृष्टिसे यह पुस्तक लिखी गई है। इस पुस्तकमें **वैज्ञानिक ढंगसे लिखे गये यज्ञसम्बन्धी २२ निबन्ध हैं और** अनेक अप्राप्य ग्रन्थोंके पर्यालोचनद्वारा यज्ञ-विषयके ज्ञातव्य विविध दुर्लभ गूढ़ विषय दिये गये हैं। साथ ही अनेक यज्ञोंके स्वाहाकारके मन्त्र, अनेक यज्ञोंके न्यास, अनेक यज्ञोंके महत्त्व, अनेक यज्ञोंकी सामग्री, कुण्मण्डपसम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण विषय, अनेक देवी-देवताओंकी गायत्री, **वास्तु, क्षेत्रपाल, योगिनी, नवग्रह और सर्वतोभद्रादिके मन्त्र, वेदसंहिताके पद, क्रम, जटा** एवं **घनके पठनीय मन्त्र, वृष्टिकारक मन्त्र और वृष्टिरोधक मन्त्र** आदि सैकड़ों महत्त्वपूर्ण विषय दिये गये हैं, जिनका ज्ञान प्रत्येक वैदिक, याज्ञिक, कर्मकाण्डी और पुरोहितको होना ही चाहिये। परिशिष्टमें **लक्ष्मीयाग, सूर्ययाग, रामयाग, पुत्रेष्टियाग और अंबायाग** आदिकी पद्धतियाँ भी दी गई हैं, जिससे इस पुस्तककी विशेष उपयोगिता बढ़ गई है। हिन्दीमें यज्ञ-विषयकी ऐसी और कोई महत्त्वपूर्ण पुस्तक नहीं है।

पुस्तककी पृष्ठ संख्या ५०० से अधिक होने पर भी मूल्य लागतमात्र ५) रुपया रखा गया है। **जो सज्जन ५) रुपया मनिआर्डरसे भेजेंगे, उनके पास ही यह पुस्तक भेजी जायगी।**

पुस्तक प्राप्तिस्थान—

वैदिक पुस्तकालय,

७।१४, सकरकन्दगली, वाराणसी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection